तेरापन्थ-आचार्य चरितावलि

खण्ड : १

सम्पादक :

श्रीचन्द रामपुरिया, बी० कॉम०, बी० एल०
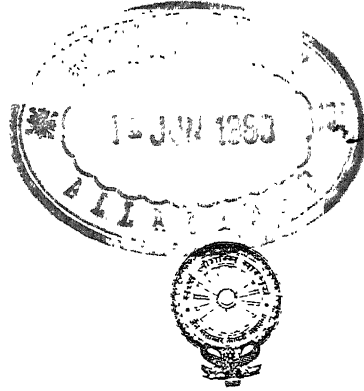
तेरापन्थ द्विशताब्दी समारोह के अभिनन्दन
में प्रकाशित

प्रकाशक :
जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा
३, पोर्च्युगीज चर्च स्ट्रीट,
कलकत्ता—१
卐

प्रथमावृत्ति :
सन् १९६१
सं० २०१८
卐

प्रति संख्या :
१५००
卐

पृष्ठांक :
२६८
卐

मूल्य :
छह रुपये
卐

मुद्रक :
रेफिल आर्ट प्रेस,
कलकत्ता—७

प्रकाशकीय

तेरापन्थ सम्प्रदाय के वर्तमान अधिनायक आचार्य श्री तुलसी गणि के धवल-समारोह का प्रथम चरण भाद्र शुक्ला नवमी के दिन पड़ता है। भाद्र शुक्ला त्रयोदशी का दिन आचार्य भिक्खु का पर्यवसान दिवस है। यह कृति इन दो अवसरों के संगम पर प्रकाशित होकर दोनों महापुरुषों के महान कृतित्व के प्रति अपनी सम्पूर्ण श्रद्धासंपूत-श्रद्धांजलि उपस्थित करती है।

इस प्रकाशन के साथ आचार्य-चरित-माला का द्वितीय ग्रंथ पाठकों के हाथों में पहुंचता है। अब हम अदूरभविष्य में ही तीसरे खण्ड द्वारा अवशिष्ट आचार्यों के जीवन-चरित उपस्थित करने में समर्थ हो सकेंगे।

आचार्य भिक्खु अपने युग के ही नहीं, पर सर्व युगों के महान युगपुरुष हैं। इस खण्ड द्वारा उनकी जीवन-विषयक विस्तृत सामग्री पाठकों को सुलभ होती है। आशा है इसके अध्ययन का परिणाम हिन्दी में स्वामीजी की सर्वाङ्गीण सुन्दर जीवनी के प्रकाशन के रूपमें प्रकट होगा।

श्रीचन्द रामपुरिया
व्यवस्थापक
तेरा० द्विशताब्दी साहित्य-विभाग

३, पोर्चगीज चर्च स्ट्रीट,
कलकत्ता—१
भाद्र शुक्ला १,२०१८

भूमिका

'तेरापंथ आचार्य चरितावलि' के इस प्रथम खण्ड में तेरापंथी सम्प्रदाय के आदि आचार्य स्वामी भीखणजी के निम्नलिखित चार जीवन-चरित संग्रहीत हैं :

१—भीखू चरित (मुनि श्री हेमराजजी कृत)

२—भीखु चरित (मुनि श्री वेणीदासजी कृत)

३—भिक्खु जश रसायण (चतुर्थ आचार्य श्री जीतमलजी स्वामी कृत)

४—लघु भिक्खु जश रसायण (चतुर्थ आचार्य जीतमलजी स्वामी कृत)

हम नीचे क्रमशः उनका संक्षिप्त परिचय दे रहे हैं :

१ : भीखू चरित

(१) रचयिता का गृही-जीवन

इस कृति के रचयिता मुनि हेमराजजी, भीखणजी स्वामी के स्वहस्त-दीक्षित शिष्य थे। दीक्षा-क्रम में आपका स्थान पैंतीसवाँ है। आपका कुछ परिचय 'तेरापंथ आचार्य चरितावलि' के द्वितीय खण्ड की भूमिका में दिया जा चुका है[१]। लेखक की 'आचार्य संत भीखण जी' नामक पुस्तक में भी आपकी संक्षिप्त जीवनी प्रकाशित है[२]।

चतुर्थ आचार्य श्री जीतमलजी स्वामी रचित 'हेम नवरसो' में आपका विस्तृत जीवन-चरित राजस्थानी भाषा में संगीत-बद्ध है। 'तेरापंथ आचार्य चरितावलि' के द्वितीय खण्ड में प्रकाशित आचार्य भारीमालजी, आचार्य रायचन्दजी और आचार्य जीतमलजी के राजस्थानी पद्यात्मक बखाणों में आपके अनेक संस्मरण गुंफित हैं। इसी तरह 'भिक्खु दृष्टान्त' नामक पुस्तक में भी आपके कई संस्मरण प्राप्त हैं[३]। आचार्य जीतमलजी स्वामी कृत 'शासन विलास' में भी आपके विषय में महत्त्वपूर्ण उल्लेख है। प्रस्तुत खण्ड में प्रकाशित 'भिक्खु जश रसायण' नामक कृति में आपका गुणात्मक परिचय मिलता है[४]। प्रसंगवश हम यहाँ आपका चरित कुछ विस्तार से दे रहे हैं :

(१) प्रव्रज्या से पूर्व का जीवन : आपका जन्म सं० १८२९ की माघ शुक्ला १३ शुक्रवार के दिन पुष्य नक्षत्र में आयुष्मान योग में सिरियारी में हुआ था[५]। आपके पिता का नाम अमरोजी बागरेचा था और माता का नाम सोमाजी।

१—देखिए भूमिका पृ० झ से ठ

२—देखिए पृ० ६९-७१

३—दृ० १५९, १६९, १७९, २७२, २७३

४—देखिए ढाल ४८ गा० ३-२०

५—आप गर्भ में आए उस समय जो घटना घटी उसके लिए देखिए हेमनवरसो १.२-३ ; तथा 'आचार्य संत भीखणजी' पृ० ६८

आपकी एकमात्र छोटी बहिन का नाम रत्तुजी था। भाई-बहिन दोनों में परस्पर बड़ा स्नेह था। हेमराजजी कैसे स्नेही भाई थे इसकी एक घटना 'भिक्खु दृष्टान्त' में इस प्रकार मिलती है : रत्तुजी को मामा ननिहाल ले गये। हेमराजजी का मन नहीं लगा। उन्होंने स्वामीजी से कहा—"मन में होता है कि अभी सवार को भेज बहन को वापस बुला लूं।" स्वामीजी बोले—"संसार के सुख ऐसे ही अस्थिर होते हैं। संयोग में वियोग होता है[1]।" हेमराजजी का मन शान्त हुआ।

आप जन्म से ही धर्म-संस्कार-संपन्न थे। आपकी वृत्तियाँ सहज शान्त और वैराग्य युक्त थीं। बचपन से ही बड़े दृढ़धर्मी थे। रोज सामायिक करते। साधु-संतों के प्रति बहुमान की भावना रखते। आपका तात्त्विक ज्ञान बड़ा गंभीर था। आप बड़े निर्भीक चर्चावादी थे। जहाँ जाते लोगों को धर्मबोध देते। आपमें ये गुण अति प्रचुर मात्रा में विद्यमान थे। आपके गृहस्थ-जीवन का चित्रण निम्न रूप में प्राप्त है :

वर्ष पनरे आसरे बधिया जी कांई सधिया चेत खड़ा हुवा, किया परनारी रा पचखाण।
सन्त सत्यां नी सेवा जी नितमेवा सामायक करै, बहु पाप तणो भय जाण॥
सौम्य मुद्रा हद प्यारी जी सुखकारी हेम मुनीशरू॥
उत्पत्तिया बुद्धि भारी जी सिरदारी हेम तणी घणी, कांई चर्चावादी जाण।
कंठकला अधिकारी जी समझावे नर नारी भणी, कांई बांचे सरस बखाण॥
बिणज करणनें जावै जी पाली भिलाड़े आदि दे, कांई त्यां पिण दे उपदेश।
चरचा करनें समझावै जी अदरावै व्रत श्रावक तणा, घाले दान दया की रेंश॥
करे भेषधार्यां सूं चरचा जी कांई थानक मांहे जायनें, विविध न्याय थी जोय।
इम पाखंड्यां नें हटावै जी सुध जाब न आवै तेहनें, ते सुणियां अचरज होय॥
सुवनीतपणे सुखदाई जी नरमाई हेम तणी घणी, कांई भिक्षु सूं बहु प्रेम।
त्यांरो बिरहो खमणो अति दोरो जी नहीं सोरो संग तसु छाड़णो, कांई हिये निरमला हेम[2]॥

(२) प्रतिबोध और प्रव्रज्या : पन्द्रह वर्ष की अवस्था में आपने आजीवन पर-स्त्री-त्याग व्रत ग्रहण किया। आपका हृदय वैराग्यमय भावनाओं से स्निग्ध था। प्रव्रज्या ग्रहण करने की भावना भी रखते थे। इसे और भी बलवती करने की इच्छा से सं० १८५१ में स्वामीजी ने पाली में चातुर्मास न कर सिरियारी में किया पर हेमराजजी ने अपना निश्चित अभिमत व्यक्त नहीं किया। केवल विचार ही विचार में तीन वर्ष व्यतीत कर दिये। सं० १८५३ में आपने स्वामीजी से प्रतिबोध पा यावज्जीवन विवाह न करने का व्रत ग्रहण किया और साधु प्रतिक्रमण सीखने लगे[3]।

१—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० २५८ पृ० १०३
२—हेम नवरसो १.९-१०
३—प्रतिबोध की घटना के लिए देखिए—'तेरापंथ आचार्य चरितावलि' (द्वि० ख०) भूमिका पृ० ञ-ट।

भूमिका

आपकी दीक्षा सं० १८५३ की माघ शुक्ला त्रयोदशी वृहस्पतिवार के दिन पुष्य नक्षत्र और आयुष्यमान योग में सिरियारी में सम्पन्न हुई। उस समय आप चौबीस वर्षीय नवयुवक थे। दीक्षा और उसके पूर्व जो घटनाएँ घटीं उनका वर्णन इस प्रकार है :

वैरागी बनड़ो वण्यो गुणधारी रे, हेम हर्ष हुंशियार हेम सुखकारी रे।
माहा सुद तेरस दिन भलो गु०, दीक्षा महोत्सव सार ॥
बाबारो बेटो भाई रावले गु०, जाय पुकार्यो ताय । हेम० ।
भिक्षु नें कहवावियो गु०, मती हरज्यो नगरी मांय । हेम० ॥
गाम रा पञ्च भेला थई गु०, हेम भणी ले साथ । हेम० ।
ठुकराणी पासे गया गु०, कही दीक्षा री वात ॥ हेम० ॥
वस्त्र गहणा सहित देखी हेम ने आणन्दा रे, ठुकराणी बोली बाय के । आ० ।
दौलतसिंघ री सूंस है आ०, युं का युं देस्यूं परणाय के । आ० ॥
जब हेम जाब दीधो इसो आ०, थांरो परणावा रो पेम के । आ० ।
गाम में कुंवारा घणा आ०, म्हारे परणवा को नेम के । आ० ॥
इम कही हेम पाछा वली आ०, आय बैठा स्वामी पास के । आ० ।
गाम में रहिवा री आगन्या आ०, पंच लेई आया तास के ॥ आ० ॥
माघ शुक्ल पुनम पछै आ०, छःकाय हणवा रा त्याग के । आ० ।
हेम ने नेम पहले हुंतो आ०, कीधो आण वैराग के । आ० ।
न्यातिला कहै बहिन परणाय ने आ०, पछै लीज्यो संजम भार के। आ० ।
सावो फागण बदी बीज रो आ०, पिण हेम न मानी लिगार के। आ० ॥
पछै न्यातिला हठ कीधो घणो आ०, जब हेम कियो अंगीकार के । आ० ।
पूज भणी कह्यो आयनें आ०, स्वामी निषेध्यो तिवार के । आ० ॥
रे भोला अनर्थ करे आ०, दिवस न लंघणो एक के । आ० ।
न्यातिला गोतिला अछै आ०, ए फन्द मांही न्हाखै विशेष के । आ० ॥
हेम समझ पाछा आयनें गु०, कहै न्यातिलां नें एम के । हेम० ।
हूं कह्यो न मानूं केहनो गु०, थे तो भंगावो नेम के ॥ हेम० ॥
तेरस दिन उलंघूं नहीं आ०, थे क्यांने करो बकवाय के । आ० ।
लोक हंसी ने इम कहै आ०, याने भीखणजी दिया भरमाय के । आ० ॥
इकवीस दिवस रे आसरे आ०, जिम्या बनोला जाण के । आ० ।
दीख्या महोछब दीपतो आ०, मंडिया बहु मण्डाण के । आ० ॥
हजारां लोक भेला हुआ आ०, बड़ तले दीक्षा विचार के । आ० ।
स्वाम भिक्षु स्व हाथ सूं आ०, स्वमुख संयम भार के । आ० ॥

संवत् अठारे तेपने आ०, महा सुदि तेरस जाण के। आ०।
वृहस्पतवार बखानिये आ०, पुष्य नक्षत्र बलवान के। आ०॥
आयुष्मान जोग आयो भलो आ०, हर्ष दीक्षा मुनि हेम के। आ०।
जय २ जय जन उचरे आ०, पाम्या अधिको प्रेम के। आ०॥
बारे सन्त आगे हुंता आ०, स्वाम भिक्खू रे सोय के। आ०।
हेम हुवा संत तेरमा आ०, यां पछै घट्यो नहीं कोय के[१]। आ०॥

(३) चातुर्मासों का ब्यौरा : दीक्षा के बाद आप चार चातुर्मास में स्वामीजी के साथ थे। स्वामीजी की आज्ञा के अनुसार पाँचवां चातुर्मास मुनि वेणीरामजी के साथ किया। आपके गुणों को देखकर स्वामीजी ने सं० १८५८ में आपको सिंघाड़पति बनाया।

गुण बुद्धि कंठकला भली, भिक्खू देखी भारी हो।
कियो सिंघाड़ो हेम नो, जाण्या महा उपगारी हो[२]॥

आपके साधु-जीवन के कुल ५१ चातुर्मासों का ब्यौरा इस प्रकार है :

१—खैरवे	२	१८५४ (स्वामीजी के साथ), ६७
२—पाली	११	१८५५,६१,६६,७१,७५,८०,८५,८६,६२,६५,६८
३—श्रीजीद्वार	४	१८५६,८७,१६००,१६०३
४—पुर	४	१८५७,५८ (मुनि वेणिरामजी के साथ) ८४,१६०१
५—पिसांगण	१	१८६०
६—जैतारण	१	१८६२
७—कंटालिया	२	१८६३,७२
८—सिरियारी	४	१८५६,६५,७३,६७
६—बालोतरे	२	१८६८,६१
१०—कृष्णगढ़	१	१८६६
११—इन्द्रगढ़	१	१८७०
१२—गोघुंदे	४	१८७४,८२,८८,६६
१३—देवगढ़	२	१८६४,७६
१४—उदयपुर	२	१८७७,१६०२
१५—आमेट	३	१८७८,८३,१६०४
१६—पिपाड़	५	१८७६,८६,६०,६३,६६
१७—जयपुर	१	१८८१
१८—लाडनूं	१	१८६४

१—हेम नवरसो ३.३-१८, २३
२—हेम नवरसो ४.७

(४) सिंघाड़पति के रूप में : सिंघाड़पति के रूप में आपमें कुशल नेतृत्व दिखाई पड़ता है। आप दूरदर्शी और साहसी थे। मरुधर, मारवाड़, हाड़ोती और ढूंढाड़ इन चार प्रदेशों में आपने गुरु आज्ञा से भ्रमण किया। आपके द्वारा निम्नलिखित १४ दीक्षायें संपन्न हुई :

१—सं० १८६१ के पाली चातुर्मास के बाद फाल्गुन में वैरागी संत जीवनजी की।

२—सं० १८६६ में पाली चातुर्मास में तपस्वी संत पीथलजी की। आपने पत्नी छोड़कर दीक्षा ली थी।

३—सं० १८७३ मार्गशीर्ष बदि पंचमी के दिन लाहवा में मुनि रतनचंदजी की। आपकी पत्नी ने भी साथ ही दीक्षा ग्रहण की।

४—उसी दिन तपस्वी संत अमीचंदजी की। आपने पुत्र और पत्नी को छोड़कर दीक्षा ग्रहण की थी।

५—सं० १८७३ में खामगांव में सती नन्दूजी की। आपको गृहस्थ के वस्त्रों में रहते हुये ही दीक्षा दी गई। दीक्षा के बाद आपने गृहस्थ-वस्त्रों को उतारा।

६—सं० १८७६ के देवगढ़ के चातुर्मास में तपस्वी संत कर्मचंदजी की। आपने माता-पिता को छोड़कर दीक्षा ली थी।

७—उपर्युक्त चातुर्मास में ही संत रत्नजी की। आपने पत्नी छोड़ कर दीक्षा ग्रहण की।

८—उपर्युक्त चातुर्मास में ही संत शिवजी की। आपने भी पत्नी छोड़कर दीक्षा ग्रहण की।

९—सं० १८७७ के चातुर्मास के बाद गोघुन्दा में वसंत पंचमी के दिन संत सतीदासजी की।

१०—स० १८८१ में संत उत्तमचंदजी की। आप खींवार वासी थे। आपने स्त्री-पुत्र छोड़कर दीक्षा ग्रहण की थी।

११—इसी वर्ष उदयपुर में मुनि उदयचंदजी (बड़े) की।

१२—सं० १८८५ में पाली चातुर्मास में मुनि मोतीजी की।

१३—सं० १९०२ के चातुर्मास के बाद अटाटे में मुनि हर्षचंदजी की। आपने माता-पिता, भाई-बहन को छोड़कर दीक्षा ग्रहण की थी। आपकी दीक्षा आभूषणों सहित हुई। दीक्षा के बाद आपने आभूषणों का त्याग किया।

(५) सिंघाड़े की विशिष्ट तपस्याएं : आपके सिंघाड़े में तपस्याएँ भी बड़ी-बड़ी होती रहीं। उनका विवरण इस प्रकार है :

१—सं० १८६२ में जैतारण चातुर्मास में मुनि जीवनजी ने २२ दिन की तपस्या की। बाईसवें दिन संथारा किया। १७ दिन का संथारा आया। इस तरह ३९ दिन की तपस्या हुई।

२—सं० १८६४ में देवगढ़ चातुर्मास में संत सुखजी ने संथारा किया। दस दिन का अनशन आया।

३—सं० १८६६ में पाली चातुर्मास में मुनि भोपजी ने ५८ दिन की उदकागार तपस्या की। पारण के बाद मुनि हेमराजजी के चरण पकड़कर आपने यावज्जीवन संथारा कराने का अनुरोध किया। चार पहर का संथारा आया।

४—सं० १८७० के इन्द्रगढ़ चातुर्मास में मुनि रामजी अष्टम भक्त तप में परलोक सिधारे।

५—सं० १८७१ के शेषकाल में नानजी चोले की तपस्या में दिवंगत हुए।

६—सं० १८७४ गोघुंदा चातुर्मास में मुनि पृथ्वीराजजी ने ८२ दिन की तपस्या की। मुनि पीथलजी (लघु) ने ४५ दिन, मुनि जोधराजजी ने ८६ दिन, मुनि सरूपचन्दजी ने १४ दिन और मुनि भीमराजजी ने १२ दिन की तपस्या की।

७—सं० १८७५ के पाली चातुर्मास में मुनि पृथ्वीराजजी ने ८३ दिन और मुनि पीथलजी (लघु) ने ३६ दिन की तपस्या की। मुनि सरूपचन्दजी और जीतमलजी ने भी ४२।४२ उपवास किये।

८—सं० १८७६ के देवगढ़ चातुर्मास में मुनि पीथलजी ने १०६ दिन का तप किया।

९—सं० १८७७ के उदयपुर चातुर्मास में मुनि वर्द्धमानजी तपस्वी ने धोवन के आगार से १०४ दिन की तपस्या की।

१०—सं० १८७८ के आमेट चातुर्मास में मुनि पृथ्वीराज ने ९९ दिन की तपस्या की।

११—१८८५ के आमेट चातुर्मास में मुनि उदयचन्दजी ने मास-मास क्षमण का तप किया। मोतीजी मुनि ने आछ आगार से ७६ दिन का तप किया।

१२—सं० १८८६ में पिपाड में उदयचन्दजी ने आछ आगार से एक मास का तप किया। मुनि दीपजी ने आछ आगार से १८६ दिन का तप किया।

१३—सं० १८८७ में दीपचन्दजी स्वामी ने जल के आगार से ३१ दिन का तप किया और उदयचन्दजी ने एक मास का।

१४—सं० १८८८ गोघुंदे के चातुर्मास में सर्व मुनि उत्तमचन्दजी, उदयचन्दजी और दीपचन्दजी ने क्रमशः ३४,३७ और ४५ दिन की तपस्यायें कीं।

१५—सं० १८९० में पिपाड़ में उदयचन्दजी ने मास क्षमण का तप किया।

१६—सं० १८९२ के पाली चातुर्मास में वैयावृत्य करते हुए मुनि उदयचन्दजी ने ३० दिन की तपस्या की।

१७—सं० १८९३ के पिपाड़ चातुर्मास में वैयावृत्य करते हुए मुनि उदयचन्दजी ने ४३ दिन की तपस्या की।

१८—सं० १८९४ के लाडनूं चातुर्मास में मुनि रामजी ने तीस दिन की तपस्या की और वैयावृत्यी मुनि उदयचन्दजी ने जल के आगार से ३७ दिन की।

१९—सं० १८९५ के पाली चातुर्मास में मुनि रामजी ने ४१ दिन का तप किया। मुनि उदयचन्दजी ने उदकागार से ३० दिन की तपस्या की।

२०—सं० १८९६ के पिपाड़ चातुर्मास में मुनि उदयचन्द जी ने जल के आगार से २० दिन की तपस्या की।

२१—सं० १८९७ के सिरियारी चातुर्मास में मुनि उदयचन्दजी और मुनि अनूपचन्दजी ने जल के आगार से ५० दिन की तपस्या की।

२२—सं० १८९८ में पाली चातुर्मास में मुनि सतीदासजी ने आछ आगार से ३१ दिन की तपस्या की और मुनि उदयचन्दजी ने २१ दिन की।

२३—सं० १८९९ में गोघुंदे चातुर्मास में संत भैरजी ने २१ दिन और मुनि उदयचन्दजी ने जल के आगार से ३० दिन की तपस्या की।

२४—सं० १९०० में श्रीजी द्वार चातुर्मास में मुनि भैरजी ने २० दिन की और मुनि उदयचन्दजी ने जल आगार से ३० दिन की तपस्या की।

२५—सं० १९०१ के पुर चातुर्मास में मुनि उदयचन्दजी ने धोवन जल के आगार से ७७ दिन का तप किया।

२६—सं० १९०२ में उदयपुर चातुर्मास में मुनि उदयचन्दजी ने जल के आगार से ३० दिन की तपस्या की।

२७—सं० १९०३ के श्रीजी द्वार चातुर्मास में मुनि कर्मचन्दजी ने जल के आगार से ३१ दिन की तपस्या की।

२८—सं० १९०४ के आमेट चातुर्मास में मुनि उदयचन्दजी ने २ मास का तप आछ आगार से किया।

(६) दीर्घ स्वस्थ मुनि जीवन : आपका दीक्षा-पर्याय काल ५१ वर्ष व्यापी रहा। यह काल स्वामीजी के दीक्षा-पर्याय काल से भी नौ वर्ष अधिक है। इस सुदीर्घ कालीन मुनि जीवन में आप प्रायः स्वस्थ रहे।

सं० १८७५ के पाली चातुर्मास के बाद आप देवगढ़ पधारे। एक दिन दिशा से वापस आते समय आपको गाय ने चोट पहुंचा दी, जिससे आपका घुटना उतर गया। कंबल में सुला मुनि आपको शहर में ले आये और दिल्ली के वैद्य मंगनीरामजी ने मुनियों को उपचार बतलाया। उस उपचार के द्वारा आप स्वस्थ हुये, परन्तु इस चोट के कारण आपको नौ मास तक वहीं रहना पड़ा और सं० १८७६ का चातुर्मास देवगढ़ में ही हुआ।

मुनि हेमराजजी के करीब ३॥। वर्ष तक नेत्रों में निजला का रोग रहा। इससे दृष्टि जाती रही। सं० १८९७ का चातुर्मास सिरियारी में रहा। वैशाख में एक संत ने सिरयारी में ही नेत्रों की कारी की। आपके नेत्रों में पुनः ज्योति प्रगट हुई।

(७) अन्तिम चातुर्मास के बाद का विहार : आपका अन्तिम चातुर्मास सं० १९०४ में आमेट शहर में हुआ। चातुर्मास की समाप्ति के बाद आप कांकड़ोली पधारे।

वहां आपने तृतीय आचार्य ऋषि रायचंदजी स्वामी का दर्शन किया और फिर उन्हीं के साथ घोउन्दे गांव पधारे। वहां से आप श्रीजी द्वार पधारे और वहां एक मास रहे। फिर सिसोदे, कांकड़ोली और तासोल होते हुये केलवा पधारे। वहां से विहार कर लाहवा होते हुये आमेट पधारे। आपका विचार मरुधर देश जाने का था। साधु और श्रावकों ने आपको बहुत रोका पर आप अडिग रहे और विहार कर एक रात कमेरी रहे और दो रात कुवाथल। फिर वहाँ से दोलोजीराखेड़े से होते हुये देवगढ़ पधारे। तीव्र उष्णकाल आ गया था। फिर भी मरुधर जाने का विचार आपने नहीं छोड़ा। श्रीजी द्वार के प्रसिद्ध श्रावक मायाचंदजी के पुत्र फोजमलजी ने आपके दर्शन किये और आपसे रुकने की अर्ज की तब आप बोले—"हम मरुधर काल के खीचे हुये जा रहे हैं तो भी कुछ पता नहीं—'कालरा खाँच्या जावाँ अछाँ, कांई ते पिण खबर न काय।'" आप सात रात देवगढ़ रहे। इसके बाद पींपली, फुलेज होते हुये सिरियारी पधारे।

आप सिरियारी पधारे उस दिन जेठ बदो चौथ का दिन था। द्वादशी तक आप पूर्णतः स्वस्थ थे और उस दिन भी, आपने खड़े-खड़े ही प्रतिक्रमण किया था :

जाझा एकावन वर्ष स्वामजी, कांई विचरया हेम संपेख।
वृद्धपणे पिण स्वामजी, कियो उभो पडिकमणो विशेष॥
जेठ बिद बारस तांई स्वामजी, होजी उभा पडिकमणो कीध।
उद्यमी कर्म काटण तणा, होजी जग मांहे जश लीध[1]॥

(८) अन्तिम सप्ताह : कहना होगा कि आपकी पहली अस्वस्थता यहीं से आरम्भ होती है। जेठ बदी तेरस के दिन आपको कुछ श्वास का प्रकोप हुआ। चौदस के दिन आप गाँव के बाहर दिशा के लिये पधारे। इसी दिन आचार्य जीतमलजी स्वामी ने आपके दर्शन किये। उस दिन आपने जयाचार्य से अनेक तरह का वार्तालाप किया। इस तरह आपको दिन में चैन रहा पर रात्रि में श्वास विशेष रूप से उठने लगा। अमावस के प्रातः फिर साता हुआ। सुबह के भोजन में आपने दो फुलके खाये और शाम के आहार में एक फुलका। रात्रि में पुनः श्वास-प्रकोप बढ़ गया। प्रतिपदा के प्रभात में फिर साता हुई और आप गण-समुदाय सम्बन्धी बातें करते रहे। इस दिन तक दोनों वक्त का प्रतिक्रमण स्वयं बैठकर करते और उच्च स्वर से पाठोच्चार करते रहे।

इन दिनों आचार्य ऋषि रायचन्दजी चिरपटिया में विराजते थे। वहीं आपकी अस्वस्थता का समाचार आचार्य श्री को प्राप्त हुआ। प्रतिपदी के दिन आपने कपूरजी मुनिजी को मुनि हेमराजजी के पास भेजा। उस दिन आपने कहा—"आहार करने का भाव नहीं है क्योंकि इससे श्वास बढ़ जाता है।" परन्तु जीतमलजी स्वामी के विशेष अनुरोध से आपने एक लूखे (सूखे) फुलके का आहार किया।

१—हेम नवरसो ८.१८-१९

उसी दिन तीसरे पहर आप मुनि कपूरजी से बोले—"शीघ्र जाओ और आचार्य श्री को आज ही दर्शन करने के लिये कहो। यदि आज न पधार सकें तो कल पहर दिन बीतने के पूर्व दर्शन करें। देर न करें। कहीं उनके मन की मन ही में न रह जाय।" इसके बाद श्वास का प्रकोप बढ़ गया। चौथे पहर कुछ साता हुई और फिर शासन सम्बन्धी बातें करने लगे। शाम के आहार का त्याग कर दिया। सायंकाल को अपने मुख से शब्दोच्चार करते हुये बैठे-बैठे प्रतिक्रमण किया। रात्रि में संतों से व्याख्यान दिलवाया।

रात्रि के अन्तिम प्रहर में मुनि सतीदासजी और उदयचन्दजी ने आपको चौबीसी की चौदह ढालें सुनाई। बाद में आप फिर अनेक तरह की वैराग्य की बातें सन्तों से करने लगे। जीतमलजी स्वामी ने विचार किया: "आयु का क्या भरोसा? अभी तो कोई शंका नहीं, फिर भी 'मिच्छामि दुक्कडं' दिला देना अच्छा है।" ऐसा सोच उन्होंने व्रत उच्चारित करवाये और 'मिच्छामि दुक्कडं' दिलवाया। आपने बड़े प्रसन्न मन और बड़ी सावधानी के साथ आलोचना की। उस समय का चित्र इस प्रकार है:

हेम पिण निज मुख सूं कहै हो, ऊँचे शब्द उचार।
मिच्छामि दुक्कडं मांहरे हो, एहवा सावधान गुणधार॥
इम पांचूं ही भेद में हो, लाग्यो हुवे अतिचार।
मिच्छामि दुक्कडं तेहनो हो, कह्या जूजूआ शब्द उचार॥
मन वच काया गुप्त में हो, लागो हुवे अतिचार।
जू जूवा भेद करी कह्या हो, मिच्छामि दुक्कडं उदार॥
छऊं व्रतां रा अतिचार मझे हो, हेम बोले ऊंचे स्वर वाण।
गये काल रो मिच्छामि दुक्कडं हो, आगमिये काल रा पचखाण॥
पाप अठारे आलोविया हो, जूदा जूदा ले नाम।
पचखाण आगमिये काल में हो, त्रिविधे त्रिविधे कर ताम॥
इण रीत महाव्रत आलोविया हो, आलोवण अधिकार।
भाग्यबली हेम महामुनि हो, योग्य मिल्यो श्रीकार[1]॥

इसके बाद मुनि जीतमलजी ने स्थानांग, उत्तराध्ययन आदि सूत्रों के पाठ सुनाते हुये आपके परिणामों को वैराग्य में ऐसा तल्लीन किया कि आपकी आत्मा आनन्दविभोर हो उठी। मुनि जीतमलजी ने "मृत्यु महोत्सव है" इस बात को बड़े मार्मिक ढंग से अपने विद्या-गुरु के सम्मुख रखा और उसके बाद उनके गुणवाद किये।

अब तक प्रतिक्रमण का समय आ चुका था। आप सतीदासजी से बोले—"निद्रा आ रही है।" सतीदासजी बोले—"लेटकर निद्रा लें।" आप बोले—"प्रतिक्रमण करना है।"

१—हेम नवरसो ६. ३६-३८, ४२-४४

सतीदासजी बोले—"आप अस्वस्थ हैं ऐसी स्थिति में प्रतिक्रमण न करें तो कोई बात नहीं।" आप बोले—"प्रतिक्रमण तो करना ही है, इसमें अस्वस्थता का क्या प्रश्न ?" इसके बाद उच्च स्वर से पाठोच्चार करते हुये आपने बैठे-बैठे प्रतिक्रमण किया।

(६) महा प्रयाण : तदन्तर संतों ने प्रतिलेखन किया और मुनि मोतीजी स्वामी दिशा जाने की आज्ञा लेने के लिये आये। आपने उनके मस्तक पर अपना हाथ रखा। संतों ने पूछा— "साता है तो ?" आपने आह्लादपूर्वक उच्च स्वर में उत्तर दिया—"देव, गुरु के प्रताप से साता है।"

फिर आप बाजौट से नीचे उतर दिशा पधारे। सभी संत उपस्थित थे।

किसी ने श्वास की औषधि बताई थी। उसको कई संत घिस रहे थे। मुनि जीतमलजी सतीदासजी आदि संतों से बोले—"हम लोग दिशा से वापस आकर औषधि देंगे।" ऐसा कह पछेवड़ी (ऊपर का कपड़ा) पहन दिशा जाने को प्रस्तुत हुये। इस समय जीतमलजी स्वामी के मन में आया—"यदि कहीं श्वास बढ़ गया तो ? अच्छा हो हम औषधि देकर ही दिशा जायँ।" ऐसा विचार कर वे ठहर गये। मुनि हेमराजजी दिशा से निवृत्त हो बाजौट पर बैठे। शरीर में अत्यन्त पसीना आ गया। श्वास का प्रकोप अत्यन्त बढ़ गया। हाथ के इशारे से अफीम माँगी। मुनि जीतमलजी ने अफीम दी। आप मुंह में रख उसे चूसने लगे। इतने में पुद्गलों की शक्ति क्षीण होती हुई दिखाई दी।

अवसर देखकर मुनि जीतमलजी ने अनशन ग्रहण कराया। आपने शुद्ध विवेकपूर्वक उसे ग्रहण किया। मुनि जीतमलजी बोले—"स्वामी ! आपको अरिहंत, सिद्ध, साधु और धर्म इन चारों शरणों का आधार है।" इसके बाद अनेक वैराग्य की बातें सुनाईं। तदन्तर चारों आहार का त्याग कराया। फिर शरणों का आधार दिलाया।

इस प्रकार एक घड़ी का समय बीता। आप मुनि सतीदासजी और करमचंदजी के हाथों के सहारे बैठे हुये थे। इसी दशा में आपने समाधि-मरण को प्राप्त किया। साधुओं ने शरीर व्युत्सर्ग कर कायोत्सर्ग ध्यान किया। सब संतों ने उस दिन उपवास किया।

इस तरह आपका स्वर्गवास आपकी जन्मभूमि सिरियारी में ही सं० १९०४ की ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया शनिवार के दिन हुआ। उस दिन वहाँ साठ से अधिक साधु-साध्वियाँ उपस्थित थीं। आचार्य श्री रायचन्दजी स्वामी आपके स्वर्गवास होने के दो मुहूर्त बाद पधारे। उस समय आपने जो उद्गार प्रकट किये उनको मुनि जीतमलजी ने इस प्रकार पद्य-बद्ध किया है :

> भिक्खू भारीमाल सतजुगी चल्या हो, जब इसी करड़ी लागी नांय।
> पिण हिवड़ाँ करड़ी लागी घणी हो, इम बोल्या ऋषराय[१] ॥

१ —हेम नवरसो ९.१०६

(१०) **महान् व्यक्तित्व :**—आपके व्यक्तित्व के विषय में हम जयाचार्य के ही उद्गारों को प्रकट करेंगे :

मुनिवर रे शीयल धर्‌यो नववाड़ सूं रे, धुर बाला ब्रह्मचार हो लाल ।
ए तप उत्कृष्टो घणों रे, सुरपति प्रणमें सार हो लाल ॥
मुनिवर रे उपशम रस मांहें रह्या रे, विविध गुणा री खाण हो लाल ।
एकन्त कर्म काटण भणी रे, संवेग रस गलताण हो लाल ॥
मुनिवर रे स्वाम गुणां रा सागरु रे, गिरवो अति गम्भीर हो लाल ।
उजागर गुण आगलो रे, मेरु तणी पर धीर हो लाल ॥
मुनिवर रे कठिन वचन कहिवा तणो रे, जाण के लीधो नेम हो लाल ।
बहुलपणे नहीं बागर्‌यो रे, वचनामृत सूं प्रेम हो लाल ॥
मुनिवर रे विविध कठिन बच सांभली रे, ज्यांरे मन में नहीं तमाय हो लाल ।
तन मन वच मुनि वश कियो रे, ए तप अधिक अथाय हो लाल ॥
मुनिवर रे चौथे आरे सांभल्या रे, क्षमा शूरा अरिहंत हो लाल ।
बिरला पंचम काल में रे, हेम सरिषा सन्त हो लाल ॥
मुनिवर रे निरलोभी मुनि निर्मला रे, आर्जव निर अहंकार हो लाल ।
हलका कर्म उपधि करी रे, सत्य वच महा सुखकार हो लाल ॥
मुनिवर रे संयम में शूरा घणा रे, वर तप विविध प्रकार हो लाल ।
उपधि अनादिक मुनि भणी रे, दिलरो हेम दातार हो लाल ॥
मुनिवर रे ईर्या धून अति ओपती रे, जाणे चाल्यो गजराज हो लाल ।
गुण मूरत गमती घणी रे, प्रत्यक्ष भवदधि पाज हो लाल ॥
मुनिवर रे स्वाम गुणा रा सागरू, किम कहिये मुख एक हो लाल ।
ऊंडी तुझ आलोचना रे, बारूं तुझ विवेक हो लाल ॥
मुनिवर रे अखंड आचार्य आगन्यां रे, तें पाली एकणधार हो लाल ।
मान मेट मन वश कियो रे, नित्य कीजे नमस्कार हो लाल ॥
साझ घणा सन्ता भणी रे, तें दीधो अधिक उदार हो लाल ।
गण वच्छल गण बालहो रे, समरे तीरथ च्यार हो लाल[१] ॥

(११) **आचार्यों के बहुमान के पात्र :**—आपने तीन आचार्यों के—आचार्य भीखनजी, आचार्य भारीमालजी और आचार्य रायचन्दजी के युग देखे। आपको सभी का स्नेह एवं बहुमान प्राप्त था।

आपके दीक्षा लेने के भाव स्थिर होते ही स्वामीजी ने युवाचार्य भारीमालजी से फरमाया :

१—**हेम नवरसो** : ७. ६-१६,१८,२४-२६

भारिमल सूं भिक्खू कहै, अब थे हुवा नचिन्त।
आगे तो थांरे म्हैं हुंता, अब हेम अघजीत॥
जे कोई पाखंड्यां थकी, पड़े चरचा रो काम।
तो छै थांरे हेमजी, इमि कहि भिक्खू स्वाम[1]॥

जब मुनि वेणीरामजी को आपके यावज्जीवन ब्रह्मचर्य ग्रहण करने का संवाद स्वामीजी से मिला तब वे बोले :

वेंणीरामजी सांभली, हर्ष्या घणा मन मांय।
घणा प्रशंस्या स्वाम नें, आप कीधी बात अथाय॥
थे शील अदरायो हेम नें, कीधो उत्तम काम।
म्हें पिण खप कीधी घणी, (पिण) टीप न लागी ताम[2]॥

आपका व्यक्तित्व कितना आकर्षक एवं प्रभावशाली था यह इन दोनों घटनाओं से स्वयं प्रकटित हो जाता है। स्वामीजी ने आपमें एक महान् ओजस्वी आत्मा का आलोक देखा था।

एक बार उदयपुर के राणाजी ने भारीमालजी स्वामी को उदयपुर में न रहने का हुक्म दे दिया। बाद में उनको अपनी गलती महसूस हुई और उन्होंने भारीमालजी स्वामी से उदयपुर पधारने की विनती की :

छिहंतरें वर्ष पुर मझें, भारीमाल रिषराय।
आई हिन्दुपति नी विनती, करी घणी नरमाय॥
उदयापुर पधारियें, दुनियां साहमों देष।
दुष्ट साहमों नहीं देखियें, क्रिपा करों विसेष[3]॥

आचार्य श्री भारीमालजी स्वयं तो नहीं पधारे पर उनकी विनती स्वीकार कर हेमराजजी स्वामी के सिंघाड़े को भेजा। इस अवसर पर ऋषि रायचन्दजी (भावी तृतीय आचार्य) भी आपके साथ थे :

हेम रिष रायचन्द जी, तेरे साध तिवार।
पूज हुकम सूं आविया, उदयापुर सेंहर मझार॥

१—हेम नवरसो ३. दोहा २-३

२—वही. दोहा ७-८

३—तेरापंथ आचार्य चरितावलि (द्वि० खण्ड) : आचार्य भारीमाल रो बखाण ५. दोहा ४-५

उदयापुर आर्यें नम्यो, हिन्दुपति हरप सहीत।
उपगार हुवो त्यां अति घणो, जांणे चौथा आरा नी रीत[1] ॥

आचार्य श्री ने मुनि श्री हेमराज को भेजना अपने पधारने के बराबर ही माना।

आमेट के अन्तिम चातुर्मास के बाद जब आप कांकड़ोली पधारे तब आचार्य ऋषि रायचन्दजी स्वयं संतों के साथ आपकी अगवानी के लिए गये। यह चरम सम्मान था :

चर्म चौमासो उतर्यो, विहार कियो तिणवार।
विचरत विचरत आविया, कांकड़ोली शहर मझार॥
परम पूज्य सुण हर्षिया, संत घणा ले संग।
स्हांमा आया हेम नें, उपनो घणो उमंग॥
बे कर जोड़ी वन्दना करे, देखे बहु जनवृन्द।
नर नारी हर्ष्या घणा, पाम्यां अधिक आणन्द[2] ॥

आचार्य श्री देहान्त के पूर्व नहीं पहुंच सके। दो मुहूर्त बाद में पहुंचने पर उन्होंने जो उद्गार व्यक्त किये वे ऊपर दिये जा चुके हैं। वे उद्गार भी इसी भावना के प्रतीक हैं।

स्वर्गवास के बाद आपने मुनि श्री जीतमलजी को 'हेम नवरसो' लिखने का आदेश दिया :

परमपूज्य जीत ने कह्यो हो, करो नवरसो सार।
इम पूज्य तणी आज्ञा थकी हो, जोड्यो हेम नवरसो उदार[3] ॥

इन पंक्तियों से भी उसी भावना की अभिव्यक्ति होती है।

सं० १८८१ में आचार्य श्री रायचन्दजी ने आपके आहार के विषय में पांती का हिसाब उठा दिया। यह भी महती कृपा का ही कारण था।

(१२) **तपस्वी जीवन :** आपका जीवन बड़ा तपस्वी था। सं० १८५६ के चातुर्मास में आप स्वामीजी के साथ थे। आपने चातुर्मास भर एकान्तर तपस्या की। आपके तपस्वी-जीवन की झाँकी जयाचार्य के शब्दों में इस प्रकार है :

१—तेरापंथ आचार्य चरितावलि (द्वि० ख०) : आचार्य भारीमालजी रो बखाण ५. दोहा ७, ८

इस घटना का उल्लेख हेम नवरसो ५. ४६-४७ में इस प्रकार मिलता है :

उदियापुर धर्म उजासो रे संततरे कियो चौमासो रे।
हिन्दुपति हुवो अधिक हुलासो॥
भीमसिंह भक्ति हद कीधी रे नमस्कार वंदणा प्रसिद्धि रे।
तिण सूं हुई घणी धर्म वृद्धि॥

२—हेम नवरसो : ८ दोहा १-३

३—हेम नवरसो : ९. ११४

४—हेम नवरसो ५.६९

मुनिवर रे उपवास बेला बहुला किया रे, तेला चोला तंतसार हो लाल।
पांच-पांच ना थोकड़ा रे, कीधा बहुली बार हो हाल॥
हेम ऋषि भजिये सदा रे॥
मुनिवर रे षट दिन कीधा खंत सूं रे पूरो तप सूं प्यार हो लाल।
आठ किया उचरंग सूं रे, हेम बड़ा गुणधार हो लाल॥ हेम०॥
मुनिवर रे इसना त्याग किया ऋषि रे, बहु विगय तणो परिहार हो लाल।
हेम वैरागी देखने रे, पामे अधिको प्यार हो लाल॥ हेम०॥
मुनिवर रे सीतकाल बहु सी खम्योरे, एक पछेवड़ी परिहार हो लाल।
घणा वर्षां लग जाणज्यो रे, हेम गुणाँ रा भण्डार हो लाल॥ हेम०॥
मुनिवर रे उभा काउसग्ग आदर्यो रे, सीतकाल में सोय हो लाल।
पछेवड़ी छांड़ी करी रे, बहु कष्ट सह्यो अवलोय हो लाल॥ हेम०॥
मुनिवर रे सज्झाय करवा स्वामजी रे, तन मन अधिको प्यार हो लाल।
दिवस रात्रि में हेमनो रे, एहिज उद्यम सार हो लाल॥ हेम०॥
मुनिवर रे काउसग मुद्रा स्थापने रे, ध्यान सुधा रस लीन हो लाल।
नित्य प्रति उद्यम अति घणो रे, मुक्त स्हामी धुन कीन हो लाल[1] ॥ हेम०॥

(१३) **कुछ जीवन-प्रसंग :** आपके जीवन के कई प्रसंग अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण हैं, उन्हें हम यहां संक्षेप में दे रहे हैं :

(क) सं० १८७७ के उदयपुर चौमासे के बाद आपने संतों के साथ राजनगर में द्वि० आचार्य भारीमालजी के दर्शन किये। आचार्य श्री के शरीर में अधिक असाता थी इससे अनेक संत वहां एकत्रित हुए। आचार्य श्री ने युवराज पदवी के लिए दो नाम लिख रखे थे—एक मुनि खेतसीजी का तथा दूसरा ऋषि रायचन्दजी का। मुनि जीतमलजी ने एक ही नाम के लिए विनती की। आचार्य श्री आपके मन की प्रतिक्रिया जानने के इच्छुक थे। इस परिस्थिति को आपने किस प्रकार परिष्कृत किया उसका वर्णन इस प्रकार मिलता है :

भारीमाल तनु कारण जाणी, बहु संत मिल्या तिहां आणी।
गणपति नी मरजी ओलख, ऋषि हेम वदे इम वाणी॥
प्रगट आप ऋषिराय शशी ने, महर करी नें दीजे।
म्हारी तरफ नुं आप मन मांही, किंचित फिकर न कीजे॥
डावी जीमणी आंख दोनुं में, नहिं है फरक लिगारो।
तिम आप तणे ऋषिराय अने हूं, सरीखा बेहुं सुविचारो॥
हेम बयण वर रयण समा सुण, गणपति हर्ष सुपाया।
परम विनीत रू नीतवंद हद, जाण्या हेम सवाया॥

१—हेम नवरसो ७.१-७

तब पद युवराज दियो ऋषिराय ने, हेम भणी सु विमासो।
नव संता स्युं स्वाम भोलायो, शहर आमेट चोमासो[1] ॥

मुनि हेमराजजी कितने विनयी और नीति के निर्मल थे, यह इस घटना से स्वयं प्रकट होता है। श्री जीतमलजी स्वामीजी ने इस घटना के सम्बन्ध में लिखा है :

हेम बाण सुनी पूज्य हर्ष्या रे, यानें तन मन सुवनीत परख्या रे।
निकलंक हेम इम निरख्या ॥
एहवा हेम सुविनीत गम्भीरो रे, ए तो मेरु तणी पर धीरो रे।
हेम निर्मल अमोलक हीरो[2] ॥

(ख) सं० १८८४ का चातुर्मास पटलावद में व्यतीत कर आचार्य रायचन्दजी पुर पधारे। दीक्षा में बड़े होते हुए भी आप अनेक श्रावक-श्राविकाओं के वृन्द के साथ आचार्य श्री के सम्मुख पधारे। मुनि हेमराजजी प्रतिक्रमण में स्वयं ही आलोचना ले लिया करते थे। आचार्य श्री ने मुनि जीतमलजी से कहा—"आलोचना गणि से लेनी चाहिये। जब तक हेमराजजी को सहमत नहीं करोगे तुम्हें चारों आहार का त्याग है।" मुनि जीतमलजी ने यह बात आपसे अर्ज की। आपने यह बात तुरन्त स्वीकार की और तब से आचार्य श्री से आलोचना लेने लगे। वास्तव में बात यह थी कि उस समय तक इस प्रश्न की चोलना—चर्चा ही नहीं हुई थी—'तठा तांइ चोलणा न हुइ ताम[3]'।

(ग) एक बार वेणीरामजी मुनि ने स्वामीजी से कहा : "हेमराजजी को व्याख्यान अस्खलित रूप से कण्ठस्थ नहीं होते। वे जोड़ते जाते हैं और व्याख्यान देते जाते हैं।" स्वामीजी बोले : "केवली सूत्र व्यतिरिक्त ही होते हैं। उनके सूत्र से काम नहीं होता।"

(घ) नाथद्वार में सं० १८६० में स्वामीजी को वातरोग के कारण करीब १३ महीने तक ठहरना पड़ा। एक बार मुनि हेमराजजी गोचरी गये। चने और मूंग की दाल को साथ देख कर स्वामीजी ने पूछा : "दोनों दालों को साथ किसने किया ?" आप बोले : "मैं साथ ही लाया था।" स्वामीजी बोले : "अस्वस्थ के लिए अलग मांग कर लाना तो दूर रहा- तूने दोनों को मिला क्यों दिया ?" आप बोले : "अजाने में इकट्ठी हुई।" स्वामीजी ने कड़ा उपालम्भ दिया। आप एकांत में जाकर सो गये। आप उदास हो गये। स्वामीजी ने आहार कर आकर पूछा : "दोष अपनी आत्मा का दिखाई दे रहा है या मेरा ?" आप बोले : "दोष तो अपना ही देखता हूं।"

१—(क) तेरापन्थ आचार्य चरितावलि (द्वि० ख०) : आचार्य जीतमलजी रो वखाण ७.१०-१४

(ख) वही : आचार्य रायचन्द जी रो वखाण ७.४-७

(ग) हेम नवरसो ५.५५-६०

२—हेम नवरसो ५.५८-५६

३—तेरापंथ आचार्य चरितावलि : आचार्य जीतमलजी रो वखाण : ११ यतनी १३

४—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० १५६

स्वामीजी बोले : "ठीक है। आज के बाद सचेत रहना। उठो ! आहार करो।" आपने आहार किया[1]।

(ङ) सं० १८५५ में स्वामीजी कांकड़ोली में सैहलोतों की पोल में विराजे। रात में पोल-द्वार की छोटी खिड़की खोल स्वामीजी दिशा गये। आपने पूछा : "स्वामीजी खिड़की खोलने में क्या बाधा नहीं ?" स्वामीजी बोले : "पाली का चोथजी संकलेचा दर्शन करने के लिए आया था। वह बड़ा शंकाशील व्यक्ति है। पर इसकी शंका तो उसको भी नहीं हुई ? फिर तुम्हें यह शंका कैसे हुई ?" आप बोले : "स्वामीजी ! मुझे कोई शंका नहीं, मैं तो पूछता हूं।" स्वामीजी बोले : "तू पूछता है तो इसमें बाधा नहीं। यदि इसमें बाधा होती तो मैं क्यों खोलता ?"

(च) सं० १८५५ में पाली में आप टीकमजी से चर्चा कर रहे थे। उस समय एक माहेश्वरी बोला : "चार पैसे देकर किसी ने सपेरा से सर्प छुड़ाया तो उसमें उसे क्या हुआ ?" टीकमजी बोले : "अच्छा धर्म हुआ।" माहेश्वरी बोला : "वह सर्प सीधा चूहे के बिल में जा घुसे तब ?" टीकमजी बोले : "बिल के अन्दर चूहा न हो तो ?"

इस प्रश्नोत्तर की बात आपने स्वामीजी से कही। स्वामीजी बोले : "किसी ने काग पर गोली चलाई। काग उड़ गया। यह काग का भाग्य—उसकी आयु थी। पर गोली छोड़नेवाले को तो पाप लग चुका। इसी तरह जिस सर्प को छुड़ाया वह बिल में गया। यदि अन्दर चूहा नहीं है तो यह चूहे का भाग्य पर सर्प को छुड़ानेवाला तो हिंसा का भागी ठहर चुका।"

स्वामीजी ने आपसे कहा—"ऐसा जवाब देना चाहिए[2]।"

(छ) आपने दीक्षा लेने के बाद दशवैकालिक सूत्र सीखा। उसके बाद उत्तराध्ययन सूत्र सीखने लगे। स्वामीजी बोले : "व्याख्यान सीखो। तुममें कंठकला है।"

(१४) **सबसे बड़ी देन—विद्यादान :** हेमराजजी स्वामी की सबसे बड़ी देन है उनका विद्यादान। वे चतुर्थ आचार्य जीतमलजी स्वामी के विद्यागुरु थे। उनकी दीक्षा आचार्य भारीमालजी के समय में ऋषि रायचन्दजी के कर-कमलों से सं० १८६९ की माघ बदी ७ के दिन जयपुर में सम्पन्न हुई। दीक्षा के बाद उन्हें मुनि हेमराजजी को सौंप दिया गया था। मुनि जीतमलजी स्वयं ही लिखते हैं :

संयम देई सूंपीया, हेम भणी तिण वारी हो।
हेम भणाय पका किया, विद्यदान दातारी हो।
ज्यांरी बहु बलिहारी हो[3] ॥

१—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० १६६
१—भिक्खु दृष्टान्तु : दृ० १७२
१—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० २७२
१—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० २७३
१—(क) आचार्य चरितावलि : आचार्य रामचन्दजी रो वखाण ६.६
(ख) हेम नवरसो ४.२८-२९

इसके बाद मुनि जीतमलजी के ग्यारह चातुर्मास सं० १८७० से लेकर १८८१ तक आपके साथ हुए। बाद में सं० १९०३ का चातुर्मास भी साथ में हुआ। इन तेरह चातुर्मासों में आपने जीतमलजी स्वामी को भरपूर ज्ञान-दान दिया :

तेरे चौमासा बहु खप करनें, सूत्रादि अर्थ उदारी।
विविध कला सीखाई जीत नें, हेम इसा उपगारी[१] ॥

इस ज्ञान-दान की चर्चा करते हुए वे पुनः लिखते हैं :

मुनिवर रे हूँ तो विन्दु समान थो रे, तुम कियो सिन्धु समान हो लाल।
तुम गुण कबहु न विसरूं रे, निश दिन धरूं तुझ ध्यान हो लाल।
मुनिवर रे जीत तणी जय थे करी रे, विद्यादिक विस्तार हो लाल।
निपुण कियो सतीदास ने रे, बलि अवर सन्त अधिकार हो लाल[२] ॥

(१५) **साहित्यिक अभिरुचि और देन :** आपकी साहित्यिक अभिरुचि बड़ी उच्च-कोटि की थी। आप सहज ज्ञानी और आध्यात्मिक कवि थे। आपकी कृतियाँ थोड़ी ही प्राप्त हैं पर जितनी भी प्राप्त हैं वे आपकी असाधारण साहित्यिक प्रतिभा का परिचय देतीं हैं। सम्वत् १९०३ के चातुर्मास में आपने स्वामीजी के दृष्टान्त मुनि जीतमलजी को लिखाए :

विविध हेतु न्याय युक्ति वर, भिक्खू रा दृष्टान्त भारी।
जीत लिख्या स्वामी हेम लिखाया, और ही विविध प्रकारी[३] ॥

आपके अन्तिम दिनों में मुनि जीतमलजी ने केलवे में आपकी दर्शन-सेवा की। उस समय भी आपने अनेक बातें उनको लिखाई :

विविध जूनी बारता, होजी हेम लिखाई ताय।
हेम ज्ञान गुण पोरसो, कांई समुद्र जेम शोभाय[४] ॥

देहान्त की पूर्व रात्रि में जब मुनि जीतमलजी कृत चौबीसी की ढालें उन्हें सुनाई गई तब आपने चौबीसी कंठस्थ करने का अभिग्रह लिया :

हेम पोते अभिग्रहो कियो हो, कारण मिटियाँ ताम।
म्हे पिण चोवीसी मुंढे कराँ हो, एहवा बैरागी स्वाम[५] ॥

ये सब आपकी साहित्यिक अभिरुचि के ज्वलन्त उदाहरण हैं। अंतिम दिन के प्रातःकाल में आप और मुनि जीतमलजी के बीच जो संवाद हुआ वह जितना वैराग्यपूर्ण है उतना ही साहित्यिक अभिरुचिपरक भी[६]।

१—**हेम नवरसो** : ६.३२
२—वही : ७.२१,२३
३—वही : ६.२५
४—वही : ८.५
५—वही : ९.२९
६—वही : ९.४५-७४

आपका अधिकांश समय स्वाध्याय, ध्यान, अध्ययन और अध्यापन में लगता था। "भीखू चरित" के उपरान्त आपकी अन्य कृति "आचार्य भारीमालजी रो बखान" है। यह कृति "तेरापंथ आचार्य चरितावलि" (द्वि० ख०) के पृष्ठ १ से २४ पर प्रकाशित है। इसमें १३ ढालें हैं। दोहे और ढाल-गाथाओं की संख्या क्रमशः ७८ और १७३ हैं। यह कृति मारवाड़ के पिपाड़ शहर में सं० १८७४ में रचित है।

(२) प्रस्तुत कृति का परिचय

(१) कुल ढाल, दोहे तथा गाथाओं की संख्या : इस चरित में कुल १३ ढालें हैं; जिनके दोहों तथा गाथाओं की संख्या इस प्रकार है :

ढाल	दोहा	गाथा
१	६	१७
२	२	२१
३	६	१५
४	६	१२
५	५	१३
६	५	१४
७	४	२१
८	४	१२
९	५	१३
१०	३	१७
११	५	९
१२	२	१२
१३	४	२१
	६०	१९७

स्वामीजी के जीवन में तेरह की संख्या का विशेष महत्त्व रहा। आपका जन्म सं० १७८३ की आषाढ़ शुक्ला त्रयोदशी और स्वर्गवास सं० १८६० की भाद्र शुक्ला त्रयोदशी मंगलवार के दिन हुआ। संप्रदाय की नाम-स्थापना के समय अनुरागी श्रावक और साधु दोनों की संख्या तेरह-तेरह ही थी। सम्प्रदाय का नाम भी 'तेरह' संख्या के आधार पर ही 'तेरापंथ' पड़ा। राजस्थानी 'तेरा' शब्द 'तेरह' का पर्यायवाची है।

इस कृति में ढालों की संख्या तेरह रखी गयी है वह आकस्मिक नहीं, पर संभवतः स्वामीजी के जीवन में 'तेरह' के अंक के इस महत्त्व को ध्यान में रखते हुये ही रखी गई है।

तेरह ही ढालें भिन्न-भिन्न देशियों—रागिनियों में हैं। आप कंठकला में प्रवीण थे। आपकी वाणी में बड़ा मिठास था। आपकी यह कृति भी अति श्रुतिमधुर, भक्ति-भाव से ओत-प्रोत तथा उच्च प्रमोद-भावना और काव्य-रस से परिपूर्ण है। वर्णन जितना स्वाभाविक है उतना ही प्रामाणिक भी। इस संग्रह की अन्य कृतियाँ इस कृति की शैली, भावाभिव्यक्ति और घटना-वर्णन से प्रभावित हैं, यह स्पष्ट है।

(२) **कृति का संक्षिप्त सार :** पहली ढाल में स्वामीजी के जीवन की जन्म से देहावसान तक की मुख्य-मुख्य घटनाओं का सिंहावलोकन है और फिर संक्षेप में स्वामीजी की कुछ विशेषताओं का वर्णन। दूसरी ढाल में आचार्य रुघनाथजी से अलग होने पर स्वामीजी को कैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था उनका रोमांचकारी वर्णन है। इन बाधारूपी बादलों को उन्होंने अपने तपोतेज से किस प्रकार तितर-बितर कर डाला इसका यहाँ बड़ा ही सुन्दर वर्णन है :

रावण रूप किया था घणा रे, बहों रूपणी देवी बोलाय रे। भवक जन।
पिण लछमण रा बाण सूं रे लाल, रूप गया विललाय रे। भ०।
ज्यूं सुध साधां सूं भडकाया लोकां तणी रे, यांरी संगत म करज्यो कोयरे। भ०।
पिण पूज सुत्र न्याय ग्यांन बांण सूं रे लाल, भ्रम भाग्यो घणां रो जोय रे। भ०।
चक्रव्रत चढ़े देश साधवा रे, आंण फेरे छ खण्ड में आय रे। भ०।
ज्यूं भीखनजी रिष विचरया जठे रे लाल, अरिहंत आगन्या दीधी ऊलखाय रे।भ०।

तीसरी ढाल के प्रारम्भिक दोहों में स्वामीजी की साहित्यिक साधना का संक्षिप्त विवरण देते हुये उन्होंने विचार-जगत में किस तरह से विजय प्राप्त की, इसका सुन्दर वर्णन है। चौथी ढाल का भी प्रायः यही विषय है। पाँचवीं ढाल में स्वामीजी के चरम विहार का वर्णन है। स्वामीजी सिरियारी पधारे तब उनके साथ जो संत थे उन संतों का नामोल्लेख भी यहाँ प्राप्त है। छठी ढाल में स्वामीजी की रुग्णता और उनकी आत्म-आलोचना का वर्णन है। सातवीं ढाल में उन्होंने चतुर्विध संघ को जो चरम उपदेश दिया उसका वर्णन है। आठवीं ढाल में स्वामीजी के संल्लेषणा-संथारे का वर्णन है। नवीं ढाल में स्वामीजी के संथारे की जो प्रतिक्रिया चारों ओर हुई उसका वर्णन है। दसवीं ढाल में स्वामीजी के संथारे की सिद्धि का वर्णन है। ग्यारहवीं ढाल में स्वामीजी के देहान्त के बाद में जनता में जो धर्म-ध्यान हुआ उसका उल्लेख है। बारहवीं ढाल में स्वामीजी ने जो उपकार किया उसका वर्णन है। तेरहवीं ढाल में स्वामीजी के चातुर्मासों का वर्णन है। उन्होंने कितनी प्रव्रज्यायें दीं उसका भी वहाँ उल्लेख है।

(३) **रचना-स्थान और समय**—इस कृति का समाप्ति-दिवस सं० १८६० माघ शुक्ला नवमी शनिवार है। यह सिरियारी की उसी पक्की हाट में रचित है, जहाँ स्वामीजी ने संथारा किया और समाधिपूर्वक देवलोक पधारे। इसका उल्लेख तेरहवीं ढाल की २०वीं गाथा में इस प्रकार है :

जोड़ कीधी सरीयारी सेंहर में, पकें हाट विचार हो। मुंणिद।
समत अठारें साठें समें, माहा सुदि नवमी सनिसर वार हो। मुंणिद।

यह महत्त्वपूर्ण 'जीवन चरित' आज तक अप्रकाशित ही रहा और प्रथम बार प्रकाशित होकर पाठकों के सम्मुख आ रहा है।

(४) आधार प्रति : प्रस्तुत प्रकाशन का आधार तृतीय आचार्य ऋषि रायचन्दजी स्वामी की हस्तलिखित प्रति से धारी हुई प्रति है। यह प्रति सं० १८६६ की वैशाख सुदी चतुर्दशी को मेवाड़ के खमणोर गांव में लिखी हुई है। श्री हेमराजजी स्वामी के हाथ की मूल प्रति के प्राप्त न होने से उपर्युक्त प्रति से मिलाकर ही यह चरित इस खण्ड में दिया गया है।

२ : भीखु चरित

(१) रचयिता का जीवन-चरित

इस कृति के रचयिता मुनि वेणीरामजी (वेणदासजी) स्वामीजी के स्वहस्त दीक्षित शिष्य थ। स्वामीजी के शिष्यों में आपका प्रव्रज्या-क्रम २७ वां है। आपकी मातृभूमि बगड़ी (सुधरी) थी। आपकी दीक्षा सं० १८४४ में हुई। आपने साधुओं में अग्रगण्य स्थान प्राप्त किया। 'साधां में वेणोंजी सतियां में मैंणाजी'—यह उस समय की प्रसिद्ध लोकोक्ति थी। आपके व्यक्तित्व का चित्रण इस रूप में प्राप्त है :

हुवो वैंणीराम ऋषि नीको रे, प्रबल पण्डित चरचावादी तीखौ रे।
मुनि लियो सुजश नौं टीकौ ॥

बारु बाचत सखर बखांणौं रे, सखर हेतु दृष्टान्त सुजांणौ रे।
भर्त मैं प्रगट्यौ जिम भांणौ ॥

हद देशना मैं हुशियारौ रे, श्रोता नैं लागै अधिक सुप्यारौ रे।
चित्त माहैं पांमैं चमत्कारों ॥

जाय मालव देश जमायौ रे, खण्डी सूं चरचा कर तायौ रे।
बहु जन नैं लिया समझायौ ॥

त्यांरी धाक सूं पाखण्ड धूजै रे, वैंणीराम केशरी जिम गूंजै रे।
प्रगट हलुकर्मी प्रतिबुजै ॥

उत्पत्तिया छै बुद्धि उदारौ रे, समझाया घणा नरनारौ रे।
हुवौ जिण शासण शिणगारौ ॥

घणां नैं दियो संजम भारो रे, धर्म वृद्धि मूर्त सुखकारौ रे।
ऐ तौ भिक्खु तणौ उपगारो ॥[1]

१—भिक्खु जश रसायण ४७.६-१२

आप बड़े बहुश्रुती थे। आपको स्वामीजी रचित प्रायः ३८,००० गाथाएँ कण्ठस्थ थीं। सूत्र और सिद्धान्त के रहस्यों के आप बड़े अच्छे जानकार थे। आप प्रकांड पण्डित और दुर्घर्ष चर्चावादी थे। मालव देश में सर्व प्रथम धर्म-प्रचार आप ही के द्वारा हुआ। एक बार रतलाम में आपको स्थान के लिये बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। कोई स्थान देने को तैयार न होता। जो देता भी वह बाद में चले जाने को कह देता। इस तरह तीन दिन में आपको ९ स्थान-परिवर्तन करने पड़े। इस प्रकार आहार और स्थानादि के कठिन परिषहों को सहन करते हुए भी आपने धर्म-प्रचार कर अनेक आत्माओं का उद्धार किया।

आप बड़े प्रभावशाली वक्ता थे। आपका व्याख्यान जनता को बड़ा प्रिय लगता। श्रोता के हृदय में आपकी वाणी से चमत्कार-सा उत्पन्न हो जाता। आपका व्याख्यान हेतु, न्याय और दृष्टान्तों से गर्भित होता। आप बड़े कुशाग्र-बुद्धि थे। आपकी बुद्धि बड़ी औत्पातिकी थी।

आप बड़े तेजस्वी थे। एक बार मेवाड़ में शाम के समय विहार करते हुए साधुओं से चोर भाण्डोपकरण आदि छीन कर ले गये। आप उस पथरीली भूमि में पद-चिह्नों से चोरों की खोज करते हुए चोर-पल्ली में जा पहुंचे और उन्हें समझा-बुझा कर प्रायः सब चीजें वापस ले आये। केवल एक पात्र और कुछ चित्रित पत्र वापस न मिल पाये।

आपका स्वर्गवास सं० १८७० में हरचासटु नामक गांव में हुआ[1]। एक यति ने द्वेषवश आपको दवा के बदले विष दे दिया। इस पर भी आपने बड़ा समभाव रखा। आपका देहावसान अचानक हो गया।

आपने २९ वर्ष पर्यंत बड़ी निर्मलता से मुनि-जीवन यापन किया। 'भिक्खु दृष्टान्त' में स्वामीजी के साथ घटित आपके कई जीवन-प्रसंग प्राप्त हैं[2]। उनमें से कुछ हम यहाँ देते हैं:

मुनि वेणीरामजी बाल्यावस्था में थे तब स्वामीजी से बोले: "हिंगुलु से पात्र नहीं रंगने चाहिएँ।" स्वामीजी बोले—"मेरे पात्र तो रंगे हुए ही हैं। तुम्हें शंका हो तो मत रंगो।" वेणीरामजी बोले—"मेरा केलू से रंगने का विचार है।" स्वामीजी बोले: "केलू लाने के लिए जाने पर यदि नजदीक में कच्चे पीले रंग का केलू हो और बाद में दूर पर पक्के लाल रंग का केलू हो तो तुम्हें पहले कच्चे पीले रंगवाले केलू को लेना चाहिए। यदि उसे न लेकर पक्के केलू की चाह करोगे तब तो ध्यान सुरंगे रंग का ही रहा[3]।" जब इस तरह उनको समझाया तब वे समझ गये।

१—(क) हेम नवरसो १. दो० ६:

चमालीसे संयम लियो, बैणीरामजी जोय।
हरचासटु में सही, सतरे पोंहता परलोय॥

(ख) भिक्खु जश रसायण ४७.१४:

कीधौ स्वाम भिक्खु पछै कालौ रे, शहर चासटु मैं छविशालो रे।
संवत अठारह सतरै निहालौ॥

२—देखिए पृ० १५९, १६०, १६२, १६३, १६४, १६५

३—भिक्खु दृष्टान्तः दृ० १६०

बाल्यावस्था में वेणीरामजी स्वामी में दोष निकालने की प्रवृत्ति थी। एक दिन वे दूर बैठे हुये थे। स्वामीजी ने गुप्त रूप से जगह पूंज कर पैर फैलाया और साधुओं से बोले—"देखो, वेंणी दूर बैठा देख रहा है, 'वह कुछ कहेगा।" एक क्षण के बाद ही मुनि वेणीरामजी बोले—"आपने बिना पूंजे पैर कैसे फैलाया?" अन्य साधु स्वामीजी की ओर देखकर हँसने लगे। साधु बोले—"पूंज-कर ही पैर फैलाया है।" इसपर वे शर्मिंदा हो समीप आ स्वामीजी के चरणों में नतमस्तक हो गये[1]।

पिपाड़ की घटना है। एक दिन स्वामीजी ने वेणीरामजी को दो तीन बार पुकारा। वे दूसरी हाट में थे। बोले नहीं। श्रावक गुमानजी लुणावत से स्वामीजी बोले—"बैणो छूटतो दीसै है।" गुमानजी ने सारी बात जाकर वेणीरामजी से कही। वेणीरामजी तुरन्त आकर चरणों में झुक गये। स्वामीजी बोले—"पुकारने पर भी तुम बोले नहीं?" वेणीरामजी विनयपूर्वक बोले—"मैंने सुना नहीं।" इसके बाद बड़ी विनम्रता से क्षमा-याचना की[2]।

एक बार वेणीरामजी बोले—"मैं थली में जाकर चन्द्रभानजी से चर्चा करूँ?" अवसर न देखकर स्वामीजी बोले—"उनसे चर्चा करने का तुझे त्याग है[3]।"

स्वामीजी ने एक बार वेणीरामजी से कहा—"तुम आँखो में औषधि बहुत लगाते हो। आँख खोते दिखाई देते हो।" इसपर भी उन्होंने औषधि न छोड़ी। आँखें कच्ची पड़ गई। उनमें घाव हो गये[4]।

सं० २०६० की भाद्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन स्वामीजी का संथारा संपन्न हुआ। उस दिन प्रातः डेढ़ पहर दिन चढ़ने पर आप साधुओं से बोले—"साधु आ रहे हैं, उनके सम्मुख जाओ।" इसी प्रकार उन्होंने दो तीन बातें और कहीं। लोगों ने सोचा—"स्वामीजी का ध्यान साधुओं में है।" करीब एक मुहूर्त बीता होगा कि दो साधु तृषावस्था में पधारे। इन दो संतों में एक वेणीरामजी थे और दूसरे कुसालजी। वेणीरामजी का चातुर्मास पाली में था। स्वामीजी के संथारे का समाचार पाकर वे तुरन्त रवाने होकर सीधे वहाँ स्वामीजी के दर्शन के लिये पहुँचे थे। इस सारी घटना का वर्णन इस रूप में मिलता है :

> साधु आवे साहमां जावो, मुनी प्रकासें वांणं।
> वले साधवीयां आवें बारें, स्वांमी बोले वचन सुहांणं।
> भवीयण नमो गुर गिरवांणं, नमो भीखू चतुर सुजांणं॥
> के तो कह्यो अटकल उनमांनें, के कह्यो बुध प्रमाणं।
> के कोइ अवधि ग्यांन उपनो, ते जाणे सर्व नाणं। भवी०॥

१—भिक्खु दृष्टान्त : दृ० १६२
२—वही : दृ० १६३
३—वही : दृ० १६४
४—वही : दृ० १६५

केइ नर मुख सू इम भाखे, सांमी रा जोग साधां में वसीया।
एतलें एक महूर्त आसरे, साध आया दोय तसीया॥
वकसत वकसत साधु वांदे, चर्ण लगावे सीसं।
नरनारी जाण्यों अवधि उपनो, साचो वसवावीसं॥
सांमी साधु आया जांणी, मस्तक दीधो हाथं।
एतले दोय महुरत आसरे, आयो साधवीयां रो साथं॥
वेंणीरामजी साध वदीता, साथें कुसालजी आया।
साधवीयां वगतू जी मां डाही जी, प्रणमें भीखू रा पाया। भ०॥
परचा जूं जूं आय पुगे छे, नरनारी हरखत थावें।
धिन हो धिन थे मोटा मुनीसर, इम गुण भीख ना गावें[1]॥

दोनों संतों ने आकर स्वामीजी को वंदन-नमस्कार किया। स्वामीजी ने उनके मस्तक पर अपना हाथ रखा।

मुनि वेणीरामजी ने नाना प्रकार से स्वामीजी के गुण-वर्णन किये और उनके परिणामों को तीव्र करते हुए बोले :

रिख वेणीदास इन विनवें रे, थानें होज्यो सरणा चार।
तुम सरणो मुझ भव भव रे, होज्यो बारंबार। भी०॥
जिसोइ मारग जिन तणो रे, जिसोइ जमायो आप।
दिन दिन इधिका दीपिया रे, टाल्या घणां रा संताप। भी०॥
स्तुति अरिहंत सिध तणी रे, संभलाइ श्रीकार।
जांण्यो भगत कीहां थी भीखु तणी रे, इण अवसर मझार। भी०॥

मुनि वेणीरामजी ने स्वामीजी को शरणों का आधार दिया और अरिहंत देव और सिद्धों की स्तुति सुनाई। उन्होंने स्वामीजी का किस तरह गुण-गान किया इसकी झांकी निम्नोक्त रूप में प्राप्त है :

आया ते साधु गुण गावें, भांत-भांत प्रणाम चढ़ावें।
थे मोटा उपगारी मेहमा भारी, आप तुले ओर कुण आवें॥
थे पका पका पाखण्ड हटाया, सुत्र न्याय बताया।
दांन दया आछा दीपाया, बुधवंता मन भाया॥
सावद्य निरवद भला निवेंर्‍यां, कीधा बुध प्रमाणं।
सुत्र न्याय सरधा सुध लीधी, धारी अरिहंत आणं[2]॥

१—भीखू चरित १०. १-७

२—भीखू चरित १०. ८-१०

द्वितीय आचार्य भारीमालजी स्वामी ने भी आपका बड़ा सम्मान रखा। एक बार आप अनेक संतों के साथ आपके सम्मुख पधारे।

(२) कृति परिचय

इस कृति में कुल १३ ढालें हैं और प्रत्येक ढाल में दोहों के अतिरिक्त गाथाओं की संख्या १३ ही है। दोहों की संख्या इस प्रकार है :

ढाल		दोहा		गाथा
ढाल	१	दोहा	५	१३
,,	२	,,	५	१३
,,	३	,,	५	१३
,,	४	,,	७	१३
,,	५	,,	६	१३
,,	६	,,	१०	१३
,,	७	,,	५	१३
,,	८	,,	५	१३
,,	९	,,	५	१३
,,	१०	,,	५	१३
,,	११	,,	४	१३
,,	१२		५	१३
,,	१३	,,	५	१३
			७२	१६९

प्रथम कृति की तरह इसकी ढालें भी भिन्न-भिन्न रागिनियों में हैं।

इस कृति का रचना-स्थान बगड़ी और समाप्ति-काल सं० १८६० की फाल्गुन बदि १३ बृहस्पतिवार है :

> ए चिरत कियो छै भीखु अणगारनो, बगड़ी सहर मजार हो। महामुनि॥
> संवत अठारें साठा बरस में, फागण बिद तेरस गुरवार हो। महामुनि॥

इस कृति पर रचयिता का नाम मुनि वेणीदासजी लिखा है। उनका नाम वेणीरामजी ही सर्वत्र मिलता है पर उन्होंने स्वयं इस कृति में तीन स्थानों पर[1] अपने को वेणीदास लिखा है। इसीलिये हमने कर्त्ता का नाम इसी रूप में रखा है।

१—ढा० ११ दो० १ ; ढाल ११ गा० २ ; ढाल १३ गा० १३

कृति का संक्षिप्त सार : संक्षेप में प्रत्येक ढाल की विषय-वस्तु इस प्रकार है :

प्रथम ढाल के दोहों में मंगलाचरण के बाद कुल-परिचय, जन्म-स्थान और संवत् को देते हुये स्वामीजी के दीक्षा-ग्रहण करने तक का वर्णन है। बाद में आगमों के अध्ययन से स्वामीजी के मन में उस समय के साधु-जीवन के प्रति जिन कारणों से असंतोष उत्पन्न हुआ उनका संक्षिप्त उल्लेख है।

दूसरी ढाल के दोहों में स्वामीजी के मन में राजनगर चातुर्मास में जो विचार-क्रान्ति हुई और उन्होंने सत्य के निर्णय के लिए सर्व आगमों का बार-बार अध्ययन किया, उसका उल्लेख है। बाद में चातुर्मास की समाप्ति पर वे सोजत में आचार्य रुघनाथजी से मिले और जो चर्चा तथा वार्तालाप हुआ उसका वर्णन है। दूसरी बार बगड़ी में चर्चा हुई, जिसके फलस्वरूप स्वामीजी आचार्य रुघनाथजी के संघ से अलग हो गये, वहाँ तक का वर्णन इस ढाल में है।

तीसरी ढाल के दोहों में बगड़ी के क्षत्रियों में जो चर्चा हुई, उसका उल्लेख है। इसके बाद बड़लू की चर्चा का वर्णन है। फिर 'तेरापंथ' नाम कैसे पड़ा इसका वृत्तांत है। बादमें स्वामीजी ने केलवे में सं० १८१७ की आषाढ़ सुदी पूर्णिमा को जो नव दीक्षा ग्रहण की उसका वर्णन है। इस प्रथम चातुर्मास में जो संत साथ रहे उनका नामोल्लेख भी इस ढाल में मिलता है।

चौथी ढाल के दोहों में उत्तम श्रमण के लिये 'अनुयोगद्वार' और 'उत्तराध्ययन' में क्रमशः जो चौरासी और सोलह उपमायें दी हैं उनका उल्लेख कर ढाल में स्वामीजी के अनेक गुणों को उपमाओं द्वारा बड़े ही सुन्दर रूप में उपस्थित किया है। ये उपमायें कवि के आगम ज्ञान तथा असाधारण कवित्व-शक्ति को व्यक्त करती हैं।

पाँचवीं ढाल में शासन की उत्तरोत्तर वृद्धि का उल्लेख करते हुये स्वामीजी ने किन-किन देशों में विचरण किया उसका उल्लेख है तथा अन्तिम सिरियारी चातुर्मास के पूर्व के शेष काल के विहार का वर्णन है। इस अन्तिम सिरियारी चातुर्मास में स्वामीजी के साथ जो सन्त थे उनका नामोल्लेख है। स्वामीजी के श्रावण मास तक की शारीरिक अवस्था का वर्णन है।

छठी ढाल में भाद्र मास में हुई अस्वस्थता का वर्णन करते हुये पर्यूषण पर्व में तीनों समय किस प्रकार व्याख्यान होता रहा इसका उल्लेख है। स्वामीजी ने भाद्र सुदी चौथ को किस तरह 'आयु समीप आ गयी है' इसका संकेत दिया और संयम में साथ देनेवाले संतों की प्रशंसा की इसका वृतांत है। इसके बाद स्वामीजी ने जो शिक्षा दी उसका उल्लेख है।

सातवीं ढाल में भारीमालजी आदि संतों को बुलाकर स्वामीजी ने अपने अतीत साधु-जीवन के प्रति परम संतोष की जो भावना व्यक्त की उसका उल्लेख है। और बाद में संतों के साथ जो वैराग्यमयी बातें हुईं और स्वामीजी ने जो पुनः उपदेश दिया उसका वर्णन है।

आठवीं ढाल में स्वामीजी ने किस प्रकार से आत्म-आलोचना की उसका हृदयग्राही चित्रण है।

नवीं ढाल में स्वामीजी के संलेखना तप का वर्णन है।

दसवीं ढाल में स्वामीजी के संथारे का वर्णन है। संथारे पर किस तरह त्याग-प्रत्याख्यान हुए, संतों को किस प्रकार व्याख्यान और उपदेश देने को कहा इन प्रसंगों की चर्चा है। स्वामीजी ने अपने परिणामों की दृढ़ता के सम्बन्ध में जो बातें कहीं तथा अन्त में जो चार चरम बातें कहीं उनका उल्लेख है।

स्वामीजी की कही हुई बातें किस प्रकार मिलीं उनका वर्णन ग्यारहवीं ढाल में आया है। मुनि वेणीरामजी और कुसालजी ने दर्शन कर किस प्रकार गुणगान किये, स्वामीजी किस प्रकार पद्मासन लगाकर ध्यान मुद्रा में आसीन हुये और किस प्रकार इसी मुद्रा में उनका देहावसान हुआ, इसका वर्णन है।

बारहवीं ढाल में स्वामीजी के पन्द्रह गाँवों के चौवालिस चातुर्मासों की इतिवृत्ति है।

स्वामीजी ने एक सौ चार प्रव्रज्यायें दीं, लगभग अड़तीस हजार पद्यों की रचना की, इनका उल्लेख तेरहवीं ढाल में है।

कृति की विशिष्टता : इस कृति की कई ढालों को जयाचार्य ने 'भिक्खु जश रसायण' में उद्धृत किया है। यह कृति अनुपम भक्ति तथा वैराग्य रस से परिपूर्ण है। मुनि वेणीरामजी स्वामीजी के प्रमुख संतों में से एक थे। इस परिस्थिति में यह जीवन-चरित्र अधिकांशतः उनका आँखों देखा वर्णन है। अन्यत्र चातुर्मास होने पर भी संथारे के अवसर पर वे स्वामीजी के पास पहुँच गये थे और स्वर्गवास के समय उनके समीप रहे।

इस संग्रह में प्रकाशित मुनि हेमराजजी कृत 'भीखू चरित' और प्रस्तुत कृति को एक साथ पढ़ने से अनेक घटनाओं की परस्पर पूर्ति हो जाती है और स्वामीजी के जीवन का पूरा चित्रण मिल जाता है। दोनों ही कृतियाँ साहित्यिक प्रभा से परिपूर्ण हैं। मुनि हेमराजजी और आप दोनों ही कवि उस समय के साहित्यिक संतों में अग्रस्थान रखते थे। आपकी अन्य कृतियाँ तो उपलब्ध नहीं हो सकीं। इसलिये प्रसंगवश भी हम उनका संक्षिप्त परिचय नहीं दे पा रहे हैं। 'बीस बहरमान' की ढाल जो कि सं० १८५९ के चातुर्मास में रचित है, सम्भवतः आपकी ही कृति है। इस ढाल को 'तेरापंथ आचार्य चरितावलि' के द्वितीय खंड में मुनि हेमराजजी रचित बतलाया गया है परन्तु यह भूल है। कारण यह है कि १८५९ में मुनि हेमराजजी का चातुर्मास सिरियारी में था, पीसांगण में नहीं जहाँ यह ढाल रची गई थी।

प्रकाशन : यह कृति 'शिशुहित शिक्षा' (द्वितीय भाग) में संवत् १८८२ में प्रकाशित हुई थी। प्रस्तुत प्रकाशन तृतीय आचार्य ऋषि रायचन्दजी की हस्तलिखित प्रति से मिलाकर किया गया है।

३ : भिक्खु जश रसायण

(१) रचयिता का परिचय

श्रीमद् जयाचार्य का जन्म-नाम जीतमलजी था। आपने अपनी कृतियों में अपना उपनाम 'जय' रखा इसलिए आप जयाचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। आप जाति के ओसवाल गोलेछा थे। आपके पिताजी का नाम आईदानजी गोलेछा और माता श्री का नाम कलूजी था। आपका जन्म मारवाड़ राज्य के रोयट ग्राम में सं० १८६० के आश्विन सुदी १४ को रात्रि-बेला में हुआ था। आपके सबसे बड़े भाई का नाम सरूपचन्दजी और उनसे छोटे भाई का नाम भीमराजजी था। आपके पिताजी का देहान्त आपके प्रव्रजित होने के पहले ही हो चुका था।

(१) दीक्षा : सं० १८६९ में आचार्य भारीमालजी का चातुर्मास जयपुर में हुआ। अस्वस्थता के कारण आप फाल्गुन तक वहीं विराजे। जीतमलजी की दीक्षा इसी साल माघ बदी ७ को हुई। आपके बड़े भाई सरूपचन्दजी इसी साल पौष सुदी ९ के दिन दीक्षा ले चुके थे। दूसरे बड़े भाई भीमराजजी की दीक्षा आपके बाद मिती फाल्गुन बदी ११ को हुई और इसी दिन आपकी माता कल्लूजी ने भी दीक्षा ले ली। इस तरह पौष सुदी ९ से लेकर फाल्गुन बदी ११ तक करीब डेढ़ महीने के भीतर सारा परिवार दीक्षित हो गया।

जीतमलजी महाराज की बुआ अजबूजी पहले से ही दीक्षित थीं। इनकी दीक्षा श्रीमद् आचार्य भीखणजी स्वामी के शासनकाल में सं० १८४४ में हुई थी। ४२ वर्ष की दीक्षा-पर्याय के बाद सं० १८८६ में इनका देवलोक हुआ। इनके विषय में पुरानी ख्यात में लिखा है : "भणी गुणी पक्की विनयवंत।" उज्जैन क्षेत्र में धर्म-प्रचार आपने ही किया। उपर्युक्त वर्णन से पाठकों को सहज ही मालूम होगा कि श्रीमद् जयाचार्य का जन्म कैसे दृढ़ धर्मनिष्ठा-सम्पन्न कुल में हुआ था।

श्रीमद् जयाचार्य की दीक्षा द्वितीय आचार्य भारीमालजी के शासनकाल में ऋषि रायचन्दजी के हाथ से हुई थी। उनके हाथ से सर्व प्रथम दीक्षा आपकी ही हुई। आप चतुर्थ आचार्य हुए और अन्तिम दीक्षा मुनि मघराजजी की हुई जो पंचम आचार्य हुए।

(२) शिक्षा और अध्ययन : दीक्षा के बाद आप शिक्षा के लिए मुनि हेमराजजी को सौंपे गये। वे ही आपके विद्या-गुरु थे। उनके चरणों में रहकर अल्पकाल में ही आपने अपूर्व आत्मज्ञान प्राप्त किया। आपने अपने विद्या-गुरु की अध्यापन-शक्ति का वर्णन करते हुए एक जगह कहा है—"उनमें बिन्दु को सिन्धु करने की शक्ति थी।" दूसरी जगह कहा है—"हेमराजजी सच्चे हेम—पार्श्व थे। उनके संसर्ग से ही अपूर्व गुण आ जाते थे।" ऐसे अद्भुत उपाध्याय से शिक्षा पाकर आप भी एक महान् विचक्षण पुरुष निकले।

(३) बाल विचक्षण : बाल्यावस्था से ही आप एक असाधारण प्रतिभावान साधु थे। आपकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। आपमें सहज अध्यात्म था। आप बड़े परिश्रमी थे और स्वाध्यायी भी। आपका हृदय बड़ा गुणग्राही था। पुरानी बातों के संग्रह का आपको बाल्यावस्था से ही बड़ा शौक था। अपने विद्या-गुरु मुनि हेमराजजी से पुरानी बातों को ग्रहण कर आपने अपने पूर्व तीन आचार्यों के शासन-काल के इतिहास को बहुत सुन्दर रूप से ग्रंथ-बद्ध किया।

आपकी दीक्षा केवल ६ वर्ष की अवस्था में हुई थी। आपकी ११ वर्ष की अवस्था की बात है। आप अपने विद्या-गुरु मुनि हेमराजजी के साथ पाली में विराज रहे थे। सड़क पर खुलती हुई एक हाट में ठहरे हुए थे। हाट के सामने ही एक सोनार की दूकान थी। एक बार एक खिलाड़ी उस रास्ते में आकर अनेक तरह के खेल दिखाने लगा। खेल देखने के लिए बूढ़े-बूढ़े लोग भी आकर जमा हो गये। सोनार की हाट भर गई। आप उस समय कुछ लिख रहे थे। खेल के ढोल आदि बजते रहने पर भी आपने लिखने में ही अपना ध्यान एकाग्र रखा। बालक होने पर भी खेल की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। एकध्यान—एकचित्त से अपना कार्य करते रहे। बालक साधु की इस अपूर्व और आश्चर्यकारी एकाग्र-वृत्ति को देख कर सोनार की हाट में बैठा हुआ एक वृद्ध अचंभित हो रहा था। वह अपने साथियों से बोला—"इस सम्प्रदाय की नींव १०० वर्ष की तो पड़ गई।" जब साथियों ने उसकी इस बात का रहस्य पूछा तो उसने जवाब दिया—"जिस सम्प्रदाय में ऐसे उत्कट वैरागी बालक संत हैं, उसे चिरायु ही समझो। जिस खेल को देखने के लिए हम लोग बड़े-बूढ़े ललचा गए, उसे देखने के लिए इस बालक ने मुँह तक नहीं फेरा, कितनी आश्चर्यजनक एकाग्रता है इस बालक साधु की!" इस एकाग्र-वृत्ति ने आपके जीवन में महान् गुण पैदा कर दिए। आपकी वृत्तियाँ शुरू से ही जो अध्यात्म और तत्त्वज्ञान की ओर झुकीं सो अन्त तक उत्तरोत्तर अधिक प्रतिभा के साथ अपना प्रकाश फैलाती रहीं। अध्यात्म की इस अखण्ड एकाग्र साधना के कारण ही आप 'योगिराज' कहलाये। आप बाल रवि की तरह उत्तरोत्तर तेज और ज्ञान से दीप्त हुए। आपने गण को केवल १०० वर्ष की आयु ही नहीं दी परन्तु अपने यशस्वी आचार्य-काल में उसकी कीर्ति दिग्दिगंत में फैला कर एवं भविष्य के लिए अमर साहित्य की विरासत छोड़ कर उसे अमर बना दिया।

बाल्यावस्था से ही आपमें हिम्मत और साहस भी खूब था। श्रीमद् आचार्य भारीमालजी भावी आचार्य-पद के लिए दो संतों के नाम लेते—खेतसीजी और रायचन्दजी। वृद्ध हो चुकने पर भी उन्होंने युवराज नहीं बनाया। संतों की इच्छा हुई कि एक नाम निर्धारित करने के लिए अर्ज की जाय। पर किसी की हिम्मत नहीं पड़ती थी कि आचार्य श्री से जाकर यह अर्ज करे। आपने जब यह सुना तो अर्ज करने का भार तुरन्त अपने ऊपर ले लिया। आपने अपना चोल पट्टा कमर में कस लिया और अन्य संतों के आगे हो अर्ज करने के लिए आचार्य श्री के सम्मुख आकर खड़े हो गये। बालक साधु की इस वेष-सज्जा को देख कर आचार्य श्री हँसने लगे

और अर्ज करने की आज्ञा दे दी। इस पर आपने निर्भीकता और निःसंकोच भाव से एक भावी 'पट्टधर' घोषित करने की आवश्यकता की अर्ज विनम्र शब्दों में की। जो कार्य वयःप्राप्त संतों को करना कठिन हो रहा था, उसे आपने सहज साहस से कुशलतापूर्वक कर दिखाया। बाल्यावस्था से ही आपमें असाधारण ओज और प्रतिभा थी।

आपमें ११ वर्ष की अवस्था में ही कवित्व शक्ति का प्रादुर्भाव हो गया और वह अपनी असाधारण छटा दिखाने लगी। आप एक संस्कारी कवि थे। यह प्रतिभा आगे जाकर बड़े ही अद्भुत रूप से चमकी। आप अपनी रचनाओं में तत्त्वज्ञान और अध्यात्मरस की स्रोतस्विनी बहा गए।

(४) **उत्तरोत्तर उत्कर्ष :** दीक्षा के बाद १२ वर्ष तक आप निरन्तर हेमराजजी महाराज के सिंघाड़े में रहे और इन वर्षों में घोर परिश्रम कर आपने गहरा विद्याध्ययन किया। पन्नवणा सूत्र तात्त्विक दृष्टि से बड़ा ही गम्भीर और कठिन सूत्र है। आपने १८ वर्ष की अवस्था में तो इस सूत्र का राजस्थानी भाषा में पद्यानुवाद ही शुरू कर दिया।

आपकी अपूर्व प्रतिभा, पाण्डित्य, व्यवस्था-शक्ति और वाङ्मयता को देख कर तृतीय आचार्य ऋषि रायचन्दजी ने आपको सं० १८८१ के पौष सुदी ३ को पाली में सिंघाड़पति बना दिया। उस समय आपकी अवस्था केवल २१ वर्ष की थी।

आपकी माता श्री सती कल्लूजी का देहावसान सं० १८८७ के सावन सुदी १३ को खेर गांव में हुआ। आपको एक पहर का संथारा आया। आर्या कल्लूजी के देहावसान के समय आपकी उमर २७ वर्ष की थी।

आपको सं० १८९३ में युवराज पदवी प्रदान की गई। उस समय आपकी अवस्था केवल ३३ वर्ष की थी।

(५) **विद्या-रसिकता :** सं० १९०३ में मुनि श्री हेमराजजी के साथ आपका चातुर्मास श्रीजीद्वार में हुआ। इसी चातर्मास में मुनि हेमराजजी ने भीखणजी स्वामी के विविध दृष्टान्त और संस्मरण आपको सुनाये और आपने उन्हें लिपिबद्ध किया। दृष्टान्त और संस्मरणों का यह संग्रह आज एक अनमोल धरोहर है और स्वामीजी की बहुमुखी विशेषताओं पर अपूर्व प्रकाश डालता है। आप एक जन्मसिद्ध इतिहासकार थे। आपने गण सम्बन्धी पुरानी बातों को संग्रहीत कर बड़े ही प्रामाणिक रूप से अपनी कृतियों में भर सदा के लिये उन्हें सुरक्षित कर दिया है।

सं० १९०४ में आपका चातुर्मास जयपुर में था। चातुर्मास के बाद भीलाड़े होते हुए केलवे पहुंच आपने मुनि हेमराजजी के दर्शन किए। इस प्रसंग का उल्लेख करते हुए आपने स्वयं लिखा है :

विविध जूनी वारता होजी हेम लिखाइ ताय
हेम ज्ञान गुण पोरसो काँई समुद्र जेम शोभाय

इस प्रसंग से यह प्रकट है कि आप पुरानी बातों की बराबर खोज करते रहते थे और जब कभी मौका मिलता तो वे ऐसी बातों को लिख लेते। हेमराजजी महाराज भी अपना समुद्र-सा अगाव ज्ञान अपने इस गुणवान शिष्य को मुक्त-हस्त से देते थे। वास्तव में आप उन्हींकी अनन्य कृति थे। आपकी सहज प्रतिभा ऐसे अद्वितीय विद्या-गुरु को पाकर ही अपूर्व छटा के साथ मुखरित हो सकी थी। अपने विद्या-गुरु की महान् ज्ञान वारिधि को आप अगस्त्य ऋषि की तरह पी गए थे। आप महान् मेवावी थे। आप जैसी धारणा-शक्ति विरले ही व्यक्ति को होती है। आपमें जिज्ञासु वृत्ति बहुत थी और मुनि हेमराजजी में बताने की। एक अपनी जिज्ञासु वृत्ति और विनय वृत्ति से आदर्श शिष्य थे और दूसरे बताने की उदारता और ज्ञान पारमिंतता से महान् गुरु। एक बताने में वृहस्पति थे और दूसरे ग्रहण करने में। मुनि हेमराजजी के अन्तिम दिनों की घटनाओं से गुरु-शिष्य दोनों की इस प्रवृत्ति पर और भी अधिक प्रकाश पड़ता है।

सं० १९०५ के जेठ महीने में मुनि हेमराजजी सिरियारी पधारे और जेठ बदी १३ के दिन से वे बीमार रहने लगे। आप एक दिन बाद जेठ बदी १४ को सिरियारी पहुंचे। १३ के दिन मुनि हेमराजजी को श्वास का दौरा आ चुका था तो भी १४ के दिन उन्होंने आपसे नाना तरह की महत्त्वपूर्ण बातें की। १४ की रात में श्वास का विशेष प्रकोप रहा और फिर १५ की रात में भी दौरा आया। जेठ सुदी १ के प्रातःकाल फिर चैन हुआ। साता होते ही फिर गुरु-शिष्य में अनेक संवाद हुए। आपने इस संबंध में लिखा है :

> रात्री श्वास फिर बधियो, एकम दिन प्रभात।
> फिर साता हुई स्वाम रे, बातां करी विख्यात॥

इस वार्तालाप में एक पहर दिन चढ़ गया था।

इसी वार्तालाप के प्रसंग की एक बात इस प्रकार है: आपने मुनि हेमराजजी से कहा—"यदि आपके साता हो जाय तो इस वर्ष १५ संतों से सिरियारी में चातुर्मास करें। यदि आहार की कमी रहेगी तो श्रावण और भाद्र मास में हम कई संत एकान्तर कर लेंगे। आश्विन कार्तिक में जब रास्ते साफ हो जायेंगे तो आस-पास के अन्य गांवों से गोचरी कर ली जायगी।" यह सुन कर मुनि हेमराजजी बड़े ही हर्षित हुए। बोले—"मैं भी ३१ उपवास कर लूंगा। तुम लोगों ने यह बात बहुत अच्छी विचारी।"

आप मुनि हेमराजजी के पास रह कर अनेक बातें धारण करना—हासिल करना चाहते थे और इसके लिए एकान्त उपवास करने तक के लिए तैयार थे। यह आपकी विद्यारसिकता थी। आपके जीवन का यह प्रसंग ज्ञानार्जन के लिए आपकी उत्कट इच्छा और कठोर साधना का एक ज्वलंत उदाहरण है।

ज्येष्ठ सुदी प्रतिपदा के दिन तीसरे पहर मुनि हेमराजजी के श्वास का प्रकोप अधिक हो गया। चौथे पहर कम हुआ तो फिर अनेक तरह की बातचीत हुई। रात में व्याख्यान के बाद

अनेक त्याग-वैराग्य की बातें हेमराजजी महाराज ने बतलाईं। शिष्य किस तरह ज्ञान-तृषित और गुरु किस तरह ज्ञान-उदार था—यह उपरोक्त प्रसंगों से साफ प्रकट होगा।

इस तरह ज्ञानार्जन कर आप प्रकांड पण्डित हुए। आपने सं० १६०० में चौबीस तीर्थंकरों की २४ स्तुतियाँ रचीं, जो 'जिन-चौबीसी' के नाम से प्रसिद्ध हुईं। मुनि हेमराजजी ने अपनी अस्वस्थता में यह अभिग्रह लिया कि रोग मिटते ही वे चौबीसी कण्ठस्थ करेंगे। यह घटना आपके लिए बड़ी गौरवास्पद है। विचक्षण, महापण्डित गुरु के मुख से अपने ही शिष्य की कृति कण्ठस्थ करने की बात शिष्य के लिये अवश्य ही एक बड़ी-से-बड़ी कीर्ति की बात है। आप ऐसी कीर्ति के भाजन हुए, यह आपके पाण्डित्य और विद्या-रसिकता की यशोगाथा है।

आप बड़े ही स्वाध्याय प्रेमी थे। सभी सूत्रों का आपने कई बार आद्योपान्त गहरा अध्ययन किया। सूत्र-स्पर्शी टीका आदि सर्व ग्रन्थों का मनन कर आपने अपने पाण्डित्य को बड़ा ही गंभीर बना लिया था। ग्रंथ अवलोकन आपका एक व्यसन-सा था। यह सुनने में आता है कि आपने प्रायः एक पहर से अधिक नींद नहीं ली। सर्व संतों के सो जाने के बाद प्रायः एक पहर बाद सोते और एक पहर रात्रि रहते उठ जाते। प्रभात के पूर्व के एक पहर में आप चिन्तन करते। रोज ५००० गाथाओं की आवृत्ति का आपने नियम-सा कर रखा था। ऐसे ही सतत अनुशीलन से आपका बहुश्रुतित्व अजोड़ हो गया था।

आप रागिनियों के राजा थे। शुद्ध राग को बहुत पसन्द करते थे। आपकी कृतियाँ प्रसिद्ध रागिनियों में हैं। उनमें अमृत की तरह मधुर रस भरा हुआ है। जब कोई राग शुद्ध नहीं बैठता या कोई राग सीखना होता तो आप अच्छे-से-अच्छे जानकार से उसे ग्रहण करते। इस गुणग्राहिता के कारण ही आप अद्भुत मधुर गानमय ढालें दे सके। आपकी कृतियाँ प्रसाद गुण से ओत-प्रोत हैं।

संस्कृत अध्ययन की आपकी बड़ी इच्छा रहती। जब कभी संस्कृतविद् पण्डित का संसर्ग होता तो आप उससे पूछने की बात पूछ लेते। इसी तरह संस्कृत अध्ययन कर आपने जैन-सूत्रों की संस्कृत टीका आदि को अच्छी तरह समझने का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आपकी राजस्थानी भाषा की रचनाओं में संस्कृत का बड़ा प्रभाव दिखाई देगा।

(५) विद्या-गुरु से उऋण : अन्तिम समय में आपने अपने विद्या-गुरु को बड़ा ही सहारा पहुँचाया। जेठ सुदी १ की रात्रि के पिछले पहर के समय आपने मुनि हेमराजजी को आलोचना कराने की सोची। आपने सोचा :

ऋषि जीत मन में विचारियो हो, आऊखारी खबर न काय।
हिवड़ा तो बहम दिसे नहीं हो, तो पिण व्रत देऊँ उचराय॥

यह घटना आपकी दूरदर्शिता का बड़ा अच्छा परिचय देती है।

यह विचार कर आपने बड़े ही सुन्दर ढंग से व्रतोच्चारण करवा कर मुनि हेमराजजी से आत्मालोचना करवाई। आत्म-शुद्धि किस तरह की जानी चाहिये—जैसे आप उसके एक

धुरन्धर विशेषज्ञ हों। आप आत्म-भावनाओं को निर्मल करने की कला में पारंगत थे।

उपरोक्त आलोचना के बाद मुनि हेमराजजी और आपमें बड़ा ही रसप्रद और वैराग्य-भावपूर्ण वार्तालाप हुआ। विस्तार का भय होते हुए भी उसे ज्यों-का-त्यों यहां उद्धृत करने का लोभ-संवरण नहीं किया जा सका है :

हेम कहै आज रात का हो, अजक रही घणी ताय।
तिण सूं निद्रा पिण पूरी आई नहीं हो, इम कहे जीत नें बाय॥
बलि जीत कहै स्वामी हेम नें हो, सांभलज्यो महाराज।
या वेदन सम परिणामाँ सह्याँ हो, योहिज तप समाज॥
ठाणाअंग चौथे ठाणे तणो हो, पाठ कह्यो तिण वार।
कष्ट वेदना आयाँ छताँ हो, इम चिन्तवे अणगार॥
तीर्थंकर वेदन सहे समपणे हो, त्याँरो शरीर रोग रहित।
ते पिण लेवे कष्ट उदरीने हो, घोर तप करे हर्ष सहित॥
तो कष्ट लोचादिक रोग नो हो, हूँ किम न सहूं समचित जाण।
सम परिणामा भोगव्याँ बिनां हो, एकन्त पाप पिछाण॥
कष्ट लोचादिक तथा ब्रह्मचर्य नो हो, तथा रोगादिक वेदन जाण।
सम परिणामां भोगव्यां हो, एकंत निर्जरा पिछाण॥
इण विध साधु चिन्तवे हो, कह्यो ठाणा अंग मझार।
हेम नें सर्व सुणाविया हो, पाम्या हर्ष अपार॥
बले उत्तराध्ययन पांचमें ध्ययने हो, सकाम मरण अधिकार।
गाथा सुणाई हेमने हो, अर्थ सहित विस्तार॥
मरण आयाँ थकाँ महामुनि हो, राखे अधिक उमेद।
भय करी रूंम उभा करे नहीं हो, बंछे शरीर नो भेद॥
शीलवन्ता जे बहुश्रुति हो, मरण थी त्रास न पाय।
पहिलाँ प्रणाम हुंताँ जिसा हो, अन्त समय अधिकाय॥
तप सूं शरीर बिखेरने हो, सकाम मरण मरे जाण।
पादुगमण इंगत मरण सूं हो, अथवा भत्त पचखाण॥
उत्तराध्येन पाँचव मझे हो, एम कह्यो वर्द्धमान।
हेम सुणी हर्ष्या घणा हो, वैराग रस गलतान॥
बलि जीत कहै स्वामी हेम ने हो, जिन कल्पी अणगार।
ते लेवे कष्ट उदीरने हो, भय नहीं आणे लिगार॥
आंख थी फांटो काढ़ै नहीं हो, कांटो पग थी न काढंत।
घणो कष्ट लेवे उदीरनें हो, जिनकल्पी महा सन्त॥

इसी वेदना तो दिसे नहीं हो, जब हेम बोल्या इम बाय।
इसी वेदना तो म्हांरे नहीं हो, जिनकल्पी सरिषी ताय॥
मेघ सरिषा महामुनि हो, कियो पादोगमन संथार।
ते आँख पिण टमकारे नहीं हो, एक मास तांई इकधार॥
ए तन महीना पछे ही छोड़णो हो, तो जाण्यो महीनां पहली छोड़ाँ एह।
खोली में जीव छताँ शरीर नी हो, सार संभाल तजेह॥
इसा कष्ट सह्या छै महामुनि हो, ते वेदन नें तुच्छ जाण।
हेम सुणी हर्ष्या घणा हो, संवेग रस गलताण॥
ए मरण छै सो तो मोछव अछे हो, छूटे अशुच तन एह।
शोच करे किण बात रो हो, आछी वस्तु नहीं छै जेह॥
आगे असंख्याता काल में हो, इसा कष्ट तणो नहीं काम।
नींव लागे शिवपुर तणी हो, तिण सूं मृत्यु मोछव अभिराम॥
हेम हर्ष धर पूछियो हो, मृत्यु मोछव है ताम।
जीत कहै मृत्यु मोछव सही हो, पण्डित मरण सकाम॥
ए शरीर विणसे सही हो, तिण रो तो इचरज नांय।
इता वर्ष रह्या इहां हो, इचरज एह कहिवाय॥
देश तणा मनुष्य आयने हो लाख मनुष्य भेला हुआ जाण।
एक मास रही मेलो बिखर्यो हो, गया आपरे ठिकाण॥
ते मनुष्य बिखरिया तेहनो हो, अचरज नहीं छै लिगार।
एक मास तांई भेला रह्या हो, इचरज ए अवधार॥
अनन्त परमाणु भेला थई हो, शरीर बन्ध्यो छै एह।
इता वर्ष भेला रह्या हो, हिव विणसे छै तेह॥
पुद्गल रो गलण मिलण सभाव छै हो, बिणसे तिणरो इचरज नांय।
इता वर्ष ए पुद्गल रह्या हो, इचरज ते कहिवाय॥
तिण कारण ए तन छुटे तेहनो हो, सोच नहीं छै लिगार।
इत्यादिक घणी बाताँ सुणी हो, हेम पाम्या बैराग अपार॥
घणो हर्ष धरी नें इम कहै हो, सुण सुण रे सतीदास।
सांभल बैराग नी बारता हो, बलि कहै जीत विमास॥
सुचिन्ना कम्मा सुचिन्ना फला हो, भली करणी रा भला फल होय।
दुचिन्ना कम्मा दुचिन्ना फला हो, भूंडी करणी रा भूंडा फल जोय॥
इम सुण हेम बोल्या तदा हो, इम कहतो जयपुरवालो जाण।
देख जीतमल ग्रहस्थ स्याणा किस्या हो, किसी विचारणा पिछाण॥

यह पिछली रात का प्रसंग है। सूर्योदय के बाद आपने जो काम किया, उसका वर्णन इस प्रकार है :

सतीदासजी आद साधाँ भणी हो, जीत बोल्या इम वाय।
आपाँ दिसाँ जाय पाछा आयने हो, औषध देवाँला ताय॥
इम कही हाठ थी उतस्या हो, ओढ़ी पछेवड़ी जीत।
ओघो लेई दिसाँ नें त्यारी थया हो, साधु आय उभा सुवदीत॥
बलि जीत मनमें विचारियो हो, स्वामी दिसाँ पधास्या ताय।
खेद थी साँस वधे कदा हो, तो औषध देई पछे दिसाँ जाय॥
इम चिन्तव बेठो हाठ नें विषे हो, स्वामी दिसाँ जाय सुरीत।
पाछा वैठा बाजोट ऊपरे हो, इतले आयो आउखो अचिन्त॥
तन माँहीं परसेवो घणो हो, बाध्यो साँस अशेष।
बैठा बाजोट ऊपरे हो, उटिंगण बिना संपेख॥
हाथ सूं सानी करी तदा हो, अमल मांग्यो जीत पास।
जीत दियो अमल हाथ में हो, आप मुख मांही म्हेल्यो बिमास॥
मुख में म्हेलनें चिगलताँ हो, पुद्गल हीणा पड्या पेख।
अणसण जीत उचरावियो हो, स्वामी शुद्ध विवेक॥
ऋष जीत कहै स्वामी आपने हो, होज्यो शरणा च्यार।
अरिहन्त सिद्ध साधु धर्म नो हो, कहै ऊँचे स्वर विस्तार॥
बले बैराग्यनी बारता हो, सुणावे विविध प्रकार॥
थोड़ी वेल्याँ रो कष्ट रह्यो अछे हो,भारी सुख पामता दिसो सार॥
पछै च्यारु ही आहार पचखायनें हो, बलि दे शरणा सुखसाज।
आसरे घड़ी में चलता रह्या हो, हेम जाणे गजराज॥
ऋष सतीदास कर्मचन्द नें हो, हस्त सहारे मुनि हेम।
समाधि मरण लह्यो भलो हो, निर्मल ज्याँरा नेम॥

उपर्युक्त प्रसंग से आपके जीवन के कई पहलुओं पर बड़ा सुन्दर प्रकाश पड़ता है। आप कितने गहरे आत्मज्ञानी थे—यह उपर्युक्त घटना से साफ प्रकट है। आप एक सेनापति के रूप में प्रकट होते हैं जो घोर संग्राम के समय भी पौरुष और वीरता को कायम रख सकता है। आपने मृत्यु को महा महोत्सव और जीवन को एक मेला—पुद्गलों का संयोग—बतलाया है। आपने अपने उपदेश से अपने विद्या-गुरु के हृदय में संवेग-रस की स्रोतस्विनी बहा दी। उस वेदना के समय भी वैराग्योत्पादक बातों के चमत्कारपूर्ण वर्णन से मुनि हेमराजजी का रोम-रोम हर्षित कर दिया। आप एक वैरागी कवि और अनूठे आत्मज्ञानी थे। आप सूत्रों के महान् अध्ययनकर्ता और अध्यात्म-रस के निर्झर थे। घटनाओं का हूबहू वर्णन आपकी लेखनी के लिए एक सहज

बात थी। जैसे भाव और राग आपकी कलम की नोंक के इशारे पर नाचा करते। आप एक महान् धन्वन्तरि वैद्य थे जो आत्मिक कष्टों को हरण कर परम सुख की धारा बहा देते।

आपके हृदय में कृतज्ञता का भाव कूट-कूट कर भरा था। जिस महान् गुरु ने आपको महान् बनाया उसके प्रति आपने जो श्रद्धांजलि अर्पित की है वह अपूर्व है। आप एक जगह कहते हैं :

मुनिवर रे मो सूं उपकार कियो घणो रे, कह्यो कठा लग जाय हो लाल।
निश-दिन तुझ गुण संभरुं रे, वस रह्या मो मन मांय हो लाल॥
मु० रे सुपने में सूरत स्वाम नी रे, पेखत पामें प्रेम हो लाल।
याद कियाँ हियो हुलसे रे, कहणी आवै केम हो लाल॥
मु० रे हूं तो विन्दु समान थो रे, तुम कियो सिन्धु समान हो लाल।
तुम गुण कबहु न विसरुं रे, निश दिन धरुं तुझ ध्यान हो लाल॥
मु० रे साचा पारश थे सही रे, कर देवो आप सरिस हो लाल।
बिरह तुम्हारो दोहिलो रे, जाण रह्या जगदीश हो लाल॥
मु० रे जीत तणी जय थे करी रे, विद्यादिक विस्तार हो लाल।
निपुण कियो सतीदास ने रे, बलि अवर सन्त अधिकार हो लाल॥
मु० रे स्वाम गुणा रा सागरु रे, किम कहिये मुख एक हो लाल।
ऊंडी तुझ आलोचना रे, बारूं तुझ विवेक हो लाल॥
मु० रे अखण्ड आचार्य आगन्याँ रे, तैं पाली एकण धार हो लाल।
मान मेट मन बश कियो रे, नित्य कीजे नमस्कार हो लाल॥

अपने विद्या-गुरु के देहान्त के बाद आपने उनका नव रस पूर्ण एक सुन्दर काव्य चरित लिखा है। यह चरित-ग्रन्थ साहित्यिक दृष्टि से बड़ा ही अनोखा है। मुनि हेमराजजी के परलोक गमन के करीब २ महीने के बाद अर्थात् सं० १९०५ के श्रावण बदी ११ को आपने इसे जयपुर में सम्पूर्ण किया। आप चरित लेखन में बेजोड़ थे। आप एक महान् इतिहासकार थे जो सूक्ष्म से सूक्ष्म बात को भी सम्पूर्ण ब्यौरे के साथ लिख लेने की असाधारण प्रतिभा रखते थे।

(७) शासन-काल और प्रचार क्षेत्र : आचार्य श्रीमद् रायचन्दजी महाराज का देहावसान मिती माघ सुदी १४ को हुआ और उसके दूसरे दिन अर्थात् सं० १९०८ साल की माघ सुदी १५ वृहस्पतिवार को प्रातःकाल पुष्य नक्षत्र में आप शासनाभिरूढ़ हुए। आपने करीब ३० वर्ष तक शासन-भार वहन किया। तीस वर्ष के इस शासन-काल में आपने अनेक प्रदेशों में भ्रमण किया। मारवाड़, मेवाड़, मालवा, कच्छ, गुजरात, हरियाना, दिल्ली, हाडोती, ढूंढाड़, थली आदि प्रदेश आपके विहार-स्थल रहे। आपके शासन-काल के चातुर्मासों की विगत इस प्रकार है:—

स्थान	चातुर्मासों की संख्या	सम्वत्
जयपुर	४	१६०६,२८,३७,३८
नाथद्वार	१	१६१०
रतलाम	१	१६११
उदयपुर	१	१६१२
पाली	२	१६१३,२२
बीदासर	८	१६१४,१७,२३,२६,२६,३०,३५,३६
लाडनूं	६	१६१५,१८,२७,३२,३३,३४
सुजानगढ़	४	१६१६,१६,२४,३१
चूरू	१	१६२०
जोधपुर	२	१६२१,२५

इस दीर्घ शासन-काल में आपने धर्म का बड़ा ही उत्थान किया। हजारो गृहस्थों को श्रावक-व्रत धारण करवाया। सहस्रों को सुलभ बोधि किया। आपके शासनकाल में १०५ साधु और २२४ साध्वियों की दीक्षा हुई। उस समय सतियों में मुखिया साध्वी सरदारांजी थीं।

(८) महाप्रयाण : आपका ३० वर्ष व्यापी सुदीर्घ शासन-काल बड़ा ही जयवंत रहा। आपके शासन-काल में अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटीं। आपका यश अनेक देश-प्रदेशों में फैला। तात्कालिक जयपुर नरेश श्रीमान् महाराज मानसिंहजी आपको अपना गुरु मानते थे। इनमें वेश बदल कर रात में गस्त लगाने की आदत थी। जब कभी श्रीमद् जयाचार्य जयपुर में विराजते तो रात के समय गुप्त वेष में आप दर्शनार्थ पहुँच जाते। एक बार द्वारपाल को सन्देह हुआ और उसने जयपुर के प्रसिद्ध श्रावक लालाजी को खबर दी। दूसरी बार जब महाराज फिर दर्शन करने के लिए आये तो लालाजी भेंट लेकर द्वार के पास खड़े हो गये और उनके वापस जाने की प्रतीक्षा करने लगे। जब महाराज लौटने लगे तो उन्होंने उनके सम्मुख भेंट उपस्थित की। उस समय महाराज साहब ने कहा—"यहां यह भेंट कैसी? मैं तो यहां गुरु-दर्शन के लिए आया हूं। दिन में कई विचार रहते हैं इसलिए रात का अवसर निकालता हूं।" यह कह कर उन्होंने भेंट लेना अस्वीकार कर दिया।

आपका अन्तिम चातुर्मास जयपुर में हुआ। श्रावण मास में आपको अन्न-अरुचि हो गई। गले में गाँठ निकल आई और दस्त की शिकायत रहने लगी। भाद्र मास में ये शिकायतें और बढ़ गई। अब आपको अंत समीप दिखाई देने लगा। भाद्र सुदी ५ और ६ को आपने स्वमुख से आलोचना की, उच्च स्वर में चौरासी लाख जीव योनियों से खमतखामणा कर व्रत आरोपण और दुष्कृत निन्दा की। चारों शरणों का आधार लिया। वेदना को आप बड़े ही समभाव से सहन कर रहे थे। दशमी की शाम को जल उपरांत सागारी अनशन कर दिया। द्वादशी को दोपहर से कुछ पहले पट्टवर मघराजजी से जीवन पर्यन्त के लिए तिविहारी संथारा ग्रहण किया और अन्त समय में चौविहारी संथारा। सं० १६३८ के भादव बदी १२ को सायंकाल आप देवलोक सिधारे।

जयपुर शहर में चाँदपोल नामक स्थान है। वहाँ से केवल जयपुर दरबार की ही रथी निकल सकती थी। बैकुण्ठी भी राजकुल की ही निकल सकती थी। जयाचार्य के महाप्रयाण के कुछ दिन पूर्व ही लालाजी—भैरुलालजी का स्वर्गवास हो चुका था। उधर जयपुर नरेश श्रीमान् मानसिंहजी का भी देहान्त हो चुका था। लालाजी की धर्मपत्नी ने महारानी से मिल कर यह बात बतलाई कि दिवंगत महाराज जयाचार्य को किस तरह धर्मगुरु मानते थे। महारानीजी को सारी बातें मालूम थीं। उन्होंने कहा—"जो महाराज के धर्मगुरु थे वे हमारे भी धर्मगुरु हैं।" उन्होंने चाँदपोल से जयाचार्य की बैकुण्ठी निकालने का हुक्म दे दिया। बड़ी ही सुन्दर बैकुण्ठी में रथी निकाली गई। रुपयों की काफी उछाल की गई। देखने वाले एक सज्जन ने कहा था कि जयपुर में उतना बड़ा जुलूस पहले कभी नहीं देखा। उस जुलूस में सभी जाति के लोग सम्मिलित थे। राज्य की ओर से काफी प्रबन्ध था। इस तरह बहुश्रुत योगी जयाचार्य ने महान् यश प्राप्त कर महाप्रयाण किया।

जयाचार्य, आचार्य भीखणजी निर्मित जिन-शासन रूपी महान् मन्दिर के तृतीय स्वर्ण कलश हुए।

(६) जयाचार्य साहित्यिक के रूप में : श्रीमद् जयाचार्य अध्यात्मवाद के एक महान् कवि थे। आपने अपने जीवन काल में ३॥ लाख गाथाओं की रचना की जिनमें गम्भीर तत्त्वज्ञान और सूक्ष्म से सूक्ष्म अध्यात्मभाव भरा पड़ा है। स्वामीजी ने ३८००० गाथाओं की ही रचना की थी। आपका साहित्य बहुत विस्तृत है। आप एक महान् चरित-लेखक थे। आपने गुणवान् साधु-संतों के बड़े ही सुन्दर जीवन-चरित लिखे हैं, जिन्हें पढ़ने से आत्मा वैराग्य-रस में झूलने लगती है। आपके उपदेश और व्याख्यान बड़े सारगर्भित और वैराग्यपूर्ण होते। आप इतने उच्च कोटि के और शीघ्र प्रतिभावान कवि थे कि जब कोई रचना करने लगते तो पाँच-सात संतों को अपने पास रखते और प्रत्येक को अलग-अलग पद धराते—लिखाते जाते। धारण करने वाले संत भी महान् धृतिवान और विचक्षण थे। इस तरह धारे हुए पदों को एकत्रित कर बाद में समूची रचना संगठित कर ली जाती थी। आप विचक्षण आशु कवि थे। आपके मुख से कविता उसी तरह निकलती जिस तरह से हिमालय से गंगा का स्रोत। आचार्य जैसे उत्तरदायित्वपूर्ण पद के धारक होने से वे रचना के लिए बहुत थोड़ा ही समय दे सकते थे और इस थोड़े से समय में ही वे काफी रचना कर लेते थे। एक-एक दिन में १६४ पदों की रचना का उदाहरण तो ३०६ बोल की हुण्डी की ढाल २, ३ और ४ को देखने से ही मिल जाता है। आपकी गति और भी अधिक तेज रही होगी—ऐसी हमारी धारणा है अन्यथा इतना ग्रंथ-निर्माण आपके जैसे कार्य-व्यस्त आचार्य के लिए थोड़े समय में करना संभव नहीं था। आप एक दिग्गज विद्वान और प्रगाढ़ लेखक थे।

आपने कई कठिन सूत्रों का मधुर रागिनीपूर्ण राजस्थानी ढालों में सरस अनुवाद कर उनके विषय को सर्वग्राही बनाया। पन्नवणा जैसे अति कठिन सूत्र के १० पद तक का अनुवाद तो आपने केवल १८ वर्ष की अवस्था में ही शुरू कर के पूरा किया। आचाराङ्गसूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध को ढालों में गूंथा और द्वितीय श्रुतस्कंध पर एक सुन्दर टब्बा लिखा। निशीथसूत्र और उत्तराध्ययन सूत्र के २८ अध्ययन का आपने राजस्थानी में पद्यानुवाद किया। आपने सम्पूर्ण भगवती सूत्र का भी राजस्थानी में पद्यानुवाद किया और प्रसिद्ध टीकाओं का उसमें उपयोग किया। भगवती सूत्र के इस राजस्थानी पद्यानुवाद के पदों और ढालों की संख्या क्रमशः ६०,००० और ५०१ है। इस तरह आपने जैनागम वाङ्मय को राजस्थानी भाषा में अनुवादित कर उसे सर्वग्राही रूप दिया और राजस्थानी साहित्य को सुसम्पन्न बनाया। इस आगम-अनुवाद कार्य के अतिरिक्त आपने अनेक स्वतंत्र रचनायें भी कीं। आपकी कृतियों की सूचि इस प्रकार है :—

१—मुनिवर गुणमाला की ढाल
२—३०६ बोल की हुंडी की जोड़ (६ ढालें)
३—आचारांग (प्रथम श्रुतस्कंध) की जोड़ (८८ ढालें);
४—भगवती की जोड़ (५०१ ढालें)
५—ज्ञाता सूत्र की जोड़ (१२ अध्ययनों की, १०० ढालें)
६—उत्तराध्ययन सूत्र की जोड़ (प्रथम २८ अध्ययन सम्पूर्ण २९ वां देश रूप)
७—विपाक सूत्र (दो अध्ययनों की जोड़)
८—आचारांग (द्वितीय श्रुतस्कंध) का टब्बा
९—निशीथ की जोड़
१०—अनुयोग द्वार की जोड़ (थोड़ी)
११—पन्नवणा की जोड़ (१० पद तक)
१२—जयजश (१५१ ढालें)
१३—दीप जश (८५ ढालें)
१४—धनजी रो बखाण (३८ ढालें)
१५—महिपाल चरित्र (७७ ढालें)
१६—सुरसुंदर दवदंती. (२२ ढालें)
१७—पार्श्व चरित्र बखाण
१८—मंगलकलश बखाण
१९—मोहजीत रो बखाण
२०—शीतेन्द्र रो बखाण
२१—शील मंजरी
२२—ब्रह्मदत्त बखाण
२३—जशोभद्र बखाण
२४—भरत बाहुबल रो बखाण
२५—व्याघ्र क्षत्री रो बखाण
२६—जमाली रो बखाण (१५ ढालें)
२७—महाबल रो बखाण
२८—खंधक सन्यासी रो बखाण (८७ ढालें)
२९—भिक्खु यश रसायण (६३ ढालें)
३०—लघु भिक्खु यश रसायन (५ ढालें)
३१—खेतसी चरित्र (१३ ढालें)
३२—ऋषि राय सुजश (१३ ढालें)
३३—शांति विलास (१३ ढालें)
३४—हेम नवरसो (९ ढालें)
३५—सरूप नवरसो (९ ढालें)
३६—भीम विलास (५ ढालें)

३७—मोतीजी स्वामी (बड़ा) (५ ढालें)
३८—उदेराजजी स्वामी (५ ढालें)
३९—ऋषिराय रो चोढालियो (४ ढालें)
४०—सरूपचन्दजीरो चोढालियो(४ढालें)
४१—शिवजी स्वामी रो चौढालियो (४ ढालें)
४२—हर्ष ऋषि रो चौढालियो (४ ढालें)
४३—सती सिरदार सुजश (१५ ढालें)
४४—भाद्र मोहछबकी ढालें (२४ ढालें)
४५—मर्यादा मोहछब की ढालें (१७ ढालें)
४६—साधु सती गुणमाला (सैंकड़ों ढालें)
४७—शासन विलास (४ ढालें)
४८—श्रद्धा की चोपी (३८ ढालें)
४९—अकल्पती व्यावच री चोपी
५०—जिन आगन्या री चोपी (५४ ढालें)
५१—१८९० में गण बारह हुयां री जोड़(३३ ढालें)
५२—उपदेश री चोपी
५३—सिखामण री चोपी
५४—चरचा नी चोपी (२१ ढालें)
५५—भिक्खु लिखत चोपी (१९ ढालें)
५६—चोबीसी बड़ी (२४ ढालें)
५७—चोवीसी छोटी (२४ ढालें)
५८—प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध
५९—नयचक्र की जोड़
६०—पंच संधि का दोहा
६१—धातु रूपावलि का दोहा
६२—ढालोकड़ां री ढालां
६३—टालोकड़ा रो लघु रास
६४—परम्परा रा बोल (७ ढालें)
६५—भ्रम विध्वंसण
६६—कुमतिविहंडन*
६७—संदेहविष औषधि
६८—जिनाज्ञा मुखमुंड
६९—प्रश्नोत्तर सार्द्धशतक
७०—चर्चा रत्नमाला (अधूरा)
७१—सिद्धान्त सार
७२—भीण चर्चा
७३—ध्यान छोटा
७४—ध्यान बड़ा
७५—आराधना (१० ढालें)
७६—मर्यादा की ढाला
७७—थोकड़ा
*७८—शांति चरित (दीर्घ)
७९—शांति चरित (लघु)
८० —हरिवंश
८१—महाबल
८२—मलया सुन्दरी
८३—पाण्डु चरित्र
८४—चंद राजा रो वखाण
८५—रत्नपाल चरित
८६—धर्मबुद्धि पाप बुद्धि
८७—मुनपति चरित
८८—श्रेणिक चरित
८९—मृगावती चरित
९०—लीलावती चरित
९१—हरिबल चरित
९२—जयसेन चरित
९३—उत्तम कुमार चरित

*७८-९३ में उल्लिखित कृतियां जयाचार्य रचित नहीं हैं। अन्तःवाचन के लिए इन कृतियों के भिन्न-भिन्न स्थलों पर उपयोग के लिए श्रीमद् जयाचार्य ने अनेक अंशों की रचना की और अपनी ओर से नयी ढालें आदि लिखी हैं। इनकी संख्या प्रचुर है। इसलिए इनका यहां उल्लेख किया गया है।

आपकी सभी रचनाएं राजस्थानी भाषा में हैं और प्रायः सभी पद्य में। उनमें सरसता, चुस्तता, मौलिकता, भावों की ऊँची उड़ान और गहरा तत्त्वज्ञान भरा है। वे हृदय को बिजली के प्रवाह की तरह अपनी ओर खींच लेती हैं और एक तन्मयता उत्पन्न कर मन और भावों को आत्मिक शान्ति और पवित्र भावनाओं से ओत-प्रोत कर देती हैं। कई ढालें तो अन्त समय के लिए बनाई हुई हैं और उस समय में उन्हें सुनाने से आत्मा में एक अपूर्व बल का संचार हो जाता है और म्रियमाण व्यक्ति भी आध्यात्मिक सजीवता से भर जाता है।

श्रीमद् जयाचार्य वास्तव में एक जीवन-कवि थे। जीवन को उन्नत बनाने के लिए, भावों को पवित्र बनाने के लिए, इन्द्रियों को जीतने और मन को वश में करने के लिए, संक्षेप में हृदय में धर्म की स्रोतस्विनी बहा देने के लिए आपकी ढालें बड़ी ही उपयोगी हैं। आपकी कृतियों को समझने के लिए विद्वत्ता की जरूरत नहीं होती और न कोष की ही। उनमें इतनी सरलता है कि यदि एक अनपढ़ मनुष्य भी उन्हें सुने तो वह उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। आपकी रचनाओं में संस्कृत शब्दों की बहुलता है परन्तु इन शब्दों का प्रयोग इतने सुन्दर रूप से किया गया है कि ठेठ राजस्थानी की सरसता को वे बिगाड़ते नहीं परन्तु उसे और भी दीप्त करते हैं। उनके संस्कृत शब्दों के प्रयोग से न भाषा बोझिल हुई है और न भाव दुर्ग्राह्य। परन्तु उनमें एक अद्भुत मिठास और सर्वग्राहिता निहित है। वास्तव में वह लोक-साहित्य है। स्वामीजी की तरह हम जयाचार्य को भी लोक-साहित्य के अमर गायक-कवि कहेंगे।

(१०) कुछ महत्त्वपूर्ण प्रसंग : सं० १९३३ में आपका चातुर्मास लाडनूं (मारवाड़) में हुआ। उस वर्ष ५२ दोहों की एक प्रश्नावली अजीमगंज के कालूरामजी श्रीमाल नामक एक श्रावक ने लाडनूं के श्रावकों को भेजी। श्रावकों ने यह प्रश्नावली आपसे निवेदन की। इस प्रश्नावली में अनेक तात्त्विक प्रश्न थे और वह बहुत सुन्दर ढंग से लिखी गई थी। आपने इस प्रश्नावली के उत्तर में एक ग्रंथ ही बना डाला है, जो 'प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध' के नाम से प्रसिद्ध है। इस प्रश्नोत्तर तत्वबोध को कई श्रावकों ने मिल कर कण्ठस्थ कर कालूरामजी को भेजा। बाद में यह ग्रंथ प्रकाशित भी हुआ। यह छपा हुआ ग्रंथ १९५ पृष्ठों में है। आप तत्त्वज्ञान के प्रकाण्ड पण्डित थे। सूत्र तो जैसे आपके कण्ठस्थ-से थे। आपकी रचना सूत्र संदर्भों से भरपूर है। 'प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध' जैन तत्त्वज्ञान का एक गम्भीर अध्ययनपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में २७ अधिकार व परिच्छेद हैं और प्रत्येक अधिकार में एक-एक विषय का सूक्ष्म विवेचन।

पहले साधु तम्बाकू सूंघा करते थे जिससे सफाई कम रहती। आपने तम्बाकू सूंघना एकदम बन्द कर दिया। जो एक बार तम्बाकू सूंघते उन्हें पाँच विगह[१] और सूंखड़ी[२] छोड़नी पड़ती। इस नियम के लागू करते ही तम्बाकू की चाल बन्द हो गई।

१—घी, दूध, दही, तेल और तली हुई वस्तुएँ।
२—मिठाई आदि।

एक बार जयाचार्य लाडनूं में विराज रहे थे। वहाँ पूनी बाई नाम की एक श्रावगी जाति की बहिन थी। उसने अपना जीवित ओसर किया। ओसर में काफी मिठाई बची। ओसर के बा उसने जयाचार्य से संतों को गोचरी भेजने की अर्ज की। जयाचार्य ने उत्तर दिया—"अव होगा तो देखा जायगा।" बादमें जयाचार्य के मन से यह बात बिसर गई और वे संतों सहि लाडनूं से विहार कर सुजानगढ़ पधार गए। जब उस बाई को इस बात की खबर लगी तो उं मर्मान्तिक पीड़ा हुई। वह एक बार तो बेहोश भी हो गई। बड़े मोतीजी स्वामी उस समय लाड में थे। उस बाई ने अपनी दुःख-गाथा उनसे कही—"आपके महाराज तो कड़ी कन्दोले वालों (वनिकों के) घर ही जाते हैं, मुझ गरीबनी के घर कौन आवे ?" मोतीजी स्वामी लाडनूं से विहा कर सुजानगढ़ पधारे और वंदना करते हुए बोले—"आपने तो 'धींगा निवाजवाली' की।" जयाच ने पूछा—"सो कैसे ?" मोतीजी स्वामी बोले—"राजा की सवारी निकलती तब एक गरीब आद पुकार किया करता—'गरीब निवाज ! मेरी भी सुनें' परन्तु राजा इस पर ध्यान नहीं देते थे आखिर उसने एक दिन ऊँचे स्थान पर खड़े होकर पुकार की—'धींगा निवाज ! मेरीं भी सुनें तब कहीं राजा के कान खुले। आपने भी पूनी बाई की अर्ज पर ध्यान नहीं दिया। अतः व दुःखी होकर अर्ज कर रही थी कि आप 'धींगे निवाज' के साथी हैं।"

मोतीजी स्वामी की यह बात सुनते ही जयाचार्य को सारी बात याद आ गई। आप बातची कर रहे थे वहीं खूंटीपर आपका ओघा (रजोहरण) रखा हुआ था। ओघे को हाथमें ले आप उस समय लाडनूं की ओर चल पड़े। काफी दूर चले भी गये। पीछे से युवाचार्य श्रीमघराजजी स्वाम पहुंचे और अपने को भेजने की अर्ज की। जयाचार्य ने मघराजजी स्वामी को भेजा और अच्छी तर व्रत निपजाने का हुक्म दिया। मघराजजी स्वामी लाडनूं पहुंच उस बाई के घर गोचरी पधारे अब उसके हर्ष का ठिकाना नहीं रहा। मघराजजी स्वामी ने बताया कि जयाचार्य किस तर विहार कर काफी दूर आ गए थे। बाई गद्‌गद् हो गई। उसे समझते देर न लगी कि भूल से ह साधुओं को गोचरी भेजे बिना महाराज विहार कर गए।

स्मरण कराते ही जयाचार्य ने अपने वचनों पर कितना ध्यान दिया और वे जैसे धनियों हैं, वैसे ही गरीबों के भी—यह दिखा दिया। मघराजजी स्वामी उस समय युवराज थे। उन्हों युवराज को भेजकर अपने वात्सल्य का परिचय दिया। मोतीजी महाराज का अर्ज करने का ढं भी काफी साहस पूर्ण था। वे गण पर किसी तरह का लांछन आवे—यह सह नहीं सकते और इसलिए स्पष्ट अर्ज करने में भी उन्होंने हिचकिचाहट नहीं की।

तेजपालजी मुनि बड़े तपस्वी साधु थे। आप लाडनूं के वासी थे। आपके पिताजी का नाम शा डूंगरसी गोलछा था। बालवय से ही आपके हृदय में अत्यन्त वैराग्य था और धर्म के प्रा सहज रुचि थी। एक बार जयाचार्य लाडनूं पधारे। उनके उपदेश को सुनकर तेजपालजी दीक्षा के लिए तैयार हो गए। उनका वैराग्य इतना तीव्र था कि गृहस्थावस्था में ही उन्होंने हजारं गाथाएँ सीखीं। चारित्र लेने की उनकी तीव्र इच्छा थी पर घरवाले अनुमति नहीं देते थे

उन्होंने तेजपालजी को एक कोठरी में बन्द कर बाहर ताला लगा दिया। परन्तु तेजपालजी की लौ साधु-जीवन से लग चुकी थी। वे अंतस्थ वैरागी थे। उन्होंने कोठरी में ही लोच कर अपना माथा मूंड़ लिया और घर में न रहने की अभिलाषा दिखाई। तेजपालजी को और भी कष्ट दिए गये। अंत में जयाचार्य ने उनके पिताजी को समझा दिया। जयाचार्य बोले—"हम गोलछे हैं और तुम भी गोलछे हो। तुम्हारे पाँच पुत्र हैं। समझ लेना एक पुत्र को गोद ही दिया सही।" जयाचार्य के विनोद पूर्वक समझाने पर और तेजपालजी के उत्कृष्ट वैराग्य को देखकर डूंगरसीजी ने दीक्षा की आज्ञा दी।

श्री जयाचार्य भी स्वामीजी की तरह ही बड़े कठोर अनुशासक थे। गुणों के लिए तथा शुद्ध जीवन के लिए उनके हृदय में बड़ा सम्मान रहता। उन्होंने आचार्य होते हुये भी गुणवान साधु-साध्वियों की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की और जब कहीं प्रसंग आया उनका यशोगान करने में चूक नहीं की।

मानसिक शुद्धता और चारित्रिक शुद्धता के लिए उन्होने बहुत कड़े नियम बनाए। अनेक मर्यादाएँ बांधी। साधुओं की हाजिरी उन्हीं की प्रारम्भ की हुई है। माघ सुदी ७ के दिन जो मर्यादा-महोत्सव मनाया जाता है, उसके स्रष्टा भी आप ही हैं। स्वामी जी ने सं० १८३२, ३७, ४५, ५० और ५९ में अनेक मर्यादाएँ स्थिर कीं। अनुभव और जरूरत के अनुसार इन मर्यादाओं को विस्तृत और व्यापक बनाया गया। श्री जयाचार्य ने सं० १९१० में इन समस्त मर्यादाओं को एकत्रित कर सार रूपमें एक संक्षिप्त मर्यादा बनाई और साधु-संत उसे रोज पढ़ें, ऐसा नियम बना दिया। साधुओं को जो रोज एक लिखित—प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करना पड़ता है, वह भी आप ही का चालू किया हुआ है। इस प्रतिज्ञा-पत्र के अन्तिम शब्द हैं—"मैं घणे मन तीखे हरख राजीपा सुं लिख्यो सरमा सरमी सुं लिख्यो नथी।" इस प्रतिज्ञा का अर्थ यही था कि साधुओं को प्रतिपल यह स्मरण रहे कि वे महिमामय जैन-शासन के साधु हैं और कुशलता पूर्वक चारित्र का पालन करने और आचार्य के कठोर से कठोर अनुशासन को भी वे अन्तर हृदय से मानने और शिरोधार्य करने के लिए प्रस्तुत हैं। यह प्रतिज्ञा-पत्र विनीत शिष्य की आत्म-साक्षी और आचार्य के पवित्र चरणों पर अपना नम्र समर्पण है।

वृद्धावस्था में जयाचार्य की आँखों में मोतियाबिंद हो गया। बड़े कालूजी महाराज उनकी आँख का आपरेशन कर रहे थे। हठात् बीच ही में वे वहां से तिरवारी में आ गए। जो डाक्टर वहाँ मौजूद थे बोले—"यह क्या करते हैं?" जयाचार्य बोले—"मेरे शरीर पर जल की छींट—बूंद सी लगी। चरित्र से बढ़ कर आँख नहीं है।" संतों ने जाँच की और जब विश्वास हो गया कि फुहारे नहीं गिरते हैं, तब फिर चौक में आकर आपरेशन कराया। चारित्रिक विशुद्धता पर जयाचार्य का कितना ध्यान रहता था—यह इस घटना से साफ प्रकट है।

आपके शासनकाल में सती सिरदारांजी और गुलाबांजी बहुत ही प्रसिद्ध आर्याएँ हुईं। सती सिरदारांजी सतियों की मुखिया थीं और इस तरह उनका नाम सार्थक था। वह इतनी बुद्धिमती थीं कि संत भी उनकी सलाह से काम करते। उस समय ऐसी परिपाटी थी कि जब संत आहार कर चुकते

तब बाकी आहार साध्वियाँ अपने में विभाजित करतीं। सती सिरदारां जी ने विभाजन-पद्धति की त्रुटि की ओर श्री जयाचार्य का ध्यान आकर्षित किया। जयाचार्य ने तुरन्त ही इस परिपाटी को बदलकर बराबर विभाजन की पद्धति चलाई। जय-जश और दीप-जश व्याख्यान की तो सामग्री भी उनकी दी हुई है। वे सामग्री देते और जयाचार्य उसे ढालबद्ध करते।

सती गुलाबाँजी भी बड़ी विदुषी और विचक्षण थीं। वे मघराजजी स्वामी की बहिन थीं। उनके अक्षरों की मोती से उपमा दी जाती है। वे इतना सुन्दर और साफ लिखती थीं कि देखनेवाले की आँखें तृप्त हो जातीं। जयाचार्य उनसे लिखवाया करते थे।

पाली में एक सुनारिन ने संथारा ग्रहण किया। उसकी इच्छा थी कि जयाचार्य दर्शन दें। उसने श्रावकों से यह अर्ज जयाचार्य से करवाई। उस समय जयाचार्य पाली से लग-भग १२० मील दूर पर विराज रहे थे। अज सुनते ही विहार कर पाली पहुंच दर्शन दे उस सुनारिन के मनोरथ को पूरा किया। आप ऐसे ही कृपालु आचार्य थे।

जयाचार्य के जीवन में अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाएँ घटीं। सं० १६१५ फाल्गुन सुदी १० के रात की बात है। हठात् जयाचार्य को छोड़कर सर्व साधु बेहोश हो गए। उस समय जयाचार्य ने एक ढाल जोड़ी। उसे 'विघ्न हरण की ढाल' कहते हैं। इस ढाल की प्रथम पंक्ति है—"मुणिन्द मोरा, भिक्षु ने भारीमाल वीर गोयम री जोड़ी रे।" इसमें तेरापन्थ-सम्प्रदाय के सभी विशिष्ट साधु-साध्वियों के गुणों का स्मरण और कीर्तन है। इस ढाल के स्तोत्र से साधु फिर होश में आये।

इसी तरह एक अन्य परीषह के समय उन्होंने शिरियारी में सं० १६१३ की वसंत-पञ्चमी वार सोमवार के दिन एक दूसरी ढाल रची, उसमें भी गुणी सन्तों का गुणगान है। इस ढाल के स्तोत्र के बाद परीषह दूर हुआ।

गृहस्थ-जीवन की घटना है। साध्वी अजबूजी का चातुर्मास रोहट में था। उन्होंने माता कलूजी को धर्मध्यान अधिक करने का उपदेश दिया। उस समय जयाचार्य बाल्यावस्था में थे और अत्यन्त अस्वस्थ थे। बचने की कोई आशा न थी। धान गले न उतरता। इससे माता कलूजी बड़ी चिन्तित रहतीं। उन्होंने साध्वी अजबूजी से कहा—"जीतमल बीमार है। बड़ा आर्तध्यान रहता है। इससे धर्म-ध्यान विशेष होता नहीं।" साध्वी अजबूजी बोली—"यदि जीतमल स्वस्थ हो जाय और उसको प्रव्रज्या लेने का भाव हो जाय तो उसे मना करने का त्याग लो।" माता कलूजी ने त्याग कर दिया। आप तुरंत नीरोग हो गये। धान गले उतरने लगा।

बाल्यावस्था में ही आपमें अत्यधिक वैराग्य-भावना थी। साधुओं की सेवा-भक्ति तथा धर्म-ध्यान में आपकी विशेष अभिरुचि रहती। यदि कोई आपसे पूछता—"आप दीक्षा लेंगे?" तो आपका उत्तर होता—"लूंगा।" इस पर साधु कहते—"अभी तुम्हारी उम्र छोटी है। ६ वर्ष के पूर्व दीक्षा नहीं कल्पती।"

आप हाथ में पला लेकर उसमें कटोरी रख लेते और अपने काका के पास आकर कहते— "मैं साधु हो गया हूँ, शुद्ध आहार देना।" साधु सन्तों से आप बार-बार पूछते—"अभी कल्प आया है या नहीं ?"

इस प्रसंग से यह स्पष्टतः विदित होता है कि छोटी उम्र में ही आप में साधु-जीवन की बड़ी बलवती इच्छा थी।

आपके बड़े भाइयों की सगाई आपके पिताजी ने कर दी थी किन्तु आपकी सगाई वे नहीं कर सके क्योंकि उनका देहान्त सं० १८६३ में हठात् हो गया। आपकी सगाई बाद में धूंघारे में हुई। यहीं आपका ननिहाल भी था।

संवत् १८६६ में भारीमालजी स्वामी का चतुर्मास जयपुर में हुआ। वे पद्मसिंह जी ढढा की हवेली में विराजे। उस समय स्वरूपचन्द जी अपनी माता और भाइयों के साथ जयपुर आये और वहाँ पर हरचन्दलालजी जौहरी के मकान पर उतरे। अपने भाइयों के साथ आप तीनों वक्त व्याख्यान सुनते। इससे आपका वैराग्य बढ़ता गया। रात में ऋषि रायचन्दजी रामायण का व्याख्यान दिया करते थे। आप ने भांगा छोड़कर पचीस बोल कण्ठस्थ कर लिया और तेरहद्वार के ग्यारह द्वार सीख लिए। आपने विविध चर्चाएँ सीखीं। उस समय आप ९ वर्ष के थे। आपकी चातुरी और प्रत्युत्पन्न बुद्धि को देखकर हरचन्दलालजी जौहरी ने विचार प्रकट किया कि यदि जीतमलजी ने दीक्षा ली तो बड़े सुयोग्य साधु होंगे। यदि दीक्षा लेने का उनका विचार नहीं रहा तो मैं छोटी बीबी (अपनी भतीजी) का विवाह इससे कर दूंगा और बादर सिंह को गोद बिठाकर ५०,००० रुपये नगद तथा वस्त्रादि जो हैं, उन सबको उन्हें दे दूंगा। परन्तु कंचन और कामिनी के प्रलोभन से आप विचलित नहीं हुए। आपका वैराग्य बढ़ता ही गया।

चातुर्मास समाप्त होने पर भी शारीरिक अस्वस्थता वश भारीमालजी स्वामी तथा ऋषि रायचन्दजी को कुछ दिनों तक जयपुर में ही ठहरना पड़ा। इस अवसर पर हेमराजजी स्वामी, अजबूजी, हीरांजी, हस्तुजी, किस्तुजी आदि भारीमालजी स्वामी का दर्शन करने आये। जयपुर में आचार्य श्री के ठहर जाने से लोगों का बड़ा उपकार हुआ। कइयों ने व्रत आदि धारण किये। अजबूजी ने स्वरूपचन्दजी को उपदेश दिया। युक्ति और उक्ति से उनके अन्तर में वैराग्य जगाया। हस्तुजी ने कहा—"देखते क्या हो ? सारा यश अपनी बुआ को दो। घर में न रहने का अभिग्रह लो।" स्वरूपचन्दजी में वैराग्य भावना तो थी ही इससे उन्होंने घर में न रहने का अभिग्रह लिया। अब श्री जीतमलजी के हृदय में भी दीक्षा लेने के तीव्र भाव जागृत हुए। भारीमाल जी स्वामी ने स्वरूपचन्दजी को पहले दीक्षा देने का भाव प्रकट किया। माता कलूजी ने सहर्ष आज्ञा प्रदान की।

भारीमालजी स्वामी ने आपकी दीक्षा मिति माघ बदी ७ के दिन ऋषि रायचन्दजी के हाथों घाट दरवाजे के पूर्व के वट-वृक्ष के नीचे करवाई।

भारीमालजी स्वामी ने मुनि भीमराज को ४ महीने बाद और जीतमलजी को ६ महीने बड़ी दीक्षा देकर मुनि श्री भीमराजजी को बड़ा किया। मुनि जीतमलजी का प्रथम चातुर्मास श्री हेमराजजी स्वामी के साथ सं० १८७० में इन्द्रगढ़ में हुआ ।

सं० १८७५ में आपका पाली में चातुर्मास हुआ। इस चातुर्मास में आपने और स्वरूपचन्द स्वामी ने ४२-४२ उपवास किये । आपने "जब तक पूज्यजी के दर्शन न होंगे तब तक पाँच विगय न खाऊंगा" ऐसा अभिग्रह किया । यह अभिग्रह १३ महीने बाद पूरा हुआ अर्थात् १३ महीने आपने घी, दूध, दही, मिठाई आदि का परिहार रखा।

पाली से सुरगढ़ पधारे। वहाँ दिशा जाकर वापिस आते समय पैर फिसल कर गिर से पैर की ढकनी उतर गयी। बाद में पीड़ा दूर हुई, पर कच्ची अवस्था में पैर पर जो देने से कुछ कसर रह गयी।

श्रीमज्जयाचार्य की जन्म-कुण्डली इस प्रकार है :
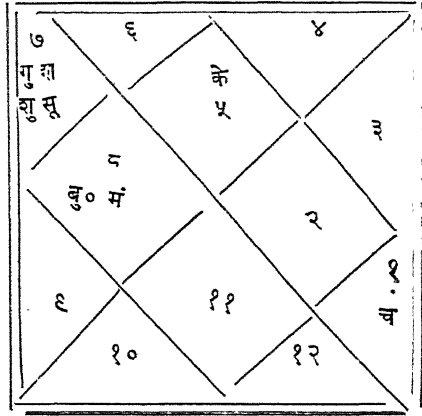
श्री जयाचार्य का विस्तृत जीवन-चरित पंचम आचार्य श्री मघराजजी स्वामी कृत आ चरितावलि में प्रकाशित है। कृपया पाठक उसे देखें।

कृति-परिचय

'भिक्खु जश रसायण' कृति का रचना काल संमत् १९०८ आसोज सुदी १ वार शुक्रवार यह कृति बीदासर शहर में सम्पूर्ण हुई जो कि बीकानेर (राजस्थान) में है[1] ।

इस कृति की रचना में श्री जयाचार्य ने मुख्यतः निम्न कृतियों का सहारा लिया है[2] :

१—ढाल ६३ गा० ४८ :

> संवत उगणीसै आठै आसोज, एकम सुदि सार ।
> शुक्रवार ए जोड रची, वीदासर शहर मझार ॥

२—६३ गा० ४५-४६ :

> विस्तार रच्यौ भिक्खु मुनिवर नौ, सुणियौ तिण अनुसार ।
> भिक्खु दृष्टान्त हेम लिखाया, देखी ते अधिकार ॥
> वेणीरामजी हेम कृत वर, भिक्खु चरित सुपेख ।
> इत्यादिक अवलोकी अधिकौ, ग्रंथ रच्यौ सुविशेष ॥

१—'भिक्खु दृष्टान्त'—जो स्वामीजी के शिष्य मुनि श्री हेमराजजी ने लिखाये थे और जिनका संग्रह स्वयं जयाचार्य ने किया था। यह पुस्तक महासभा द्वारा प्रकाशित हो चुकी है।

२—मुनि श्री हेमराजजी कृत 'भीखू चरित'—जो प्रस्तुत खण्ड में प्रकाशित किया जा रहा है।

३—मुनि श्री वेणीदास कृत 'भीखु चरित'—यह कृति भी प्रस्तुत संग्रह में प्रकाशित है।

यह कृति चार खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में चौदह ढालें हैं। जिनमें आचार्य रघुनाथजी से पृथक् हो नूतन दीक्षा ग्रहण करने तक का विवरण है। तथा स्वामीजी ने आध्यात्मिक और दार्शनिक क्षेत्र में जो विचार-क्रान्ति प्रस्तुत की; उसका सुन्दर वर्णन है।

द्वितीय खण्ड में कुल २८ ढालें हैं। इस खण्ड में स्वामीजी के अत्यन्त रोचक संस्मरण, दृष्टान्त और प्रसंगों का बड़ा ही हृदयग्राही चित्रण है। इस खण्ड में श्री जयाचार्य ने स्वामीजी के जीवन के १५१ प्रसंगों का उल्लेख किया है।

तृतीय खण्ड में कुल १० ढालें हैं। इनमें स्वामीजी के शासन में जो दीक्षाएँ सम्पन्न हुईं, उनका विवरण है। श्री जयाचार्य ने इस खण्ड में सर्व साधु-साध्वियों का संक्षिप्त में घटनापरक जीवन-चरित दे दिया है।

चतुर्थ खण्ड में कुल ११ ढालें हैं। यहाँ स्वामीजी ने किन-किन देशों में उपकार किया, उसका और अन्तिम पद-यात्रा का वर्णन आया है। इसी खण्ड में स्वामीजी ने किस तरह संथारा किया, उसका लोमहर्षक वर्णन है। अन्त में स्वामीजी के चातुर्मासों का विवरण दिया है।

इस कृति में कुल ६३ ढालें हैं। ढलवार दोहा और गाथा संख्या इस प्रकार है:

प्रथम खण्ड

ढाल	दोहा	गाथा	कलश	सोरठा
१	६	२१		
२	६	२१		
३	६	२०		
४	६	२६		
५	६	२७		
६	६	१८		
७	६	१३[1]		
८	६	२१		
९	६	३३		
१०	६	१५		१

१—यहां सेवग कृत दुहा और भिक्खु कृत छन्द उद्धृत हैं।

ढाल	दोहा	गाथा	कलश	सोरठा
११	९	१७		
१२	९	२४[1]		
१३	९	१४		
१४	९	२९		
द्वितीय खण्ड				
१५	९	२०		
१६	९	१४		
१७	९	१८		
१८	९	१६		
१९	९	२४		
२०	९	२०		
२१	९	२४		
२२	९	१४		
२३	९	४४		
२४	९+३	१८		
२५	९	१३		
२६	९	१७		
२७	९	२३		
२८	९	१९		
२९	९	१७		
३०	९	२२		
३१	९	२०		
३२	९	४८		
३३	९	२०		
३४	९	३७		
३५	९	१९[2]		
३६	९	२१		
३७	९	३१		
३८	९	२३		
३९	९	५६		

१—यहाँ भिक्खु स्वामी कृत जिन आज्ञा विषयक आठ गाथाएँ उद्धृत हैं।
२—'एकलडो जीव खासी गोता' वाली स्वामीजी की गाथा उद्धृत है।

ढाल	दोहा	गाथा	कलश	सोरठा
४०	६	३१[1]		
४१	९	१३०		
४२	६	५६	२	

तृतीय खण्ड

ढाल	दोहा	गाथा	कलश	सोरठा
४३				१[2]
४४	६	१५		
४५	६	२१		
४६	१	२७		१४+२
४७	६	१५		५
४८	१+८	२१		
४९	५	१५		७
५०	७	२४		१९
५१	५	१५		१२
५२ भुजंगी छन्द १४	२१	३७	२	५+२ छप्पय ४

चतुर्थ खण्ड

ढाल	दोहा	गाथा	कलश	सोरठा
५३	४	१६		
५४	५	१४		
५५	४	३१		
५६	४	१५		
५७	४	१३		
५८	४	२३		
५९	५	१९		
६०	४	१५		
६१	५	१७		
६२	७	२८		
६३	५	४९	२	

१—शोभाचन्द सेवग कृत 'अनभय कथणी रहिणी' वाला छन्द उद्धृत ९ ।

२—इसके बाद मुनि वेणीदासजी कृत दोहों सहित चौथी ढाल उद्धृत है। श्री जयाचार्य ने उस ढाल में जो थोड़ा शाब्दिक संशोधन किया है, वह मूल कृति की इस ढाल के साथ मिलाने से स्वयं प्रकट होगा ।

श्रीमज्जयाचार्य की कृतियों और उनके द्वारा रचित जीवन-चरितों में 'भिक्खुजश रसायन' अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है।

उनके द्वारा रचित ग्रंथों के अध्ययन से निम्न बातें प्रमुख रूप से सामने आती हैं: (१) वे गंभीर अध्ययनशील पुरुष थे। (२) गूढ़ तत्त्वज्ञानी थे। (३) आगम-ज्ञान में पारंगत थे। (४) जन्मजात इतिहासकार थे। (५) मर्यादा पुरुषोत्तम थे। (६) सिद्धहस्त कवि और चुस्त लेखक थे। (७) उद्भट टीकाकार थे। (८) विशुद्ध दृष्टि सम्पन्न नैयायिक थे और (९) वे धैर्यशील अनुसन्धित्सु थे।

'भिक्षु-जश रसायन'—एक जन्मजात इतिहासकार कवि की सूक्ष्म प्रामाणिक लेखनी का उत्कृष्ट नमूना है। भक्ति-भावना से भीना हुआ यह जीवन-चरित आराध्य के प्रति अतिरंजित नहीं पर एक अपेक्षित श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

श्रीमद् जयाचार्य को लगता था—"स्मरण स्वाम तणो शुद्ध साध्यां, शिवसुख पांमै सार।" जयाचार्य ने ऐसे महान पुरुष की महान यशोगाथा अत्यन्त प्रामाणिक रूप में उपस्थित की है।

इस जीवन-चरित के लिखने के लिए सामग्री एकत्रित करने में श्री जयाचार्य ने जो घोर परिश्रम किया है, वह पुस्तक के एक-एक पृष्ट से स्वयं प्रगट है

'भिक्खु दृष्टान्त' का संकलन उन्होंने इसी दृष्टि से किया। इन संस्मरणों को संग्रह करते समय उनके हृदय में जो एक अभिनव कल्पना कार्य कर रही थी उसने प्रस्तुत चरित के द्वितीय खण्ड में साकार रूप लिया है। "खण्ड दूजै गुण खाण रे, दृष्टन्त कहूं दयालना" ये दृष्टान्त स्वामीजी की आन्तरिक भावना और वृत्तियों के अन्यतम चित्र हैं। कवि की कुशल तूलिका इन संस्मरणों के आधार से ही आभा भरे रंग-बिरंगे समतल चित्र उपस्थित करने में सफल हुई है। इस जीवन-चरित में पूर्व चरितों की अपेक्षा असाधारण विशेषता भी इन संस्मरणों के गुम्फन से ही आ सकी है।

राजस्थानी संस्मरण-परक जीवन-चरित लिखने की कल्पना और चिन्तन की शृंखला में श्रीमज्जयाचार्य का स्थान एक अग्रणी के रूप में आता है। उन्होंने प्रस्तुत चरित-लेखन में जिस शैली, कल्पना और ऐतिहासिक वृत्ति को रखा है, वह उस समय के जीवन-चरितों में दुर्लभ है।

इस चरित-ग्रंथ की अन्तिम पंक्तियों में कवि कहता है—

अधिकौ ओछौ जे कोई आयौ,
विरुद्ध आयौ हुवै कोय।
सिद्ध अरिहन्त देव री साखै,
मिच्छामि दुक्कडं मोय॥

इस चरित-लेखन में जान-बूझकर कम-अधिक उपस्थित करने की बात तो है ही नहीं। भूल-चूक से भी ऐसा कुछ रह गया हो, ऐसा नहीं लगता। इतिहासकार की विशुद्ध वृत्ति का यह एक ज्वलन्त उदाहरण है।

तृतीय खण्ड में स्वामीजी कालीन साधु और आर्याओं का जो संक्षिप्त परिचय उपस्थित हुआ है, वह तेरापन्थ इतिहास की स्वर्ण कड़ियों को सुरक्षित रखता है। स्वामीजी के गण में कैसे उच्च चारित्रिक संत, तपस्वी और शास्त्रगामी साधु-साध्वी हुए, उनका वह सुन्दर हृदयग्राही परिचय प्रस्तुत करता है। समूचा चारित्र संवेग-रस की भावना के उद्रेक का सहज अविराम स्तोत्र है। उत्तम रागिनियों में गुम्फित यह जीवन चरित उतना श्रद्धाञ्जलि परक नहीं जितना कि वह भावना-प्रेरक है। यह अध्यात्म रस का निर्झर है। जीवन-विशुद्धि की प्रक्रिया में ऐसा अध्यात्मरस समृद्ध जीवन-चरित साधक के लिए प्रबल संबल होता है।

कवि जितना भावना के साथ चला है उतना ही तथ्यों के साथ भी। तथ्य, चित्रण की रोचकता में कमी नहीं ला सके। न भाव-प्रवीणता ने ही तथ्यों को ओझल किया है। दोनों ने मिलकर ग्रंथ को एक सुन्दररूप दिया है।

लेखक की "आचार्य संत भीखणजी" नामक पुस्तक प्रस्तुत कृति पर ही आधारित है। उसके अवलोकन से प्रस्तुत ग्रंथ का सार विस्तृत रूप में सामने आ जायगा।

प्रस्तुत प्रकाशन का आधार श्रीमज्जयाचार्य के स्वयं की हस्तलिखित प्रति है।

यह जीवन-चरित पहले भी दो बार श्री धनसुखदास हीरालाल आँचलिया, गंगाशहर की ओर से प्रकाशित हो चुका है। गुजराती लिपि में वह बम्बई से प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत संस्करण में उन प्रकाशनों में रही हुई भूलों का संशोधन मूल प्रति से मिलाकर किया गया है।

४: लघु भिक्खु जश रसायण

यह भी श्री जयाचार्य की ही कृति है। भिक्खुजश रसायण के १५ वर्ष बाद यह लिखी गयी है। इसके सम्पूर्ण होने की तिथि का उल्लेख इस रूप में मिलता है :

उगणीसै तेवीस, माघ सुदि तिथ तिजं।
गुरुवारे ए जोड करी भिक्षु बीजं॥

इस कृति में स्वामीजी के संस्मरण और अनुयायी साधु-साध्वियों का वर्णन नहीं है। अवशेष जीवन-चरित है। यद्यपि इसका नाम "लघु भिक्खु जश रसायण" है तथापि यह "भिक्खु जश रसायण" कृति का संक्षिप्तरूप नहीं, पर एक स्वतन्त्र कृति है। इसमें स्वामीजी के जीवन चरित को संक्षेप में उपस्थित किया गया है, पर वह अपने आप में सम्पूर्ण है।

रचना की दृष्टि से यह कृति भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कवि की चित्रण-कुशलता सर्वत्र व्याप्त है। एक ही बात दोनों चरितों में भिन्न-भिन्न शब्दों में कैसे समानरूप से सुन्दर चित्रित हुई है, यह कवि की सहज कवित्व-शक्ति का परिचायक है।

इस कृति का आरम्भिक अंश एक भिन्न ही भूमिका को लिए हुए है और उतना सर्वतः नवीन है। अवशेष चरित में प्रथम चरित में समाविष्ट घटनाओं का ही वर्णन है, पर वह

भाषा और भाव-व्यंजना की दृष्टि से सम्पूर्णतः नवीन है। दोनों चरितों के वर्णनों से घटनाओं का पूरा-पूरा रूप सामने आ जाता है।

इस कृति में कुल पांच ढालें हैं तथा दोहे और गाथाओं आदि की संख्या २६३ है।

प्रस्तुत प्रकाशन का आधार शासन की हस्तलिखित प्रति से धारा हुआ पाठ है। यह प्रति किसके हाथ की लिखी हुई है, इसका पता नहीं चल सका ।

यह चरित प्रथम बार ही प्रकाशन में आ रहा है।

तेरापन्थ आचार्य चरितावली के इस प्रथम खण्ड में प्रकाशित आचार्य भिक्खु के चार जीवन चरितों से स्वामीजी के जीवन से सम्बन्धित अनेक घटनाओं का हूबहू चित्र सामने आ जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि भविष्य में हिन्दी में स्वामीजी के चरित लिखने के लिए इस प्रकाशन द्वारा पाठकों के हाथ में अपूर्व सामग्री आ जाती है ।

तेरापन्थ आचार्यों और सन्तों द्वारा राजस्थानी साहित्य की जो श्री वृद्धि हुई है, उसका यह प्रकाशन एक ज्वलन्त प्रमाण है । महासभा का यह प्रकाशन राजस्थानी साहित्य में अवश्य महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

कलकत्ता *श्रीचन्द रामपुरिया*

भाद्र शुक्ला १, २०१८

विषय-सूची

तेरापंथ आचार्य चरितावलि

[खण्ड : १]

भीखू चरित

[मुनि श्री हेमराज जी कृत]

दूहा

अरिहंत सिध साधु नमूं, भाव भगत उर आंण।
गुर गिरवा गुणवंत नो, कहूं भीखू चरित बखाण ॥ १ ॥
मोटा मोटा मुनिवर हुवा, आगेइ चोथे आर।
बखांण्या मुख वीर जी, सुत्र में मुध सार ॥ २ ॥
त्यांने नेंणां नही निरखीया, वीर कह्यो विस्तार।
पिण धिन धिन भिखू सांमजी, प्रगट्या पांचमे आर ॥ ३ ॥
गुण गावे गुणवंत गुर तिणा, भोला रे मन नही भाय।
ग्यानीं कह्यो गिनाता मझे, तीर्थंकर गोत बंधाय ॥ ४ ॥
उतकष्टा परिणाम सूं, उतकष्टी आवे रसांण।
संका म आणो सर्वथा, वीर मुंढा री वांण ॥ ५ ॥
तिण काले ने तिण समे, दुषम आरा नी बात।
पूज भीखनजी प्रगट्या, सुखी साध साख्यात ॥ ६ ॥
सुखी कथा सुखी वारता, सुखी सरधा आचार।
सुखे सुखे जाय मुगत में, आवागमण निवार ॥ ७ ॥
जनम किहां दिख्या किहां, प्रभव पोहता किण ठांम।
कीया चोमासा किण विधे, तेहना पिण कहूं नांम ॥ ८ ॥
जस मेहमा घणी जगत में, कही कठा लग जाय।
पिण थोड़सी प्रगट करूं, सांभलज्यो चित ल्याय ॥ ९ ॥

ढाल : १

[आज भलो दिन उगो जी श्रीमिंदर सांमी जी ने वांद]

जंबू दीप भरतखेतो जी, कांइ देस मुरधर दीपतो।
कांइ कांठ कोर कहवाय।
नगर कंटाल्यो नीको जी, कांइ कमधज राज करे तिहां।
वखत संघ सोभाय।
साध भीखू सुखदाया जी, मन भाया भवीयण जीव रे ॥ १ ॥

त्यां भीखनजी अवतरीया जी, कांइ धरीया जणणी गर्भ में,
उतम जीव अपार।
समत सतरेसे बेयासी जी, सुखवासी नंदण उपना,
सुपन लह्यो श्रीकार ॥ २ ॥

सीह सुपनें माता जी सुखसाता, सुत ने जनमीया,
हुओ हरख उछाव।
दीपांदे अंग जाता जी, कांइ पिता वलूजी सोभता।
कांइ कुल ओसवाल कहाव ॥ ३ ॥

बडे साजन वले वीसा जी, सकलेसा जात जाणजो,
एक परण्या था नार।
घणो नहीं कीयो ग्रहवासो जी, कांइ आछो सीलज आदर्‍यो,
दीख्या री मन धार ॥ ४ ॥

वरस पचीस आसरे वधीया जी, कांइ सधीया चेत खडा हुआ।
आयो घट वेराग।
रूघनाथजी गुरू धरीया जी, कांइ क्रिया काची जांणनें,
पछे अुपनो सोच अथाग ॥ ५ ॥

सुत्र ने सुध वांच्या जी, कांइ राच्या ग्यांन रसालसूं,
अुंडो दियो उपयोग।
भगवंत मारग भूला जी, कांइ डूला छोड संसार नें।
नहीं दीसे संजम जोग ॥ ६ ॥

राजनगर में भणतां जी, कांइ गुणतां ग्यांन भलो लह्यो,
वरस पनरे चऊमास।
सुत्र माहि साचो जी, कांइ काचो म्हे पालां जको,
हिवे तोड न्हाखू मोह पास ॥ ७ ॥

आय कहे गुरा ने क्रिया जी, वीसरीया वीर भाखी जका,
कांइ चूका समक्त सार।
छोडो सुरत संभाली जी, मन वाली मारग मोकलो,
पिण उहांरी उठ न हुई लिगार ॥ ८ ॥

अबारूं पांचमो आरो जी, कहे सारो संयम नहीं पले,
इत्यादिक कह्या ढीला वचन अनेक।
पिण सुत्र न्याय सांकरे लीधा जी, कांइ कीधा कष्ट रूडी परे,
वीर वचन बताय वसेख ॥ ९ ॥

सात चोमासा आगे जी, मन भागे त्यां माहि रह्या,
कितलायक समझावण काज।
संजम लेवा सूरा जी, कांइ पूरा असल आचार सूं,
साझण सिवपुर राज॥ १० ॥
भीखनजी आदि विचारी जी, कांइ त्यारी जाण तेरें हुआ,
करवा आतम काम।
तेरें श्रावक समाइ पोसा जी, कांइ सेहर जोधांणा में कीया,
जठे तेरापंथी दीयो नाम॥ ११ ॥
समत अठारो सतरो जी, कांइ सुथरो समो आयो तिहां,
सबलो हुवो सुगाल।
साधपणो सुध लीधो जी, कांइ कीधो कारज केलवे,
प्रभव साहमो भाल॥ १२ ॥
पांच देस प्रगटीया जी, कांइ गुण रटीया राम नाम ज्यूं,
कांइ कटीया कर्म करूर।
पाखंड घोचा पोचा जी, कांइ ग्यांन वले मोटे मुनी,
भांज कीया भखभूर॥ १३ ॥
स्वांमी ग्यांन करी गुणसागर जी, बुध आगर अर्थ ने हेत रा,
ओजागर घणा अमोल।
भांत भांत गुण भरीया जी, कांइ तरीया त्यारा भव जीव ने,
त्यांरो तीखो वधीयो तोल॥ १४ ॥
आप आग्या सुध आराधी जी, कांइ गादी वीर जिणंद री,
आप असल दीसो अणगार।
च्यार तीर्थ सुध थाप्या जी, आप्या अणुव्रत माहाव्रत मोटका,
वले आछो ग्यांन अपार॥ १५ ॥
साध सभा सिणगारी जी, गुण भारी भीखू सांम में,
कांइ मारी ममत बलाय।
चतर ववेकी पूरा जी, कांइ सूरा चरचा कारणै,
भवीयण रे मन भाय॥ १६ ॥
सांरा सिरे सिख भारी जी, सुहाली प्रकत जांणने,
वले सरल घणो सभाव।
भारमलजी पाट थापी जी, कांइ आपी पदवी आचार्य तणी,
च्यार तीर्थ चित्त चाव॥१७॥

दूहा

सांमी* मारग साचो लीयो, सारण आतम कांम।
पिण भारीकर्मा जीवडा, अलीया बोले आंम ॥ १ ॥
कुगुरां ना भरमावीया, बोले आल पंपाल।
थोडा सा प्रगट करूं, सुणजो सुरत संभाल ॥ २ ॥

ढाल : २

[धीज करें सीता सती रे लाल]

अ गुरू ने उथापी अलगा हुआ रे, वले दान दया दीधी उथाप रे, भवक जिण।
कोइ जीव बचावे छे तेहने रे लाल, अे कहे छें अठारे पाप रे, भवक जिण।
सुणजो भीखूजी री वारता रे लाल ॥ १ ॥
कोइ संगत यांरी करज्यो मती रे, लाग जायला थारे लाल रे। भ०।
निन्हव छे ए नीकल्या रे लाल, इम देवे अनेक विध आल रे। भ० ॥ २ ॥
इम भरमाया अनेक जीवां भणी रे, घणा गावां नगरां विख्यात रे। भ०।
जो तेरापंथ्या रो मारग ओलख्या रे लाल, तो हरगज नावे म्हांरे हाथ रे। भ ॥ ३ ॥
आप आपरा पखीयां भणी रे, वले अनेक टोला सूं मिलीया जाय रे। भ०।
वले अनेक ग्रहस्थ्यां ने सीखावीया रे लाल, याने टकवा म देज्यो ताहि रे। भ० ॥ ४ ॥
बावीस टोलां रे माहोमा बेंधो घणो रे, एक एक ने सरधे असाध रे। भ०।
पिण भीखनजी सूं बेंधो करें तरे रे लाल, कहें म्हे तो सगलाइ छां साध रे। भ० ॥ ५ ॥
इम अनेक विध कर रह्या रे, आहमी साहमी घमडोल रे। भ०।
पिण कहों ने कितायक दिन ठाहरै रे लाल, तांवा उपर झोल रे। भ० ॥ ६ ॥
कोई धूल न्हाखे सूर्य मझे रे, आप उपर पाछी परे आय रे। भ०।
ज्यूं भीखनजी सूं भरकाथां भांत भांत सूं रे लाल, देखो गांठ रा श्रावक जाय रे। भ० ॥ ७ ॥
हिवे ज्यूं ज्यूं भीखनजी विचरे जठे रे, उवारां भरमाया आगुच जोवें बाट रे। भ०।
घणो कह्यो थे कने जायजो मती रे लाल, आया थोडा में भेंला हुवे थाट रे। भ० ॥ ८ ॥
केई तो प्रश्न पूछवा रे, केई देखण काज रे। भ०।
केई कुगुरु ना भरमावीया रे लाल, उंधा बोलता नहीं आणे लाज रे। भ० ॥ ९ ॥
उपसर्ग अनेक देता थका रे, केइ बोलता वचन विकराल रे। भ०।
केइ कहे ए नन्हव ए छे रे लाल, केइ कहे जमाली गोसाल रे। भ० ॥ १० ॥
पिण पूज जी क्रोध करे नहीं रे, सुध बतावे सुत्र न्याय रे। भ०।
वले व्रत अव्रत मांड वतावता रे लाल, देवे भिन्न भिन्न भेद दरसाय रे। भ० ॥ ११ ॥

चतुर ते सुण मुण चिंतवे रे, कुड़ कपट न दीसे यामे कोय रे। भ०।
आंतो साची बातां कही सही रे लाल, घणा इचर्य होय रह्या जोय रे। भ०।
साचो धर्म भगवान रो रे लाल ॥ १२ ॥
भगू भड़काया था बेटा भणी रे सुध साधां में चूक बताय रे। भ०।
ज्यूं लोका ने भड़काया भीखनजी थकी रे लाल, आहीज मेलो न्याय रे ॥ १३ ॥
वारूवार पूछी निरणो करी रे, कुगुरां ने दीया छटकाय रे। भ०।
साची सरधा आदरी रे लाल, कहे धिन धिन भीखू रिषराय रे। भ० ॥ १४ ॥
केइकां लियो साधुपणो रे, के हुवां श्रावक श्रावका साख्यात रे। भ०।
केइ प्रतीत धार पका हुवा रे लाल, छोडी कुगुरां तणी पखपात रे। भ० ॥ १५ ॥
इम अनेक गामां नगरां मझे रे, चरचा कर लीया समजाय रे। भ०।
जे हलूकर्मी था जीवडा रे लाल, ते कुगुरू छोडने आया ठाय रे। भ० ॥ १६ ॥
जो भारीकर्मां था जीव रे, खोटा मत माहें रह्या खूत रे। भ०।
कुमत कुबध माहें कल रह्या रे लाल, ज्यूं माखी रहे संघेण मे सूत रे। भ० ॥ १७ ॥
रावण रूप कीया था घणा रे, बहो रूपणी देवी बोलाय रे। भ०।
पिण लछमण रा बांण सूं रे लाल, रूप गया विललाय रे। भ० ॥ १८ ॥
ज्यूं सुध सावां सूं भडकाया लोकां तणी रे, यांरी संगत म करज्यो कोय रे। भ०।
पिण पूज सुत्र न्याय ग्यांन बांण सूं रे लाल, भ्रम भाग्यो घणां रो जोय रे। भ० ॥ १९ ॥
चक्रव्रत चढे देस साधवा रे, आंण फेरे छ खंड में आय रे। भ०।
ज्यूं भीखनजी रिष विचरूया जठे रे लाल, अरिहंत आगन्या दीधी अुलखाय रे। भ०। २०।
निरजुगता न्याय मेल्या घणा रे, सुध सुत्र जोय जोय सार रे। भ०।
वले उतपात बुध सूं आछों कीयो रे लाल, आसरे ग्रंथ अड़तीस हजार रे। भ० ॥ २१ ॥

दूहा

आचार उपर हजारां कीया, समकत उपर हजारां सोय।
व्रत अव्रत ने उपरे, ग्रंथ हजारा जोय ॥ १ ॥
वले उपदेस अनेक विध, रचीया वचन रसाल।
तेरे दुवार ताजा कीया, सुत्र साहमो भाल ॥ २ ॥
उपगार आछो कीयो, कमी न राखी काय।
सकें तो जाणूं सांम जी, पदवी तीर्थंकर पाय ॥ ३ ॥
ज्यां ज्यां विचरूया पूज जी, मिथ्यात देवे मिटाय।
उतकष्टी रसायण उपजे, तो पदवी तीर्थंकर पाय ॥ ४ ॥
ग्यांनी कह्यो ज्ञाता मझे, संका म धरजो सोय।
बीसमो बोल विचारजो, निरणो कीजो जोय ॥ ५ ॥

उतपात वुत्र अत ही भली, च्यारू बुध रे मांहि।
ते हूनी घट पूज ने, निरमल मेल्या न्याय ॥ ६ ॥

ढाल : ३

[धिन धिन जीव जी]

आठ संपदा सहीत आचार्य, कुल मंडण कुल दीवो।
पांचमे आरे प्रगट हुआ रे, भीखू रिष वांदो भव जीवो।
धिन धिन भीखू सांम जी ॥ १ ॥
पाखंड पंथ ने परहस्यो रे, मोटा मुनी मतवंत।
सुमत गुप्त माहावरत सही रे, एतै रे पाले ते तेरापंथ ॥ २ ॥
दोष बयालीस टालता रे, बावण टाले अणाचार।
सुत्र न्याय सुध परूपणा रे, अरिहंत आगन्या धार ॥ ३ ॥
सुत्र ने सुध वाचता रे, मेलता सुध सरूप।
मीठे वचन ने मुनीसरू रे, वागरे वाण अनूप ॥ ४ ॥
कोई पाखंडी अडे आयने रे, उणरा वचन सुणी ने सांम।
उणरा वचनां सु कष्ट उनने करे रे, आछी बात अमाप ॥ ५ ॥
अनेक स्याल आये अडे रे, कों किम भागे सीह।
जे आचारे उजला रे, ते वयां ने आणे वीह ॥ ६ ॥
मेवाड मुरधर देस में रे, कछ देस हाडोती ढुंढार।
साची सरधा प्रगट करी रे, घाली घट में सार ॥ ७ ॥
जठे श्रावक श्रावका किया घणा रे, केइ हुवा साधवी साध।
ते चरणां लगा स्वामी तणे रे, आछी टाली असमाध ॥ ८ ॥
केइ भेष धार्‌यां ने छोड साधू हुआ रे, चरचा करने सोय।
मान अहंकार मेलनें रे, कुमी न राखी कोय ॥ ९ ॥
कुगुरू छोडी सतगुरू कीया रे, आ चोथा आरा नी रीत।
घणा गावां नगरां मझे रे, पूज तणी धारी परतीत ॥ १० ॥
जसकर्मी था जीवडा रे, आदेज वचन आताप।
भिखू विचर्‌या ज्यां पाखंड भाजता रे, धर्म आगे ज्यू पाप ॥ ११ ॥
दरसण भीखू रो ज्यां देखीयो रे, पेखीया गुण वचन पिछाण।
सो जाणे स्वामी नी सेवा करूं रे, उजम इधिको आण ॥ १२ ॥
भज भज रिष भीखू भणी रे, तज तज पाखंड तास।
धज धर्म धारो धुर रे, करो मुगत में वास ॥ १३ ॥

अणंत भव आगे कीया रे, संत न मिलीया सार।
कदा मिलीया तो ही सरध्या नही रे, आय उपनो पांचमे आर ॥ १४ ॥
हिवे भीखू मुनीसर भेटीया रे, गुणवंत ग्यांन भंडार।
साचो संजम लीधो सही रे, पांमाला वेगा भव पार ॥ १५ ॥

दूहा

पूज भीखनजी मोटका, मोटा गुण भरपूर।
भव जीवां भजो तुमे, पहो उंगते सूर ॥ १ ॥
वले गुण गाऊ भीखू तणा, सांभलजो सहु कोय।
मोटा गुण महाव्रत ना, कहूं सुत्र साहमो जोय ॥ २ ॥
भीखनजी भरत क्षेत्र मझे, कीयो धर्म उद्योत।
जीवादिक उलखावीया, घट घट व्यापी ज्योत ॥ ३ ॥
भजन कीया भीखू तणा, भाजे भव भव भूख।
कर्म कटे निरजरा हुवे, दूर जाये सर्व दुख ॥ ४ ॥
छांण कीधी जिण धर्म नी, भला नीवेड्या न्याय।
इसडा बुधवंत जीवडा, नही दीसे भरत रे माहि ॥ ५ ॥
तिहां भीखनजी रिप भेटीया, त्यारे माथे भाग।
सुणजो गुण स्वामी तणा, एक मनां चित्त लाग ॥ ६ ॥

ढाल : ४

[हणमंत गायलो रे सुधारा भव]

सांमी भीखू सारिखा, दुपम आरा रे माहि।
हूआ ने होसी वली, आज न कोइ दिखाय।
भीखू गुण गायलो रे, सुधारया भव दोय ॥ भी० ॥
जसवंत बुधवंत जोय। श्री। भजन करो सहू कोय ॥ भी० १ ॥
मिथ्यात मेटे मोटा मुनी, कीधो ग्यांन उजास।
धर्म अधर्म उलखावीया, ज्यूं मुख दीसे काच ॥ भी० २ ॥
धर्म धुरा धुरंधरू, मेहमा मेर समान।
भरत क्षेत्र में झलके रह्या, मरद्या क्रोध ने मांन ॥ भी० ३ ॥
खिम्या करी सांमी तणी, कर्म काटण तरवार।
तपसा पिण कुले आवे नहीं, प्रसिध लोक विचार ॥ भी० ४ ॥
दयावंत मुनी दीपता, गिरवा ग्यांन भंडार।
एक जीभ कहणी आवे नहीं, पूज गुणां रो पार ॥ भी० ५ ॥

सतवादी मुनी सुरमा, नही कुड़ कपट री बात।
साचो धर्म उलखावीयो, ज्यूं भाख गया जगनाथ॥ भी० ६ ॥
अदत न ग्रही दतग्रही, ब्रह्मचारी बखाणं।
नव ही जात रो सर्वता, परिग्रह ना पचखाणं॥ भी० ७ ॥
नित नित नमो भीखू मुनी, काटो कर्म कठोर।
नरमाइ नित नित करो, मडदो मान मरोड़॥ भी० ८ ॥
साचां गुण स्वामी तणां, संवरे छे दिन रात।
जीवे ज्यां लग भूले नहीं, चावा गुण साख्यात॥ भी० ९ ॥
च्यार तीर्थ गुण सेवरा, हूता भीखनजी साध।
काम पडेला कडली चरचा तणो, आवेला जद याद ॥ भी० १० ॥
भली हुई मुझ चाकरी, लेखे लागी आज।
गुण गाया भीखू तणा, सारण बंछत काज॥ भी० ११ ॥
गुण प्रमाग गणनायकूं, थिर कर थाप्या हो सांम।
भार चलावे टोला तिणो, भारमलजी त्यांरो नांम॥ भी० १२ ॥

दूहा

बयाली वरसां लग पूज जी, बोहत कीयो उपगार।
विचरत विचरत आविया, मुरधर देश मझार॥ १ ॥
उपगार कीयो दोय वरस में, मारवाड़ में आय।
च्यार साध सात साधव्यां हुई, त्यां संजम लीयो सुखदाय॥ २ ॥
वले श्रावक श्रावका कीया घणा, विचरया घणा गावां नगरां माहि।
जठे उपगार कीयो घणो, कह्यो कठा लग जाय॥ ३ ॥
हिवे चर्म किल्याण स्वामी तणो, अण भव आसरी जाण।
किहां विचरया किण सेहर में, प्रभव पोहता किहां आंण॥ ४ ॥
छेला छेला गांम फरसता, छेलाइ करता विहार।
विचरत विचरत आविया, सोजत सेहर मझार॥ ५ ॥

ढाल : ५

[सलहा मारू ना गीत नी तथा हथणापुर हो]

विचरत विचरत हो आया सोजत सेहर मझार, आग्या लेइ छत्री मांहि उतरया जी।
ते छत्री छे हो मुत्ता रायमल री विचार, उण ठांमे आगे इ उपगार कीयो घणो जी॥१॥
त्यां बहू आया हो साध साधवी सुवनीत, केइ दर्शन करवा धर्म चरचा धारणें जी।
त्यांने पूरी हो पूजजी री प्रतीत, केइ आया चोमासा री आग्या कारणें जी॥२॥

भीखू त्यांने हो दीया चोमास भलाय, मुनी पिण चोमासा रो कीधो हुवेला मनो जी ।
एतले आयो हो हुकमचंद आछो चलाय, धर्म दलाली मांहे आछो दीपतो जी ॥३॥
ते करे दलाली हो बोले बेकर जोडी ताहि, धर्म आचार्य मोटा गुर जांण ने जी ।
सांमी चोमासो हो करो सेहर सरीयारी मांहि, आ वीनती मानो करपा भाव आणनें जी ॥४॥
चतुराई सूं हो वीनती कीधी बारूंबार, अवको चोमासो सरीयारी कीजियें जी ।
सुभती छे हो पकी हाट विचार, स्वांमी तिण ठामे वासो लीजियें जी ॥५॥
केतलायक दिन रहनें हो सांमीजी तो कीधो विहार, बगड़ी रहने कंटाल्यो आया वही जी ।
ठांम ठांम हो वीनती करे नरनार, सांमी तो सरीयारी चलाय आया सही जी ॥६॥
सरीयारी हो सोभे सेहर कांठा री कोड, दोलो दोलो मगरो गढ़ कोट ज्यूं दीसतो जी ।
राज करे छें हो तिहां राज राठोर, कुपावत कड़ली छाप नो दीपतो जी ॥७॥
जाडी वस्ती हो त्यां माजनां री जाणं, जठे मेहमां घणी छे जिन धर्म तणी जी ।
बहु नरनारी हो सुणे साधां रा बखाणं, भली तपसा करे केइ कर्म काटण भणी जी ॥८॥
तिहां मुनी आया हो सप्तरिषी अणगार, सुध संजम पाले इंद्रया ने जीपता जी ।
स्यांमी सोभे हो, साधां रे सिरदार, गणनायक रिष भीखन जी दीपता जी ॥९॥
आग्या लेने हो उतख्या पके हाट, रखें दोष लागे तो रहे मुनी धरकता जी ।
बखांण वाणी रां हो लागे छे तिहां थाट, घणा नरनारी सुण सुण ने हीये हरषता जी ॥१०॥
बखांण वाणी में हो सांमी भारमल जी वदीत, साथी खेतसीजी सतजुगी कहावता जी ।
उदेरांमजी हो त्यारे तपसा री नीत, बाल ब्रह्मचारी रायचंद मुनी जीवो मन भावता जी ॥११॥
भगजी कीधी हो सांमी जी री सेवा भगत, तिण सूं साधां मे सोभा हुइ घणी जी ।
वनीत होवे छे हो तिण ने सरावें जगत, अवनीत माहि अवगति कही घणी जी ॥१२॥
आषाढ उतरने हो सांवण सुध छेहले आय, स्वामी जी रे कांइक असाता उठी सही जी ।
तो ही दिसां वारे हो, गोचरी उठे गांव माहि, लांबी तो गिणत स्वामी जी राखे नही जी ॥१३॥

दूहा

अवसर काल आय लगो, सूत्र भणवा चाहि ।
सुध कर कर सांम जी, सिष नें अर्थ बताय ॥ १ ॥
जोड़ करे घणी जुगत सूं, ओर ही अर्थ अनेक ।
उदमी छे नही आलसु, सांमी सुध ववेक ॥ २ ॥
फोरी आसता फेरा तणी, मिटावण मुनी सोय ।
ओखद लीया अणाय ने, पिण कांम न आया कोय ॥ ३ ॥
वले पुनम रे दिन पुज जी, उठ्या गोचरी आप ।
ओखद आंण खादी खरी, वेदन रही छे व्याप ॥ ४ ॥

हिवे आगा ऊपर आदरी, साचे मन स्वामी नाथ।
कार्य सुधारे किण विधे, सांभलजो साख्यात॥ ५॥

ढाल : ६

[कांमणगारो छे कुकडो रे]

साम भीखूजी तिण अवसर रे, आऊ नेरो आयो जांण।
करे आलवणा किण विधे रे, साचा साचा चतुर सुजांण।
सुणजो आलोवण स्वामी तणी रे॥ १॥
आज पेंहली इण जीवडे रे, हंसा कीधी हुवे कोय।
मन वचन काया करी रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ सु० २॥
क्रोध मांन माया लोभ सूं रे, भूठ कह्यो हुवे कोय।
जाणतां ने अजांणतां रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ३॥
अदत्त पांच प्रकार नों रे, सेव्यो सेवायो हुवे सोय।
भलो जाण्यो हुवें सेवतां रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ४॥
ममता धरी हुवे महीथुन सुं रे, सूतां जागतां जोय।
मन वचन काया करी रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ५॥
परिग्रहो नवइ जात नो रे, त्यांरा न्यारां न्यारां भेद होय।
ममता करी हुवे किण ही उपरे रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ६॥
क्रोध कीधी वे किण ही उपरे रे, कडली सीख दीधी हुवे कोय।
कडला काठा वरु वचन रो रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ७॥
मांन माया लोभ कीया हुवें रे, राग धेष कीया वें दोय।
इत्यादिक अठारेइ पापना रे, मिछामी दुकरो छे मोय॥ ८॥
रागी उपर राग कीयो हुवे रे, धेखी सूं धरीयो हुवे धेख।
मन सांचे हिव मांहरे रे, मिछामी दुकरो छे वशेख॥ ९॥
प्रथवी अप तेऊ वाऊ छे रे, ज्यांरी सात सात लाख जात।
हणी वें तीन कर्ण जोग सूं रे, वाल्बार खमाऊ विख्यात॥ १०॥
चवदे लाख साधारण वनस्पति रे, दस लाख प्रतेक।
बे ते चोइन्द्री बें बें लाख छे रे, वली वली खमाऊ आण ववेक॥ ११॥
नारकी देवता तिर्यंच नी रे, जात च्यार च्यार लाख।
चवदे लाख जात मिनख नी रे, खमाऊं अरिहंत सिधां री साख॥ १२॥
वले बडा शिष्य सुवनीत छे रे, अंतेवासी अमोल।
आगे लेहर जे आइ हुवे रे, खमाऊं छूं दिल खोल॥ १३॥

एहवी आलवणा कांने सुण्या रे, आवे इधक वेराग।
करे ज्यारों केहवो कसू रे, त्यांरे माथे मोटो भाग॥ १४॥

दूहा

खांत करी खमावता, सर्व जीवां ने सांम।
बारूबार विशेष जी, आछी भात अमांम॥ १॥
बावीस टोला माहि तेहसूं, कडली चरचा रो पडियो हुवे कांम।
अवर ई अनमती अनेक ने, खमावे ले ले नांम॥ २॥
वले आप तणा गछ मांहिला, गछ बारे ब्रने कोय।
त्यांनें पिण खमावता, हरखत मन में होय॥ ३॥
हिवें सांवण तो सर्व नीकल्यो, आयो भादवो मास।
साधां ने तेडी स्वांमजी, बोले वचन विलास॥ ४॥

ढाल : ७

[मीठो छे पुन संसार में]

श्रावक श्रावका सुणता थकां, बोले अमृत वाय।
छेलें अवसर सांमजी, सीख देवे सुखदाय।
सुणजो सीख स्वामी तणी जी॥ १॥
थे आगे जाणता मो भणी, ज्यूं जाणीजो भारीमाल।
संका म आणजो सर्वथा, असल साधु री छे चाल। २॥
साध साधवी ए सर्व छे, त्यारां भारमलजी नाथ।
भार सूंप्यों छे टोला तिणो, कोइ म लोपज्यो यांरी बात॥ ३॥
अरिहंत आगन्या माहि रहे, जिण ने सरधजो साध साख्यात।
आगन्या लोपने उंधो पडे, त्यांरी म करज्यो पखपात॥ ४॥
इमही आगन्या सत गुर तणी, रहे भारमल जी माहि।
सुध आचार पाले सही, त्यांने मत दीज्यों चटकाय॥ ५॥
अरिहंत सतगुर नी आगन्या, कर्म जोगे लोपे कोय।
वंदणा परतीत करज्यो मती, साध म सरधज्यो तिणनें सोय॥ ६॥
साची सीख तीर्थ च्यार ने, विध सूं दीधी छे बताय।
इत्यादिक अनेक वचनां करी, कही कठा लग जाय॥ ७॥
हिवे सुतजुगी साम सूं, मुख सूं बोलें एहवी वाय।
म्हांरे विरहो पडतो दीसे पूज नो, आप जाता दीसो झंड माहि।
हाथ जोड़ी ने इम कहे॥ ८॥

वलता सांमी इम वागरे, मारे भंड तणी नही चाहि।
आगे अनंती वार जीवडो, गयो देवलोकां माहि ॥ ९ ॥
पुदगल सुख कारिमा, विणसतां नहीं लागे बार।
गृद्धी हुवे ते जाय नरक में, आगे खाय अनंती मार ॥ १० ॥
में आगे पुदगल खाधा मोकला, सार जांण जांण सोय।
देखतां देखतां विणसे गया, कांम न आवे आज मोय ॥ ११ ॥
तिण कारण हूं देवलोक नी, करूं नही बंछा कोय।
पोचा सुख पुदगल तिणा, मुगत सुखां सूं मन मोय ॥ १२ ॥
थे पिण बंछा पुदगल तणी, मूल म करज्यो मन माहि।
अफासू नैं अनएषणी, चित्त में धरज्यो मती चाहि ॥ १३ ॥
वले लोलपिणो करज्यो मती, माया ममता ने मार।
दोख बयालीस टालनें, असल लीज्यो सुध आहार ॥ १४ ॥
अरज्या भाखा नें एषणा, इत्यादिक आठ प्रवचन।
मन वचन काया करी, कीज्यो घणा जतन ॥ १५ ॥
साधपणो सुध पाल्ज्यो, चिंता फिकर म करज्यो तास।
म्हां सुइ मिलेला थ्यांनी मोटका, वले वेगो करोला मुगत में वास ॥ १६ ॥
चेलां री ममता करज्यो मती, लीजो सुध जोय जोय।
असल आचार पाले तको, काचो म घालज्यो गण में कोय॥ १७ ॥
असल आचार आछी तरें, पालज्यो प्रभू वचन पिछांण।
आग्या म लोपज्यो अरिहंत नी, तों वेगा पांमसो निरवांण॥ १८ ॥
हूं तो जातो दीसू परभवे, सीख दीधी छे थांने जांम।
लोक बतावे कोई आंगली, कदीय म कीजो एहवो कांम॥ १९ ॥
सुणज्यो सहूं स्वामी तणा, मूंढा हंदा रे बोल।
बोल सहू रे सुहामणा, आछा वले अमोल ॥ सु० २० ॥
ए साची सीख सांमी तणी, पालसी चतुर सुजाण।
सूरा वीरा धीरा तके, उजम मन माहि आण॥ २१ ॥

दूहा

आलवणा आछी करी, सीख दीधी वले सार।
उजम मन माहि आणंता, आग्या उपर धार॥ १ ॥
वले आयो पर्व पजूषणा, धर्म वधतो जाय।
सांमी कार्य किण विधें, सुधारे छे ाहि॥ २ ॥

हिवे पांचम रे दिन पूज जी, आप कीयो उपवास।
सुदि पख पांचम ने संवछरी, भाद्रवो थो मास॥ ३ ॥
पूज कीयो छठ पारणो, उलटो पडीयो आय।
किण विध करे संलेषणा, ते सुणजो चित ल्याय॥ ४ ॥

ढाल : ८

[धिन प्रभु रांम जी]

सातम आठम नम मुनीसर, अलप सो लीधो आहार वे।
दसम रे दिन चोखा चालीस, आसरें दस मोठ विचार वे।
धिन भीखू सांम जी, धिन त्यांरो नांम जी।
त्यां कीधो आछो काम जी, आछो जस अमांम जी॥धि०१॥
इग्यारस रे दिन अमूल आगारे, अेसो कीयो उपवास वे।
भली भावना भावतां भीखू, करता कर्मां रो नास वे॥ २ ॥
बारस रे दिन बेलो कीयो पूज, पचख दीया तीनूं आहार वे।
चतुर विचखण चिंतव्यो दीसे, हिवे वेगो करणो संथार वे॥ ३ ॥
माहोमा नर नारी कहे मुख सूं, जो स्वामी करे संथार वे।
तो मन रा मनोरथ आंपेंई पुरां, ओ आछो अवसर सार वे॥ ४ ॥
साधां माहो मा विचार करै ने, रायचंद जी ने मेल्यो सीखाय वे।
पूज नें कहें पुदगल हठीया दीसे, सुण ने सीह जिम उठता मुनिराय वे॥ ५ ॥
सांमली हाट सूं उठ मुनीसर, चलीया चलीया आय वे।
पकोइ हाट ने पका मुनीसर, देवे पको संथारो ठाय वे॥ ६ ॥
करे नमोत्थुणं अरिहंत सिधां ने, तीखे वचनें ताम वे।
घणा नर नारी देखतां सुणतां, संथारो पचख्यो भीखू सांम वे॥ ७ ॥
भादवा सुदि बारस भली तिथ, वार सोम विचार वे।
त्यां वेराग आयो ने संथारों ठायो, छेलो दुगरीयो श्रीकार वे॥ ८ ॥
धिन धिन कहे बहु नरनारी, धिन धिन केहता वेलां देव वे।
सुध साद मुनीसर मोटा, त्यांरी इंद्रादिक करे सेव वे॥ ९ ॥
घणा नर नारी आवे ने सीस नमावे, बोले बेकर जोड़ वे।
धिन हो धिन थे मोटा मुनीसर, कीधी बडां बडां री होड़ वे॥१० ॥
केइ सनमुख आया ने परणमें पाया, विकसित हुवे विलास वे।
खांत करी खमावे ने अघ उडावे, हीये आंण हुलास वे॥११ ॥

कहे केइ का अभिग्रहो एहवो कीयो थो, या साचो मत काढ्यो होसी सार बे ।
तो संथारो करसी नें जीतब सुधरसी, पको उतरसी पार बे ॥१२॥

दूहा

इण विध कीधो अभिग्रह, भोला लोकां ताम ।
बात सुणी कहे पचखीयो, संथारो भीखू स्वांम ॥ १ ॥
जे धेखी हूता जिण धर्म ना, ते चित में पाम्यां चमतकार ।
जाण्यों दीसे ओ मार्ग खरो, केइ वांदे बारूंबार ॥ २ ॥
संथारो चावो हुओ, घणा गावां नगरां माहि ।
केइ माहोमां इम कहे, आपे वांदो पूज रा पाय ॥ ३ ॥
गुण गावे मुख सूं घणा, भल भल भीखू स्वांम ।
इण दुखम आरा मझे, भलो सुधार्यो काम ॥ ४ ॥
थाणे कठेइ थपीया नही, इंद्री नही पडी हीण ।
व्याहार करता विचरता चालता, पका रह्या परवीण ॥ ५ ॥

ढाल : ६

[एक दिवस लंकापति क्रीडा नी उपनी रति]

संथारो चोखो कीयो, सरणो अरिहंत नो लीयो ।
सरणो लीयो, कीयो कार्य आतम तणो ए ॥ १ ॥
मुनी आण्यो मन संतोस ए, मेट्यो राग नें रोस ए ।
मेट्यो रोस ने, दोस कर्म नो टालीयो ए ॥ २ ॥
सुमता धारी सांम ए, भले भगवंत नो नाम ए ।
भजे नांम ने, कांम करे छे आतम तणो ए ॥ ३ ॥
हरख सहीत हुलास ए, तोडे छे कर्म पास ए ।
तोडे पास ने, आस तो मुक्त री ए ॥ ४ ॥
नर नारी बहु आवता, गुण भीखू रा गावता ।
गुण गावता, वचन बोलें मन भावता ए ॥ ५ ॥
धेखी पिण केइ आवता, खांत करी खमावता ।
खमावता , गुण भीखू रा गावता ए ॥ ६ ॥
बहु गावां नगरां तणा, नरनारी श्रावक श्रावका आया था घणा ।
आया घणा, दर्शन करवा गुरां तणा ए ॥ ७ ॥
आय पडे पूज रे पाय ए, वंदणा करे सीस नमाय ए ।
वंदणा करे, सीस नमाय आतम ने सुघ करें ए ॥ ८ ॥

ओर लोक अनेंक ए, करे गुण ग्राम वशेष ए।
करे वशेष, देख मुनी नें हरखत हुवे ए ॥ ६ ॥
कहे उतम थाए सांम ए, उतम कीधो कांम ए।
कीधो कांम, नांम जपीजे इण रिषी तणा ए ॥ १० ॥
नर नारी सइकडां आवता, बाजार माहि अमावता।
अमावता, गुण स्वांमी ना गावता ए ॥ ११ ॥
भांत भांत करे गुण ग्रांम ए, किसा किसा कहूं नांम ए।
किसा कहूं, नांम सांम में गुण घणा ए ॥ १२ ॥
सांमी भारमल जी आदि साध ए, त्यां कीधी सेवा बाध ए।
कीधी बाध, असमाध टालण स्वांमी तणी ए ॥ १३ ॥

दूहा

तेरस नो दिन आवीयो, ध्यावता निरमल ध्यांन।
सकें तो जाणुं स्वांम ने, उपनो दीसे अवधि ग्यांन ॥ १ ॥
साध बेठा सेवा करें, बोलता मीठी वांण।
श्रावक श्रावका हरष सूं, करे सांमी नां बखांण ॥ २ ॥
दिन दोढ पोहर ने आसरे, चढती बेला सोय।
वचन प्रकासे किण विधे, सांभलजो सहू कोय ॥ ३ ॥

ढाल : १०

[बीस विहरमान सदा शास्वता जघन्य०]

साधु आवे साहमां जावो, मुनी प्रकासें वांणं।
वले साधवीयां आवें बारें, स्वांमी बोले वचन सुहांणं।
भवीयण नमो गुर गिरवांणं, नमो भीखू चतुर सुजांणं ॥ १ ॥
के तो कह्यो अटकल उनमांनें, के कह्यो बुध प्रमाणं।
के कोइ अवधि ग्यांन उपनो, ते जाणे सर्व नाणं । भवी० ॥ २ ॥
केइ नर मुख सूं इम भाखे, सांमी रा जोग साधां में वसीया।
एतलें एक महूर्त आसरे, साध आया दोय तसीया ॥ ३ ॥
वकसत वकसत साधु वांदे, चर्ण लगावे सीसं।
नरनारी जाण्यों अवधि उपनो, साचो वसवावीसं ॥ ४ ॥
सांमी साधु आया जांणी, मस्तक दीधो हाथं।
एतले दोय महुरत आसरे, आयो साधवीयां रो साथं ॥ ५ ॥

वेंणीराम जी साध वदीता, साथें कुसाल जी आया।
साधवीयां वगतू जी मां डाही जी, प्रणमें भीखू रा पाया। भ० ॥ ६ ॥
परचा जूं जूं आय पुगे छे, नरनारी हरखत थावें।
धिन हो धिन थें मोटा मुनीसर, इम गुण भीखू ना गावें ॥ ७ ॥
आया ते साधु गुण गावें, भांत भांत प्रणाम चढावें।
थे मोटा उपगारी मेहमा भारी, आप तुले ओर कुण आवें ॥ ८ ॥
थे पका पका पाखण्ड हटाया, सुत्र न्याय बताया।
दांन दया आछा दीपाया, बुधवंता मन भाया ॥ ९ ॥
सावद्य निरवद भला निर्वेस्या, कीधा बुध प्रमाणं।
सुत्र न्याय सरधा सुध लीधी, धारी अरिहंत आणं ॥ १० ॥
साधां जांण्यो सांमी सूताने, घणी हुइ छे बारं।
आप कहो तो बैठा करां जब, भरीयो काय हुकारं ॥ ११ ॥
बेठा कर साधु लारे बेठा, गुण स्वांमी ना गावे।
बहु नरनारी दरसण देखी, मन में हरखत थावे ॥ १२ ॥
आयो आउखो अण चिंतवीयो, बेठां बेठां जांणं।
सुखे समावे बारज दीसत, चट दे छोड्या प्रांणं ॥ १३ ॥
अणसण आयो सात बगत रो, तीन बगत संथारं।
सात पोहर तिण माही बरतीया, पको उतारयो पारं ॥ १४ ॥
मांडी सीविने दरजी पूगा, कहे सूइ पाग में घाली।
इर्य-लोक पांमिया इधिको, चट स्वांमी गया चाली ॥ १५ ॥
समत अठारे साठे वरस, भाद्रा सुदि तेरस मंगलवारं।
पूज पोहता परलोक सरीयारी, गुण गावे नरनारं ॥ १६ ॥
दिन पाछिलो दोढ़ पोहर आसरे, उण बेला आउषो आयो।
दिवसे मरवो राते जन्मवो, कहे विरला ने थायो ॥ १७ ॥

दूहा

साध देही नें छोड़ने, अलगा बेठा जाय।
विरहो पड़ीयो छे पूजनो, समभाव रह्या सुख थाय ॥ १ ॥
अहो अहो अस्थिर संसार, संयोग जठेई वियोग।
पूज सरीखा पुरुष था, पोहता आज परलोग ॥ २ ॥
सुख दुख संसार में, हर कोइ कू होय।
ग्यांनी भुगते ग्यांन सूं, मूरख भुगतें रोय ॥ ३ ॥

तीर्थङ्कर चक्रव्रत मोटका, काल न छोड़े कोय।
जेतो आऊखो बांधीयो, तेतोई भुगते सोय ॥
साधां जाण्यो स्वांमी जी, पोहता परलोक रे माहि।
याद कीयां सिध अरिहंत ने, काउसग दीधा ठाय ॥

ढाल : ११

[रघुपति जीतो रे]

काल गया जांणी भीखू भणी हो, मेल्या मांडी रे माहि
जे म्हेंमा कीधी मांडी तणी हो, कही कठा लग जाय
स्वामी नो सुजस घणो।
अनेक रूपीया लगावीया हो, अनेक उछाल्या लार
अनेक देइ सोभाकरी हो, ते ग्रहस्थ नो ववहार। स्वामी०
जो विसतार करे मांडी तिणो हो, तो सुणताई इचरज थाय
पिण साधु रें मुंढे सोभे नहीं हो, तिण रो बुद्धवंत जाणसी न्याय।
संसार करतब सरावे नहीं हो, त्यांरे सावद्य जोग पचखांण
पिण बीती बात वरणवें हो, वागरे निरवद्य वांण
संइकरां नरनारी आवीया हो, छोडी घरां नां कांम
जाणे के मेलो मंडीयो हो, गावे भीखू ना गुण ग्रांम
वले सूंस लेवे केइ चूप सूं हो, उजम मन माहि आंण
सीलव्रत केइ आदरे हो, केइ छोडे काचो पांण
केइ छोडे नीलोतरी हो, केइ छोडे सूड निनांण
वेला तेला आदरे हो, अनेक प्रकारे आंण
वले च्यार तीर्थ आय मिल्या हो, स्वांमी तणे संथार
काल गया जब पूज जी हो, उहां पिण आहार पचख्या मन ध
जसकर्मी था जीवडा हो, जस गावे संसार
वले आगेइ जस हूतो दीसे घणो हो, वेगा पांमता दीसे भवपार

दूहा

आदि काढ़ी आदिनाथ ज्यूं, इण दुषम आरा माहि।
असल धर्म ओलखावियो, धिन भीखू रिषराय ॥
आपी चीजां अमोलख, घाली घण घट माहि।
थोरी सी प्रगट करूं, सांभलज्यो चित ल्याय ॥

ढाल : १२

• [उस रघुपति के धर्म सूरां जी सुखीया सगला]

भगवंत भाखी सरधा राखी, असल लीयो आचार।
आइच नी प्रे ग्यांन उद्योतो, मेट दीयो मिथ्यात अंधार।
रिष भीखू जी ना धर्म सूरां जी, सुख पावे श्रीकार॥ १ ॥
चन्द्रमा ज्यूं सोम निजर थी, दीठां दिल ठराय।
क्रोध करी कोइ कंटक आवे, सांमी देख सुख पाय। रिष०॥ २ ॥
इत्यादिक तीसोंइ उपमा, भीखू नें सोभाय।
चतुर होसी ते समजें जासी, भोलां ने खबर न काय॥ ३ ॥
चरचा वाला नें चरचा आपी, ग्यांन वाला नें ग्यांन।
प्रश्न वाला नें प्रश्न आप्यो, ध्यांन वाला नें ध्यांन॥ ४ ॥
दिष्टंत वाला नें दिष्टंत आप्यो, हेत वाला नें हेत।
क्रोध करी नही बोले किरवा, भली सीखावण देत॥ ५ ॥
संजम दे सिवपुर ना कीधा, वले आपी समकत सार।
समणोवासक कीया देइनें, श्रावक ना व्रत बार॥ ६ ॥
खमता दमता सुमता आपी, वले गंमता वचन बखांण।
दिढ़ता थिरता जमता जुरता, सुत्र न्याय जोड्या सुध जांण॥ ७ ॥
रागी ते तो राजी होसी, धेखी करसी धेख।
रागी धेखी नी खबर पडेसी, बखांण सुण्या वशेख॥ ८ ॥
वडा सिष बुधवंत वदीता, सारां सिरें सोभाय।
आचार्य पदवी त्यांनें आपी, भारमलजी मन भाय॥ ९ ॥
और साध सादवीयां नें सांमी, आपी सीख अमोल।
अरिहंत आग्या मांहि रहिज्यो, थांरो तीखो वधे ज्यूं तोल। १० ॥
साची वात बतावे सांमी, पोहतां परभव माहि।
गुणकरी स्वांमी था गिरवा, म्हांसू पूरा केम कहवाय॥ ११ ॥
नित नित नमो भीखू मुनीसर, हिवडें आंण हुलास।
मुगत हेतें करणी करने, तोड़ न्हाखो मोह पास॥ १२ ॥

दूहा

घणा वरसां लग सांमजी, आछो कीयो उपगार।
घणां जीवां ने प्रतिबोधीया, आर्य देस मझार॥ १ ॥

हिवे चोमासा सांमना, सांभलजो सहू कोय।
ववरो कहूं छूं तेहनो, नांम प्रणांमें सोय॥ २ ॥
आठ चोमासा आगे कीया, असल नही अणगार।
सतरां सूं साठां लगे, वरत्यो सुध ववहार॥ ३ ॥
साधपणों सतरें लीयो, साठां सुधा स्वांम।
चोमासा चमाली कीया, सुणो तेहना नांम॥ ४ ॥

ढाल : १३

[धिन धिन जंबू स्वाम नें तथा धिन धिन मली जिणं]

छ चोमासा केलवा कीया, सतरें इकवीसें पचीसे पिछाण हो, मुणिंद।
अड़तीसे गुणचासे उठावनें, हद कीधी कर्मां री हाण हो। मुणिंद।
धिन धिन भीखू अणगार ने॥ १ ॥
एक चोमासों वडलू कीयो, वरस अठारें विचार हो। मु०।
वीसें राजनगर कीयो, उठे कीयों घणो उपगार हो। मु०। धि०॥ २ ॥
कीया दोय चोमासा कंटालिये, चोवीसे अठावीसे आय हो। मु०।
तीन चोमासा वगडी कीया, सतावीसें तीसे छतीसें सुहाय हो। मु०॥ ३ ॥
दोय चोमासा माधोपुर कीया, इगतीसे अठचालीसे आंण हो। मु०।
चोतीसमो ने पेंतालीसमो, पीपार सेंहर पिछांण हो। मु०॥ ४ ॥
एक चोमासों आमेट में, बरस पेतीसें विचार हो। मु०।
सेंतीसे पादू कीयो, भलो कीयो उपगार हो। मु०॥ ५ ॥
एक चोमासों स्वांमजी, कीयो सोजत सेहर मझार हो। मु०।
समत अठारे तेपने, आछो कीयो उपगार हो। मु०॥ ६ ॥
नाथदुवारा सेहर में, तीन कीया चोमास हो। मु०।
तयालीसे पचासें छपने, तठे तोड्या केतारां कर्म पास हो। मु०॥ ७ ॥
दोय चोमासा पुर सेंहर में, सेतांलीसें ने सतावने होय हो। मु०।
एक सो नें एकवीस पोसा एक दिन आसरे, वले जुओ छोड़ायो घणो सोय हो। मु०॥ ८ ॥
पांच चोमासा पूज जी सेंहर खैरवे, उपगार कियो सरस हो। मु०।
छवीसे बतीसें एगतालीसे समें, छयालीसे चोपनें वरस हो। मु०॥ ९ ॥
सात चोमासा पाली सेहर में, तेवीसे तेतीसें चालीसें चोमाल हो। मु०।
बाबने पचावने गुणसठे सुखे सुखे, नेड़ो आयो काल हो। मु०॥ १० ॥
सात चोमासा सरीयारी सेंहर में, उगणीसे वावीसे गुणतीसे गिणाय हो। मु०।
गुणालीसे बयालीसे एकावने, साठे प्रभव पोहता मुनी आय हो। मु०॥ ११ ॥

सासण श्री वर्धमांन रो, आछो दीपायो भीखू स्वांम हो। मु०।
घणा जीवां नें प्रतिबोधनें, आप पोंहता सुध ठांम हो। मु० ॥ १२ ॥
पचीस वरस आसरे घर में रह्या, आठ वरस आसरें भेखधार हो। मु०।
एक दिन अधिको सतरे संजम लीयो, तिणमें बरत्या चालीनें वरस च्यार हो। मु० ॥ १३ ॥
सर्व आऊ सिततंर वरस आसरे, पाल्यौ भीखनजी स्वाम हो। मु०।
चमालीस वरसां मझै, सार्‍या घणां रा कांम हो। मु० ॥ १४ ॥
एकसो ने च्यार रे आसरे, दिख्या दीधी निज गण माहि हो। मु०।
एकवीस साध सतावीस साधव्यां, मेली प्रभव पोहता मुनिराय हो। मु० ॥ १५ ॥
हजारां श्रावक श्रावका कीया, सुलभ बोधि हजारां थाय हो। मु०।
गुणग्रांम करतां लाखां गमें, असा हुआ भीखू रिष राय हो॥ १६ ॥
मुनी मोसूं उपगार कीयो घणो, संजम दीयो सुखदाय हो। मु०।
जो अनेक प्रकारें गुण अखूं, तो ही उरण नहीं थाय हो। मु० ॥ १७ ॥
जनम मरण री लाय सूं, आप काढ्यो देइने साझ हो। मु०।
वले मारग वतायो मोख रो, धिन धिन भीखू रिषराज हो। मु० ॥ १८ ॥
चिरत कीयो भीखू तणो, सुणीयो जिम अटकल अणुसार हो। मु०।
सांसा सहीत ते निश्चै कह्यो हुवै, तो मिच्छामी दुकरो बारूंबार हो। मु० ॥ १९ ॥
जोड़ कीधी सरीयारी सेंहर में, पकें हाट विचार हो। मु०।
समत अठारें साठें समें, माहासुदि नवमी सनिसर वार हो। मु० ॥ २० ॥
ए गुण गाया भीखू तणा, कर्म काटण निरजरा करण हो। मु०।
हाथ जोडी ऋषि हेमो कहें, भव भव होजो भीखू रो मोनें सरण हो।मु०ध०॥२१ ॥

(इति श्री भीखू चरित्र संपूर्ण समत १८६६ रा वेसांख सुदी १४ वार व्रसपत पूजजी श्री भीखन जी सांमी तरा शिष्य लखत ऋषि रायचंद देस मेंबार गांम खमणोर ते मधे पूरो थयो भीखू चरित्र ।)

: २ :

भीखु चरित

[मुनि श्री वेणीदासजी कृत]

दोहा

अरिहंत सिद्ध नें आयरिया, उवझाया अणगार।
पांचू पद परमेस्वरु, त्यांनें जपतां जय जयकार॥ १ ॥
सासन नायक समरिये, महावीर मतिवंत।
मुक्त गया मोटा मुनि, सकल सिरे शोभंत॥ २ ॥
पांचू पद प्रणमी करी, भाव भगत भलि आंण।
कर्म काटण रे कारणें, कहुं भीखु चिरत बखांण॥ ३ ॥
आज्ञा लेई अरिहंत नी, वली सतगुरु आज्ञा श्रीकार।
गुण गाऊं गुणवंत ना, ते सांभलजो नरनार॥ ४ ॥
किहां उपना किहां जनमिया, परभव पहोता किण ठांम।
धुर सूं उत्पति त्यांरी कहुं, ते सुणज्यो शुध परिणाम॥ ५ ॥

ढाल : १

[धीज करे सीता सती रे लाल—ए देशी]

तिण काले नें तिण समें रे लाल, दुःखम आरा रें मांय रे। सोभागी।
जंबूद्वीप भरत खेत्र में रे लाल, मरुधर देश सुखदाय रे। सोभागी॥ १ ॥
भाव सुणो भीखु तणा रे लाल, हृदय शुध धार रे। सो०।
सतगुरु नें समस्यां थकां रे लाल, वरतसी जे जे कार रे। सो०। भा०॥ २ ॥
गांम कंटालियो सोभतो रे लाल, कांठे कोर कहाय रे। सो०।
कमधज राज करें तिहां रे लाल, वगतसिंघ सोभाय रे। सो०। भा०॥ ३ ॥
साहा बलुजी सोभता रे लाल, दीपादे तसु नार रे। सो०।
तिहां भिषनजी आवी अवतस्या रे लाल, सिंह सुपनो दीठो श्रीकार रे। सो०। भा०॥ ४ ॥
संवत सतरे बयासें समें रे लाल, आषाढ मास शुकल पष मांय रे। सो०।
बार मंगल तीखी तिथि तेरस सुणी रे लाल, जनम किल्यांणज थाय रे। सो०। भा०॥ ५ ॥
अनुक्रमें मोटा हुआ रे लाल, एक परण्या नार रे। सो०।
पछे शील दोनुंई आदस्यो रे लाल, कहें चारित्र लेस्यां लार रे। सो०। भा०॥ ६ ॥
वियोग पडियो त्रीया तणो रे लाल, सगपण मलता अनेक रे। सो०।
छता भोग छिटकाविया रे लाल, आयो वैराग वशेष रे। सो०। भा०॥ ७ ॥
संवत अठारें आठां वरस में रे लाल, लीधो द्रव्ये संयम भार रे। सो०।
गुरु किधा रूघनाथ जी रे लाल, पूरो ओलख्यो नहीं आचार रे। सो०। भा०॥ ८ ॥
काल कितोएक बित्यां पछै रे लाल, बांच्या सूत्र सिद्धंत रे। सो०।
ठीक पड्यां पछतावीया रे लाल, ए तो न दीसें संत रे। सो०। भा०॥ ९ ॥

यां थापिता थांनक आदर्‍या रे लाल, वले आधाकर्मी जांण रे। सो०।
मोल रा लिधा मांहे रहे रे लाल, यां भांगी भगवंत आंण रे।सो०। भा० ॥ १० ॥
ववेक विकर्ल बालक भणी रे लाल, मूंडता नहीं शंकें लिगार रे। सो०।
मत बांधण रे कारणें रे लाल, यां भांगी भगवंत कार रे। सो०। भा० ॥ ११ ॥
नित्य पिंड लागा बेंहरवा रे लाल, पोथ्यां रा गिंज ठांमो ठाम रे। सो०।
पडिलेह्यां बिण पडिया रहे रे लाल, यांरा किणविध सीझसी कांम रे।सो०भा०॥१२॥
भंड उपकरण नें पातरा रे लाल, वस्त्र उपघ अनेक रे। सो०।
इधिका राखे जाणने रे लाल, ए बूडें बिना ववेक रे। सो०। भा० ॥ १३ ॥
क्रिया में काचा घणा रे लाल, कह्यो कठां लग जात रे। सो०।
समकत रतन जि॥ भापियो रे लाल, ते पण न आयो हाथ रे। सो०। भा० ॥ १४ ॥

दूहा

विधसूं करी विचारणा, वारूंबार वशेष।
शुध मारग लेणो सही, परभव सांमो देख ॥ १ ॥
रखे जूठ लागे ला मो भणी, तो खप करणी बारूंबार।
सूतर सगला बांचणा, ज्यूं संक न रहें लिगार ॥ २ ॥
राजनगर भणतां थकां, उघडी अभिंतर आंख।
हूवें चारित्र ले शुध पालणो, छोड आतम रो वांक ॥ ३ ॥
में वैरागें घर छोडिया, न्यातीलां नें रोवांण।
इणविध जन्म पूरो कियां, मूल न होवें किल्यांण ॥ ४ ॥
वीर वचन विचारतां, ए निश्चे नहीं अणगार।
खप करी समझावां एहनें, मिल पालां शुध आचार ॥ ५ ॥

ढाल : २

[आ अणुकम्पा जिन आज्ञा मां—ए देशी]

एहवो विचार कियो तिण ठांमें, गाढी बात हिया में धार।
टोकरजी हरनाथजी भारिमाल, समझनें लागा पुज री लार।
भीखु चिरत सुणो भव्य जीवां। एआंकणी ॥ १ ॥
मुरधर देश में आया तेवारें, मिलिया सोजत सहर मझार।
गुरु नें कहे वीर वचन संभालो, आपां में नहीं छें शुध आचार। भी० ॥ २ ॥
देव अरिहंत नें गुरु निग्रंथ, केवली भाष्यो धर्म तंतसार।
तीनुंइ रत्न अमोलक जांणो, यांमें मेल म सरधो लिगार। भी० ॥ ३ ॥
ओर हि वस्तु में भेल पड्यां थी, चोपी वसत बिगडें छे वशेष।
तो पुण्य में पाप रो भेल किहां थी, सांसो हुवें तो सूतर ल्यो देख। भी० ॥ ४ ॥
आ शुध सरधा पण हाथे न आई, शुध किरीया थी पिण अलगा परिया।
आगम न्याय अजे शुध चालो, तो राखु माथें गुरु धरिया। भी० ॥ ५ ॥
भेषधार्‍यां तों मूल न मांनी, जब भीखु मन में विचार्‍यो एम।
उतावल किधां तो समझे नांहीं, धीरें समझावसां धर प्रेम। भी० ॥ ६ ॥

ुरु नें कहें चौमासो भेलो करस्यां, चरचा करां दोनूं रूडी रीत।
ुतर बांचेनें निरणो करस्या, खोटी सरधा छोडस्यां विपरीत। भी० ॥ ७ ॥
ुघनाथजी कहे चोमासो भेलो कियां, वले म्हारा चेलां नें लेवें समझाय। •
ाब भीखु कहें जड बाजां नें राखो, त्यांनें चरचा री समझ पड़े नहीं काय।भी०॥ ८ ॥
ुण विध उपाय घणाइ किधा, पिण चरचा न कीधी चित्त लगाय।
ुर्म घणा नें बोहल संसारी, ते तो किण विध आवे ठाय। भी० ॥ ९ ॥
ीजी वार मिलीया बगडी में, कह्यो थे तो वीर वचन वीसरीया।
ुनरणो करंता निश्चें न देष्या, जब भीखु तड़के तोड नीसरीया। भी० ॥ १० ॥
ुगडी सूं विहार कियो तिण वेला, बावल बाजवा लागी तांम।
ुजेंणा जांणें छतरी में बेंठा, रूघनाथजी पिण आया तिण ठांम। भी०॥ ११ ॥
ुोक घणां आयां शहर बारें, रूघनाथजी कहें भिखु नें बारूंबार।
ुोलो छोडे मती निकलो बारें, धीरप राखो बात विचार। भी० ॥ १२ ॥
ुात हमारी मांने लेवो, नहीं निबौला ओ दुषम काल।
ुध आचार साधु रो न चालें, भीखु किण विध बोले रसाल। भी० ॥ १३ ॥

दोहा

भीखु वलता भाषें भलो, में किम मांनां थांरी बात।
में निरणो कियो सूतर बांचनें, तिण में संक नहीं तिलमात ॥ १ ॥
छेहला दिन लग चालसी, तीरथ श्रुत अगाध।
में सुध साधुपणो पालसां, अरिहंत वचन अराध ॥ २ ॥
छतरी माहें बैठा थकां, मोह आंण्यो साप्यात।
मन माहें चिंता करी, पिण गरज न सरी अंसमात ॥ ३ ॥
उदेभांण बोल्यों इसो, आंसू पच करो केम।
टोला तणा धणी वाजनें, आछो न लागें एम ॥ ४ ॥
किणरो एक जायें जरें, चिंता हुवें अपार।
मारा पांच जायें परा, गण में पडें बगार ॥ ५ ॥

ढाळ : ३

[कामणगारो छै कामनी रे—ए देशी]

फेर बोल्या रूघनाथजी रे, थे जासो केतीएक दूर।
आगे थांरो पाछें मांहरो रे, हुं लोक लगाव सूं पूर।
चरित सुणों भीखु तणो रे। ए आंकणी ॥ १ ॥
भीखु वलतां भाषें भलो रे, जीवणो कितोएक काल।
परीसा षमसां षिम्या करी रे, नहीं लोपां जिनवर पाल। च० ॥ २ ॥
विहार कीयो बगडी थकी रे, हुआ रूघनाथजी लार।
वले चरचा कीधी वडलू मझे रे, ते सांभलजो नरनार। च० ॥ ३ ॥
रूघनाथजी बात इसडी कही रे, दुसम काल साप्यात।
चोखो साधपणो नहीं पले रे, थे मांन लो माहरी बात। च० ॥ ४ ॥

भीखु कहे जिन भाषियो रे, सूतर आचारांग माहि।
ढीला भागल इम भाषसी रे, हिवडां शुध न चलाय। च० ॥ ५ ॥
बल सिंघेण हीणा करी रे, पूरो न पलें आचार।
आगुच जिनजी इम भाषियो रे, इम केहंसी भेषधार। च० ॥ ६ ॥
साची सूतर तणी वारता रे, मांनी नही लगार।
समझाया समझे नहीं रे, जब कष्ट हुआ तिणवार। च० ॥ ७ ॥
भीखनजी आद दे तिहां रे, तेरे जणा हुवा त्यार।
फेर दीष्या लेवा भणी रे, करवा आतम नों उधार। च० ॥ ८ ॥
श्रावक पिण तिण अवसरें रे, जोधांणा शहर में तांम।
तेरे भायां समाई पोसा किया रे, तिण सूं तेरापंथी दियो नांम। भ० ॥ ९ ॥
पाखंड पंथ दूरो कियो रे, देख रह्या अरिहंत।
अनेरो पंथ मांनें नहीं रे, जांणो तेरापंथ तंत। च० ॥ १० ॥
गया देश मेवाड में रे, केलवा शहर मझार।
आग्या ले अरिहंत नी रे, पचख्या पाप अठार। च० ॥ ११ ॥
संवत अठारें सतरो तरें रे, आसाढ सुद पूनम जांण।
संयम दीधो स्वामजी रे, कर जिन वचन प्रमांण। च० ॥ १२ ॥
हरनाथजी हाजर हुंता रे, टोकरजी तीखा सुवनीत।
परम भगता सिप पाटवी रे, यां राखी पूज री परतीत। च० ॥ १३ ॥

दोहा

चारित लीधो चूंप सूं, पाषंड पंथ निवार।
भवियण रें मन भावता, हुआ मोटा अणगार ॥ १ ॥
उदे उदे पूजा कही, श्रमण निग्रंथ नी जांण।
तिणसूं पूज प्रगट थया, ए जिन वचन प्रमांण ॥ २ ॥
ओपमा तो आछी कही, श्रमण निग्रंथ नें श्रीकार।
चौरासी अति दीपती, कही सूत्र अणुजोग दुवार मझार ॥ ३ ॥
वले दसमां अंग इधिकार में, कही तीस ओपमा तंत।
श्रमण भीषू नें सोभती, भाष गया भगवंत ॥ ४
वले पटदश दीवी ओपमा, बहुश्रुती नें श्रीकार।
उत्तराध्ययन अध्यन इग्यारमें, श्री वीर कह्यो विसतार ॥ ५
इण अनुसारें ओलखो, भीखु नें भली भंत।
ओपम गुण आछा घणा, तिणरो पार न कोई पावंत ॥ ६ ॥
गुणवंत गुरु ना गुण गावतां, तीर्थंकर नाम गोत बंधाय।
हिवें ओपमा सहित गुण वरणवूं, ते सुणजो चित ल्याय ॥ ७ ॥

ढाल : ४

[हरियाने रंग भरिया जी—ए देशी]

आदिनाथ आदेसरजी, जिनेश्वर जगतारण गुरू।
धरम आद काढी अरिहंत, इण दुषम आरें करम कटीया जी।
प्रगटीया आद जिणंद ज्यूं, ओ इचरज इधिक आवंत।
साघ भीखु सुखदायाजी, मन भाया भवियण जीव ने। ए आंकणी॥१॥
स्याम वरण अति सोवेंजी, मन मोवें नेम जिणंद ज्यूं।
त्यांरी वांणी अमिय समांण, भवियण रे मन भाया जी।
चित्त चाया तीरथ चार में, मुनि गुण रत्नां री खांण। साघ० ॥ २ ॥
कालवादी आद जांणी जी, मत आंणी मारग उथापवा।
कुबध्यां केलवीया कुड, अें पाखंड घोचा पोचा जी।
कांइ ग्यान करे गिरवा मुनि, चरचा करी किया चकचूर। साघ० ॥ ३ ॥
संख उज्वल श्री कारी जी, जयधारी दोनूं दीपता।
नहीं बिगड़ें दूध लगार, ज्यूं थे तप जप किरीया कीधी जी।
कर लीधी आतम उजली, पयदश जति धर्म धार। साघ० ॥ ४ ॥
कमोद देश नो घोडोजी, अत सोरो करें सिरदार नें।
नहीं आंणें आहल लिगार, ज्यूं भवियण नें थें तारस्या जी।
उतारस्या पार संसार थी, सुखे जासी मोष मंझार। साघ० ॥ ५ ॥
सूर सिरोमण साचो जी, नही काचो लडतां कटक में।
सुवनित अश्व असवार, ज्यूं करम कटक दल दीघो जी।
जश लीधो जाझो जगत में, चढ सूतर अश्व श्रीकार। साघ० ॥ ६ ॥
हाथी हथिणां परवारें जी, बल धारें दिन दिन दीपतो।
बधें साठ वरस शुध मांन, ज्यूं थे तयाली वरस लग जाझाजी।
तप ताजा तेज तीखा रह्या, पराक्रम पिण परधांन। साघ० ॥ ७ ॥
वरषभ सिंग खंध भारी जी, सिरदारी गायां गण मझें।
थेट भार बहें भली भंत, ज्यूं थे गण भार थेट निभाया जी।
चलाया तीरथ चूंप सूं, सहु साधां में सोभंत। साघ० ॥ ८ ॥
सिंघ मिरगादिक नों राजा जी, अत ताजी डाढा तेज सूं।
ते जीव न जीपें जोय, ज्यूं आप केशरी नी परे गूंज्या जी।
सदा धूज्यां पाखंड धाक सूं, थां सूं गिज शक्यो नहीं कोय। साघ०॥६॥
वासुदेव बल जांण्यों जी, बखांण्यों वीर सिघंत में।
संख चकर गदा धरणहार, ज्यूं थांरा ग्यान दर्शन चारित तीखाजी।
नहीं फीका त्यांकर तेज सूं, पूज पाखंड दियो निवार। साघ० ॥ १० ॥
आखा भरत नो राजा जी, अति ताजा सेन्या सझ करी।
आंणें वेंरयां रो अंत, ज्यूं थे पाखंड सहु ओलखाया जी।
हटाया बुध उतपात सूं, ततव बताया तंत। साघ० ॥ ११ ॥

मकेंद्र सिरदारी जी, वज्रधारी सुर में सोभतो।
जखादिक जीपें जांण, ज्यूं सूतर वज्र श्रीकारी जी।
बलधारी बुध उतपात सूं, पूज पाडी पाखंड री हांण। साध० ॥१२॥
आइच उगां आकासें जी, विणासें तिमिर तेज सूं।
इविको करें उद्योत, ज्यूं थे अग्यान अंधार मिटायो जी।
वतायो मारग मुगत रो, घणा रा घट घाली जोत। साध० ॥१३॥
चंद सदा सुखकारी जी, परवारि ग्रह ना गण मझें।
सोमकारी सोभंत, ज्यूं चार तीरथ सुखदाया जी।
मन भाया भवियण जीव रें, भीखु भला जशवंत। साध० ॥ १४ ॥
लोक घणां आधारी जी, अत भारी धानां कर भर्‍यों।
ते कोठागार कहाय, ज्यूं ज्ञानादिक गुण भरिया जी।
परवरिया पूज प्रगट थया, आधार भूत अथाय। साध० ॥ १५ ॥
सर्व विरछा में अति सोवें जी, मन मोवें दीसें दीपतो।
जंबू सुदर्शन जांण, ज्यूं संता में सिरदारी जी।
मत भागे भीखु भरत में, उपना इचरिजकारी आंण। साध०॥ १६ ॥
सीता नदी सिरे जांणी जी, बखांणी वीर सिद्धंत में।
पांचसें जोजन प्रवाह, ज्यूं तप तेज अत तीखाजी।
नहीं फीका रह्याज फावता, सदा काल सुखदाय। साध० ॥ १७ ॥
मेरू नी ओपमा आछी जी, नहीं काची कही किरपाल जी।
ते उंचो घणो अतंत, ओषध अनेक छाजेंजी।
बिराजें गुण त्यांमें घणा, ज्यूं अें बहुश्रुती बुधवंत। साध० ॥ १८ ॥
सयंभूरमण समुद्र रूडो जी, पुरो पाव रजु पेंहलौ पड्यो।
परभूत रतन भरपूर, सागर जेम गंभीरा जी।
सूरवीरा गुण कर गाजता, सूतर चरचा में सूर ॥ साध० ॥ १९ ॥
अें पट्दश ओपमा आछी जी, कांई साची सूतर में कही।
बहुश्रुति नें श्रीकार, ईण अणुसारे जांणोजी।
पीछांणो कल्यो पारिखा, भीखु गुण भंडार ॥ साध० ॥ २० ॥
ओपमा अनेक गुण छाज्या जी, विराज्या गादी वीर नी।
पूज पट लायक गुण पाय, समुद्र जेम अथागा जी।
जल थागा जिन भाख्यो नहीं, ज्यूं गुण पूरा केम कहिवाय ॥ साध ॥ २१ ॥
पाट लायक शिष भाली जी, सूहाली परकत सुन्दरू।
भारमलजी गेहरा गंभीर, पदवी थिर कर थापी जी।
आ आपी आचारज तणी, जांणें सुविनीत सधीर ॥ साध० ॥ २२ ॥

दोहा

भगोती में भगवंत भाषीयो, वीसमा सतक मझार।
छेहला दिन लग चालसी, निरमल तीरथ चार ॥ १ ॥

वले उतराधेन दसमा अधेन में, गोतम प्रतें कह्यो भगवांन।
दुषम आरा तेहमें, जिण धर्म चालसी असमांन ॥ २ ॥
धणी बिना ते जुभसी, लेसी आगम वचन अराध।
तो हिवडां मुभ बेंठा थकां, समो एक म कर परमाद ॥ ३ ॥
वले वंक चूलीया में वारता, तेपना पछें विचार।
इधिक पूजा अरिहंत कही, श्रमण निग्रंथ नी श्रीकार ॥ ४ ॥
तिणसूं पूज पूजाविया, दिन दिन इधिक दयाल।
उपकार कीधा अति घणा, मेट्या मोह जंजाल ॥ ५ ॥
किहां किहां विचरया स्वामीजी, किहां किहां किया उपकार।
थोडो सों प्रगट करूं, ते सुणजो इधिकार ॥ ६ ॥

ढाल : ५

[भरत नरिंद तिण वार—ए देशी]

हाडोती ढूंढाड मभार, बले मरुधर देश मेवाड ॥ आछेलाल ॥
यां चारूंइ देशां में विचरीया जी ॥ १ ॥
पाखंड उठ्या अनेक, पूज मेट्या आंण ववेक ॥ आ० ॥
सूतर चरचा रा जोर सूं जी ॥ २ ॥
कीधा साध साधवीयां रा थाट, रह्या दिन २ इधिक गेंह घाट ॥ आ० ॥
श्रावक श्राविका कीया घणा जी ॥ ३ ॥
करता पर उपकार, आया मुरधर देश मभार ॥ आ० ॥
चरम उपकार हुओ घणो जी ॥ ४ ॥
चार भाया ने बायां सात, त्यां दीष्या लीधी जोडे हाथ ॥ आ० ॥
वेंरागें घर छोडियां जी ॥ ५ ॥
चांणोद आदे देइ जांण, पीपाड ताइ पीछाण ॥ आ० ॥
छेहला दर्शन दिधा सांम जी ॥ ६ ॥
गांमा नगरां करता उपकार, आया सोजत शहर मंभार ॥ आ० ॥
रायमलजी री छतरी में उतरया जी ॥ ७ ॥
हुकुमचन्द आछो आयो तांम, पूज्य नें वांद्या सीस नांम ॥ आ० ॥
विनती तो विध सूं करी जी ॥ ८ ॥
चौमासौ करो सिरियारी मांय, म्हारी पक्की हाट विराजो आय ॥ आ० ॥
पूज्य मांनें लीधी बीनती जी ॥ ९ ॥
बगडी कंटाले होय, विनती कीधी घणां जोय ॥ आ० ॥
चौमासा री अरज मांनी नहीं जी ॥ १० ॥
पूज्य आया सिरियारी चलाय, दियो चौमासो ठाय ॥ आ० ॥
आज्ञा ले पक्की हाट विराजीया जी ॥ ११ ॥
सिरियारी सोभे कांठा री कोर, जाडी महाजन वसती जोर ॥ आ० ॥
दोला २ कोट ज्यूं मगरा दीसता जी ॥ १२ ॥

भारमलजी खेतजी उदेरांम, रायचन्द ब्रह्मचारी तांम ॥ आ० ॥
जीवो मुनि वेंरागी भगजी भगत में जी ॥ १३ ॥
सप्त रिष सहित तिणवार, ग्यांनादिक गुण रा भंडार ॥ आ० ॥
संजम तप सुध अराधता जी ॥ १४ ॥
रागी घणा शहर मभार, ते वांदण आया नरनार ॥ आ० ॥
भवीयण रें मन भावीया जी ॥ १५ ॥
श्रावण मास मंजार, आवश्यक अर्थ विचार ॥ आ० ॥
लिख लिख शिष्य नें बतावता जी ॥ १६ ॥
गोचरी पिण फिरीया ठांम ठांम, दर्शन देवा कांम ॥ आ० ॥
श्रावण सुदि पूनम लगें जी ॥ १७ ॥

दोहा

चरम किल्यांण चढतो हुवौ, तिणरो सुणो सहु विस्तार ।
सरियारी में स्वाम विराजिया, हिवें भाद्रवा मास मंजार ॥ १ ॥
अल्प अशाता फेरा तणी, कांइक जणांणी जांण ।
और अशाता इधिकी न उपनी, प्रबल पुण्य प्रमांण ॥ २ ॥
पूर्व पाप प्रबल हुवें, ते रिवें घणा दिन रात ।
एहवी अशाता वेदनी यां रें नहीं, ऐ पदवी धर पूज्य विख्यात ॥ ३ ॥
हवें पजूसणां में परवरा, तीन टंक हुवें बखांण ।
नरनारी आवें घणा, सुणवा सुन्दर वांण ॥ ४ ॥
शुकल पष सुहामणो, मास भाद्रवो जांण ।
चौथज आई चांदणी, आयु नेंडो आयो पिछांण ॥ ५ ॥
सतजुगी नें स्वामी कहें, थे आछा शिष सुवनीत ।
साज दियो थे मों भणी, में संयम पाल्यो रुडी रीत ॥ ६ ॥
आगें टोकरजी तीखा हूंता, विनेंवंत विचार ।
भगत करी भारी घणी, सुवनीत हूंता श्रीकार ॥ ७ ॥
भारीमालजी सूं भेलप भली, रहीज रूडी रीत ।
जांणक पाछिल भव तणी, लगती हूंती प्रीत ॥ ८ ॥
यां तीनां रा साभ सूं, पाल्यो सुध संयम भार ।
चित्त समाध रही घणी, थे रह्याज एकण धार ॥ ९ ॥
उत्तराध्ययन पेंहलाव्ययन में, भाष गया वीर जिणंद ।
शिष सुवनीत हुवे सदा, तो गुरु नें रहें आंणंद ॥ १० ॥

ढाल : ६

[पंथीडा रे बात कहे ने धुर प्रेह थी रे—ए देशी]

देवे रे देवें सिखामण स्वामजी रे, शासण चलावण कांम रे ।
साधज रे साध श्रावक नें श्राविका रे, घणा सुणता तिण ठांम रे ।
सुणजो रे सुणजो सीख, स्वामी तणी रे । ए आंकणी ॥ १ ॥

मोनें रे मोनें जांणतां जिण विधें रे, राखता मुज परतीत रे।
तिमहिज रे तिमहिज परतीत राखजो रे, भारीमालजी री आहिज रीत रे। मु० ॥ २ ॥
आज्ञा रें आज्ञा लोपें एहनी रे, दोप लागां काढें गण बार रे।
तिणनें रे तिणनें साधु मत सरधजो रे, मत गिणजो तीरथ मंजार रे। मु० ॥ ३ ॥
आज्ञा रें आज्ञा आरावे एहनी रे, सदा रहें सुवनीत रे।
सेवा रे सेवा भगत कीजो तेहनी रे, आ जिन मारग री रीत रे। मु० ॥ ४ ॥
में पदवी रे पदवी दीधी छैं एहनें रे, भारलायक जांणें भारीमाल रे।
संका रे संका मूल म आंणजो रे, यांमें असल साधां री चाल रे। मु०॥ ५ ॥
कोइ दोप रे दोप लगावें गण मझे रे, वले कर्म जोगें लगावें कूर रे।
तो कांण रे कांण म रापजो तेहनी रे, प्राछित न लेतो करजो दूर रे। मु० ॥ ६ ॥
शुध रे शुध साधां ने सेवजो रे, अणाचारी सूं रहेजो दूर रे।
आ छेली रे छेहली सिखामण धारजो रे, ज्यूं करम हूवें चकचूर रे। मु० ॥ ७ ॥
उसना रे उसना नें पासत्था रे, कुशीलिया परमादि पिछांण रे।
अपछंदा रे अपछंदा आप छांदें रहें रे, त्यां भांगी हें भगवंत आंण रे। मु० ॥ ८ ॥
ए पांचां ने रे पांचां ने प्रभु नपेधिया रे, गिन्यांता निशीथ विशाल रे।
त्यांरो संग रे संग परचो करणो नहीं रे, आ बांधी भगवंत पाल रे। मु० ॥ ९ ॥
आणंद रे आणंद श्रावक अभिग्रह लियो रे, जिन मत थी न्यारा जांण रे।
तियांरी सेवा रे सेवा भक्ति करूं नहीं रे, पेहली बोलण रा पिण पच्चखाण रे। मु० ॥१०॥
वीर रे वीर जिणंद बखांणियों रे, ओ आणंद अभिग्रह श्रीकार रे।
आहीज रे आहीज रीत आराधजो रे, ज्यूं पांमो भवजल पार रे। मु० ॥ ११ ॥
सगला रे सगला साध नें साधवी रे, राखजो हेत वशेष रे।
जिण तिणनें रे जिण तिण नें मत मूंडजो रे, दिक्षा दीजो देख देख रे। मु० ॥ १२ ॥
आ दीधी रे दीधी सीखामण स्वामजी रे, एकंत तारण तांम रे।
ओर रे और कारण त्यारें को नहीं रे, तिणसूं सीझे आतम कांम रे। मु० ॥ १३ ॥

दोहा

प्रथम वचन श्री पूज्य रा, चरम वचन चिमत्कार।
उपदेश तो आछो दीयो, सांभलतां सुखकार ॥ १ ॥
शुध गति जांणो जेहनें, जिसाइज रहें परिणाम।
गंगा नीर ज्यूं निरमलो, चित्त रहें एकण ठांम ॥ २ ॥
परम भगता शीष आद दे, ठेठ सुधी पछयो वारूंबार।
कांइ अशाता आपरे, स्वामी कहें नहीं रे लिगार ॥ ३ ॥
श्री वीर मुगत विराजतां, सोहलें पोंहर कियो बखांण।
इण दुषम आरे पांचमें, तिहहिज भीखु जांण ॥ ४ ॥
वले उपदेश दिधो किण विधें, किण विध बोल्या वांण।
भव जीवां तुमें सांभलो, चित्त नें आंण ठिकांण ॥ ५ ॥

ढाल : ७

• [चतुर नर बात विचारो एह—ए देशी]

भारमलजी आद साधां भणी रे, श्री पूज्य कहें छैं बोलाय।
चरम सीखामण माहरी रे, सांभलजो सुखदाय।
भविक रे भिखु दीया उपदेश। ए आंकणी ॥ १ ॥
म्हे तो जाता दीसां परभवे रे, संका न दीसें कांय।
मरण रो भय म्हारे नहीं रे, हिवडें हर्ष अथाय। भ० ॥ २ ॥
में चारित दियो घणा जीवां भणी रे, समकत पमाही रूडी रीत।
श्रावक श्राविका किया घणा रे, एकंत तारण नी नीत। भ० ॥ ३ ॥
में जोडां कीधी जुगत सूं रे, समझाया नर नार।
उणायत रही नहीं रे, म्हारा मन मंजार। भ० ॥ ४ ॥
थें पिण रहीजो निर्मला रे, मोह म कीज्यो मन माहि।
अरिहंत वचन अराधजो रे, ज्यूं मोसूं बेगा मलोला आय। भ० ॥ ५ ॥
रायचंद ब्रह्मचारी नें इम कहें रे, तूं छं बालक बुधवांन।
मोह म आंणे माहरो रे, राखजे रुडो ध्यान। भ० ॥ ६ ॥
ब्रह्मचारी कहें श्री पूज ने रे, आप जावो शुध गति मांय।
पिंडत मरण करो भलो रे, हूं मोह आंणू किण न्याय। भ० ॥ ७ ॥
वले पूज्य वांणी इण विध वदें रे, थें आराधजो आचार
इर्या भाषा नें एषणां रे, लोपज्यो मती लिगार। भ० ॥ ८ ॥
भंड उपकरण लेतां मेलतां रे, परठतां पूंजतां तांम।
जयणा कीज्यो जुगत सूं रे, ज्यूं सीझे आतम कांम। भ० ॥ ९ ॥
शिष शिषणी उपगरण ऊपरे रें, ममता म कीज्यो कोय।
ममता मोह कियां थकां रे, करम तणो बंध होय। भ० ॥ १० ॥
पुद्गल ममता कोइ मत करों रे, इण ममता थी दुःख थाय।
सुमता सदाई राखजो रे, ज्यूं वेगा जावो मुगत गढ मांय। ग० ॥ ११ ॥
भगतवंत भारमलजी रे, बोले एहवी वाय।
विरहो पडें दर्शन तणों रे, हिवें पूज्य बोलें सुखदाय। भ० ॥ १२ ॥
थें संयम आराध्यां सुर होसे रे, मुज थकी मोटा अणगार।
महाविदेह खेतर मझे रे, त्यांरा देखजो दरसण दीदार। भ० ॥ १३ ॥

दोहा

सतजुगी कहे श्री साम नें, आप जासो झिड रे मांहि।
स्वाम कहें सुण साधजी, म्हारे नहीं झिड री चाहि ॥ १ ॥
पुदगलिक सुख छें पांवला, में भोगव्या अनंती वार।
त्यांरी वांछा मूल करूं नहीं, म्हारे जांणो मुगत मंझार ॥ २ ॥
हिवें सकाम मरण करें स्वामिजी, पंडित मरण पिछांण।
आलोयणा आछी करी, होय गया सुध सुजांण ॥ ३ ॥

सदा निर्मल था स्वामी जी, पिण मरण अंत विशेष।
नरमाई करें घणी, परभव साहमो देख ॥ ४ ॥
आलोयणा किण विध करें, तिण विध रा हूंता जांण।
वचन अमोलष वागरे, ते सुणजो चतुर सुजांण ॥ ५ ॥

ढाल : ८

[मारग वहें रे उतावलो—ए देशी]

अरिहंत सिद्ध री साख सूं, वड़ा शिष श्रीकार।
बले सतजुगी री साख सूं, वचन काढ्या मुन वार।
सुणजो आलोयणा स्वामि तणी ॥१॥ ए आंकणी ॥
चौरासी लख जीवायोन नें, खमावुं कर ख्यंत।
राग द्वेष नहीं म्हारे, ते देख रह्या भगवंत। सु० ॥ २ ॥
साध सुवनीत हुआ घणा, केई कुशिष अवनीत।
कठण वचन कह्या तेहनें, खमावुं रूडी रीत। सु० ॥ ३ ॥
साधवियां सतियां मझे, केएक करडी विचार।
कठण सीख दीधी हुवें, तो खमावुं वारूंवार। सु० ॥ ४ ॥
श्रावक नें बले श्राविका, केईकांनें करडा देख।
कठण वचन कह्या हुवें, खमावुं छूं विशेष ॥ सु० ॥ ५ ॥
च्यार तीर्थ नें शुध चलावया, सीख दीधी सुखदाय।
करडो काठो लागो हुवे, तो त्यांनें दीजो खमाय। सु० ॥ ६ ॥
में चरचा कीधी चूंप सूं, घणां सूं ठाम ठाम।
करलो वचन लागो जांणीयो त्यांनें, खमाऊं ले ले नांम। सु० ॥ ७ ॥
जिन मार्ग रा धेषी छें घणा, छिद्र पेही अथाय।
खेंद आइ हुवें किण ऊपरे, तो देउं सहु ने खमाय। सु० ॥ ८ ॥
त्रस थावर आदे जीव री, हिंसा लागी हुवे कोय।
मन वचन काया करी, तो मिच्छामि दुक्कडं मोय। सु० ॥ ९ ॥
क्रोध मान माया करी, लोभ भय वश होय।
जे कोई झूठ लागो हुए, मिच्छामि दुक्कडं मोय। सु० ॥ १० ॥
कोई अदत्त मुनें लागो हुए, सूतां जागतां जोय।
ममता धरी होवें मैथुन सूं, ते आलोयण खाते होय ।सु०॥११ ॥
शिष शिषणी वस्त्र पात्र ऊपरें, मूर्छा वंछा कीधी देख।
मन वचन काया करी, मिच्छामि दुक्कडं विशेष। सु०॥ १२॥
एहवी आलोयणा सुणें, आंणें मन वेंराग।
ते पिण कर्म खपावें आपरा, पांमें सुख अथाग। सु० ॥ १३ ॥

दोहा

पांचूइ आश्रव माहिलो, लागो जांण्यो किणवार।
व्रत सांभल्या स्वामजी, आलोया अतिचार ॥ १ ॥

बडा शिष सुवनीत री, जुगती मिलीज जोड।
लेंहर कांई राखी नहीं, काट्या करम कठोड़ ॥ २ ॥
थोडी अशाता फेरा तणी, और अशाता नहीं तिणवार।
पट शिप सेवा साचवें, एहवा पुण्य संच्या सार ॥ ३ ॥
आज्ञा ऊपर आदरी, भीखु भलेंज भाव।
जनम सुधारचो जुगत सूं, जांण तिरण रो डाव ॥ ४ ॥
सपरी करी संलेषणा, अणसण रो इधिकार।
भाव धरि भवियण सुणो, आलस सर्व निवार ॥ ५ ॥

ढाल : ६

[षड षानी—ए देशी]

भाद्रवा शुक्ल पप पंचमी प्रगटी, चोथ भगत चोही आहार ठावें।
अशाता इधिक तिरपा तणी उपनी, सूर कायरपणो नाहीं लावें।
कर हो जीव तूं भजन भीखु तणो ॥ए आंकणी ॥१॥
पारणो किधो छठ प्रभात रो, ओषध अल्प सो आहार लीयो।
ते पिण आहार समो नहीं प्रगम्यो, तिण दिन तीनूं आहार नो त्याग कियो।क०॥२॥
सातम आठम आहार लें अल्प सो, ततषिण त्याग तो कर लेवें।
पुद्गल स्वरूप तो पूज पिछांणनें, आशा वंछा सहु मेट देवें। क० ॥ ३ ॥
खरें मतें कहें खेतसी खांचकर, तडके त्याग रो नहीं कहिणो।
पूज कहें देही पातली पारणी, तेरस दिन तो अणसण लेणों ॥ क० ॥ ४ ॥
वीरचो शेठ तो श्रावक सनमुखे, विविध प्रकार सुखडी आपें।
पूज्य कहे वंच्छा नहीं माहरे, थिर कर मोष सूं प्रीत थापे। क० ॥ ५ ॥
भाद्रवा सुकल नवमी तणें दिन, पूज कहें आहार नो त्याग लेउं।
सतजुगी कहे मुझ हाथ नो चाखिए, चरिम आहार थोडो आंण देउं ॥ क० ॥ ६ ॥
अल्प सो आहार आंण्यों स्वामि खेतसी, चाख कें ततपिण त्याग कीधो।
ओ तो मन रापीयो सुविनीत शिष तणो, पिण इच्छा सूं आहार त्यां न्हां लीधो।क०॥७॥
दशमी तणें दिन परम भगता शिष, पूज जी सूं एम भाषे।
चालीस चावल दश मोठ रें आसरे, वीनती मांनकें तेह चाखे। क० ॥ ८ ॥
इग्यारस तो पूज आहार त्यागें दियो, अमल पांणी रो आगार राख्यो।
हिवें मुझनें आहार लेतो मत जाणजो, वचन अमोलष एम भाख्यो। क० ॥ ९ ॥
सनमुख पधारिया तावडो आवियां, बारस बेलो थिर कर ठायो।
सक्त इसडी रही आहार कियां विनां, एह अचर्य[1] इधिक आयो ॥ क० । १० ॥
जीवण आछें अरज कीधी हाट री, तोही पूज पक्कीहाट आय बेंठा।
सेन सिपा कीयो विपरांम त्यां लियो, स्वाम तो मन माहें इधिक सेंठा।क०॥११॥
मुखे सुता देख पूज परम गुरु, रिख रायचन्द आय एम बोलें।
किरपा तो कीजिये दरशण दीजिये, ताम तो पूजजी नेंण खोले। क० ॥ १२ ॥
पूज सूं वीनवें पराक्रम हीणा पड्या, ब्रह्मचारी विनें सूं एम बोलें।
केसरी नी पडें वेण हीवडें धरी, तांम ते आपरो तेज तोलें। क० ॥ १३ ॥

१—अचर्य=अचरज=आश्चर्य

दोहा

बुलावो भारमलजी भणी, वले सतजुगी सुजांण।
याद करतां आविया, चटके ऊभा आंण ॥ १ ॥
अरिहंत सिध प्रणमी करी, पोतेइ किया पच्चपांण।
तिनू आहारा रा त्याग जाव जीव छें, ऊंचे सुर बोल्या इम वांण ॥ २ ॥
कहें प्रथम भगता शीप पाटवी, क्यूं न राख्यो अमल आगार।
स्वाम कहें सेंठाइ किसी राखणी, किसी करणी देही री सार ॥ ३ ॥
बारस दिन बेला मभे, आसरे दोय घड़ी दिन जाण।
कीयो संथारो स्वामजी, मन में उज्जम आंण ॥ ४ ॥
खबर हुआं अणसण तणी, घणा आवें दर्शन काज।
वेराग वधीयो अति घणो, कहे धिन धिन ए मुनिराज ॥ ५ ॥

ढाल : १०

[सहेल्या ए वांदो रूडा साध—ए देशी]

केई कहे संथारो सीभे स्वांम रो, त्यां लग माहरे हों काचा पाणी रा पच्चषांण।
केई कहें कुशील रा त्याग छें, घणां छोड्यो हो सिनान सुमता आंण।
भव्य जीवां तुमे वांदो भीखु भाव सूं ।१॥ए आंकणी॥
केई अन्न आरंभ नहीं आदरे, केई करे हो छही काय हणवा त्याग।
केइकांरे नीलोती खांणी नहीं, इत्यादिक हो हुओ घणो वेंराग ।भ०॥२॥
केइकां धीज थापी थी धेषीयां, ते पिण इचर्य हो पाम्या तिणवार।
अनमी घणा आयें नम्या, त्यां पिण जांण्यो हो ओ मारग तंतसार।
ओ तो पूज जी संथारो कियो सोभतो ।भ०॥३॥
पडिकमणो किया पछें पूजजी, शिष नें कहें हो विध सूं करो बखांण।
शिष कहे बखांण रो कारण किसों, पूज बोल्या हो पाछा इमृत वांण ।भ०॥४॥
आर्यां क्यांइ अणसण लियो होवे, तिण ठांमें हो जाय करां छां बखांण।
मुझ अणसण में उच्छरंग सूं, उपदेश हो देवो मोटे मंडाण ।भ०॥५॥
बखांण कियो विसतार सूं, सुषें सूता हो पाछिली रात मांय।
जेतोजी आया समाइ करवा भणी, तिण प्रणम्या हो श्री पूजजी रा पाय ।भ०॥६॥
गुण ग्रांम किया त्यां अति घणा, धिन धिन कहे हो आप मोटा अणगार।
पूज कहें परिणाम चोषा माहरा, तिणरी संका हो मत आंणजो लिगार ।भ०॥७॥
आपेंइ पांणी पीधो पूजजी, पोहर दिन हो जाभेरो आयो जांण।
चरिम शब्द चारूं कह्या, इचर्यकारी हो बोल्या इमरत वांण ।भ०॥८॥
साध श्रावक सुणतां कह्यो सांमजी, सुंस व्रत हो करावो सेर मांहि।
वले कह्यों सात्र आवें अछें, आरजीयां हों आवें छें चलाय ।भ०॥९॥
चोथों शब्द इसडो कह्यो, धीरां बोल्या हो तिणरी विगत न कांय।
गुलोजी लूण्यों कहें स्वामजी तणो, मन गयो हो साधा आर्यां रे माहि ।भ०॥१०॥

भारमलजी स्वामी इम विनवें, थांनें होज्यो हो स्वामी सरणा चार।
किण ही माहें मन मत राखजो, आप किधो हो घणा जीवां रो उधार।भ०॥११॥
अवधि ज्ञान उपनो नहीं जांणीयो, तिणसं पाछो हो नहीं पूछ्यो लिगार।
यां जांण्यो मन साधां में गयो, नहीं किधो हो इण बात रो विचार।भ०॥१२॥
घणा गांवां रा श्रावक श्राविका, दरसण करवा हो आया बहु थाट।
चरिम ओच्छव करें चूंप सूं, इसडा हुआ हो सिरियारी में गेहघाट।भ०॥१३॥

दोहा

पाली रा चलीया पावरा, दोय साध आया तिणवार।
रिख वेणीदास कुशाल जी, देखी इचरिज पाम्या नरनार॥ १॥
पग प्रणम्या श्री पूज रा, दिधो माथे हाथ।
साता पूछ्या मानी करी, पिण मुख सूं न कीधी बात॥ २॥
दुषम आरा तेहमें, अवधि वागरणौ दुर्लभ विष्यात।
संयम अराध्यो स्वामजी, तिण सूं कही अल्प सी बात॥ ३॥
छेहडै स्वाम भिक्षु तणै, अवधि उपनो जणाय।
निश्चै तौ जांणें केवली, ताण न करवी ताहि॥ ४॥

ढाल : ११

[हणमत गायलो रे—ए देशी]

दोनूइ साव आया तके रे, बोलें बे कर जोड।
दरशन दीठा दयाल रा रे, पुगा मन रा कोड।
भीखु भजो भाव सूं रे।
त्या सुधास्या भव दोय, बुधवंत जसवंत होय।
यां समो अवर न कोय, इण आषा भरत में जोय। भी०॥ १ ॥
॥ ए आंकणी॥
रिख वेणीदास इम विनवें रे, थांनें होज्यो सरणा चार।
तुम सरणो मुझ भव भव रे, होज्यो बारंबार। भी०॥ २ ॥
जिसोइ मारग जिन तणो रे, जिसोइ जमायो आप।
दिन दिन इधिका दीपिया रे, टाल्या घणां रा संताप। भी०॥ ३ ॥
स्तुति अरिहंत सिध तणी रे, संभलाइ श्रीकार।
जांण्यो भगत कीहां थी भीखु तणी रे, इण अवसर मझार। भी०॥ ४ ॥
इतलें आइ तिन आरज्यां रे, बगतुजी झुमां डाइजी जांण।
इचरिज इधिको उपनो रे, पूज कही ते बात मलि आंण। भी०॥ ५ ॥
चार तीर्थ भल भाव सूं रे, देखें दरशण दीदार।
भगत करें भीखु तणी रे, जांणें अवसर सार। भी०॥ ६ ॥
बेठा हुआ तिण अवसरे रे, ध्यान आशण श्रीकार।
जांणेके जिनजी विराजिया रे, न जांणी अशाता लिगार। भी०॥ ७ ॥
तेरे खंडी त्यारी हुई रे, जांणक देव विमांण।
तंतो तंत इसडो मिल्यो रे, पूज बैठांड छोड्या प्रांण। भी०॥ ८ ॥

सुकल पख सोहामणो रे, मास भाद्रवा मांहि।
तेरस तिथ दिन पाछलो रे, आसरे दोढ पोहर गिणाय। भी०॥ ९ ॥
प्रथम पद परमेसरू रे, त्यांरा किल्यांण पांच प्रकार।
इणविध किल्यांण त्यांरा हुआ रे, इण दुसम काल मभार। भी० ॥ १० ॥
सिरियारी नें स्वामजी रे, चावी कीघी ठांम ठांम।
जनम सुधारयो जुगत सूं रे, त्यांरा लीजें नित प्रत नांम। भी० ॥ ११ ॥
साध तो भीखु सारिखा रे, आखा भरत रे मांय।
हुआ नें होसी वले रे, पिण आज न कोइ दिखाय। भी० ॥ १२ ॥
हिवें सोध्या तो पावें नहीं रे, भीखु सरीखा साध।
करलो कांम पडसी चरचा तणो रे, तिण वेला आवेला याद। भी० ॥ १३ ॥

दोहा

तियालीस वरसां लगें, कांइक जाभेरो जांण।
संयम पाल्यो स्वामजी, सुमता रस घट आंण॥ १ ॥
दिन दिन इधिका दीपिया, तेज प्रताप पिछांण।
जिन मारग जमायो जुगत सूं, अखंड बरताइ आंण॥ २ ॥
आंख्यां आद इंद्रा तणो, रह्योज रूडो तेज।
शरीर निरोगो निरमलो, तिण दीठां उपजें हेज॥ ३ ॥
किया चोमासा चूंप सूं, चतुर नें चालीस।
इधिक आउखो आछो हुओ, ज्यूं दीप्या जगदीस॥ ४ ॥
किहां किहां चोमासा किया, किहां किहां किया उपकार।
नांम लेई निरणो कहूं, ते सुणजो विसतार॥ ५ ॥

ढाल : १२

[जीव मोह अणुकम्पा न आंणीए—ए देशी]

छ चोमासा किया केंलवें, सतरे एकवीसें जांण जी।
पचवीसे अडतीसे गुणचास में, लीज्यो अठावनो पिछांण जी॥
सुणजो चोमासा स्वामी तणा। ए आंकणी॥ १ ॥
तिण ठांमें उपकार हूवो घणो, मोषम सींघजी ठाकुर जांण जी।
दरशन करतो दयाल रा, वले सुनतो आय बखांण जी। सु० ॥ २ ॥
सात चोमासा सिरियारी किया, उगणीसें बावीसें गुणतीसें जोयजी।
गुणचालीसें बियालीसें एकावनें, साठें चरम किल्याणज होय जी। सु० ॥ ३ ॥
सात किया पाली में पूजजी, तेवीसें तेतीसें जांण जी।
चालीसें चमालीसें बावनें, पंचावनें गुणसठें बखांण जी। सु० ॥ ४ ॥
पांच चोमासा किया खेरवें, छाईसें बतीसें विचार जी।
एकतालीसें छेंयालीसें चोपनें, तठे कियो घणो उपकार जी। सु० ॥ ५ ॥
बगडी में पूज विध सूं किया, तीन चोमासा श्रीकार जी।
सत्तावीसें नें तीसें समे, तीजो छतीसें लीजो विचार जी। सु० ॥ ६ ॥

नाथद्वारे में नीका किया, तीन चोमासा तेंहतीक जी।
त्यालीसें पचासें छपनें, त्यांरी रूडी राखजो ठीक जी। सु० ॥ ७ ॥
कंटालिया मांयें किरपा करी, पूज कीया चोमासा दोय जी।
चोबीसें अठावीसा वरस में, जिहां जन्म किल्यांणज जोय जी। सु० ॥ ८ ॥
पीपाड में पाखंड हूंता घणा, दोय चोमासा दिया ठाय जी।
चौंतीसें नें पैंतालीस में, घणु दियो मिथ्यात मिटाय जी। सु० ॥ ९ ॥
गढ रतणभमर किलो तिहां, तलेंटी माधोपुर मंझार जी।
इकतीसें अडतालीसें दोनूं किया, तिहां इधिक हुओ उपकार जी। सु० ॥ १० ॥
दोय चोमासा किया पुर सहर में, तिहां उपकार जाणो जांण जी।
सेतालीसें नें सतावनें, ते गिण लीजो चुतर सुजांण जी। सु० ॥ ११ ॥
अठारा रे वरस वडलू कियो, बीसें राजनगर विचार जी।
पेंतीसें आंमेट पादू सेंतीसमें, तेपनें सोजत सहर मंझार जी। सु० ॥ १२ ॥
पनरे गांमां में किधा पूज जी, चुमालीस चोमासा सार जी।
ऐ परम भगता शिष्य पाटवी, घणा रह्या पूज रे लार जी। सु० ॥ १३ ॥

दोहा

आद हुआ आदेसरू, आदिनाथ अरिहंत।
तीजा आरा तेहमें, मुगत गया मतवंत ॥ १ ॥
त्यां आद काढी जिन धर्म री, जुगलवारो मिटाय।
संसारी नें धर्म री, दीधी रीत बताय ॥ २ ॥
आद काढी अरिहंत ज्यूं, भीखु भलाइज साध।
आरा दुषम तेहमें, लीधा अरिहंत वचन अराध ॥ ३ ॥
भव्य जीवां रा भाग सूं, किधो अतंत उद्योत।
मत सुरत बलै मोटा मूनी, घणा घट घाली जोत ॥ ४ ॥
उपकार कीधो अति घणो, पूरो केम कहिवाय।
थोडो सो प्रगट करूं, ते सुणजो चित्त ल्याय ॥ ५ ॥

ढाल १३

[पूज्य पधारो हो नगरी सेविया—ए देशी]

साध सावधी श्रावक श्राविका, ए थाप्या तीरथ चार हो। महामुनि।
जिन मारग जमायो हो मुनिवर जुगत सूं, घणो पाखंड दियो निवार हो ॥ महा० ॥
थे भलां नें अवतरीया भीखु भरत क्षेत्र में। ए आंकणी ॥ १ ॥
लोकालोक नवोइ ततव तणा, वले दया दान दिपाय हो। महा०।
ज्यांरा भेद जथातथ भिन भिन भाषीया, जिनवर ज्यूं दियो जमाय हो। महा। थे०॥ २॥
चारित लीयो एक सौ च्यार आसरे, पूज री प्रतीत मन धार हो। महा०।
केइकां नें पाषंड मां सूं पाचनें, आप दीधा पार उतार हो। महा०। थे०॥३॥
जोडां कीधी हो मुनिवर जुगत सूं, सहंस अडतीस रें आसरे गिणाय हो। महा० ॥
निरणा न्याय बताया निरमला, जांणें भाष गया जिनराय हो। महा०।थे०॥४॥

कृत शुध स्वरूप बतावियो, निजगुण परगुण न्याय हो । महा० ।
द्य निर्वद्य न्यारा छाणीया, नहीं दीसें किणही मत मांय हो ।महा०।थे०।।५।।
ड हाडोती वले कछ देस में, मुरधर देश मेवाड हो । महा० ।
। रात दिवस रटे राम नांम ज्यूं, आप इसरा किया उपकार हो ।महा०।थे० ।।६।।
वंचना री करें पर भावना, शुद मारग देवें दिखाय हो । महा० ।
ाता अंग में अरिहंत भाषियो, तीथंकर नाम गोत्र बंधाय हो । महा० । थे० ।।७।।
लेखे आपरें अति ओपतो, बंध्यो दिशें तीथंकर नांम गोत हो । महा० ।
आद काढी अरिहंत आदनाथ ज्यूं, कियो अतंत उद्योत हो । महा० । थे० । ८ ।।
इण भव माहे पिण उत्तम हूंता, परभव में पिण शोभाय हो । महा० ।।
कृष्टी अनोपम मोप छै, आप पोहचसो तिण गति मांय हो । महा०।थे०।।९।।
न किल्यांण कंटालिये जांणज्यो, दीपा महोच्छव बगडी मंजार हो । महा० ।
म किल्याण सरियारी शोभतो, ए तीनूंई जोडे विचार हो । महा० । थे० ।।१०।।
जिणंद री गादी विराजिया, सुवनित सुधरमा स्वाम हो । महा० ।
वेध पूज रे पाट परगट थया, भारमलजी स्वामी त्यांरो नांम हो ।महा०।थे०११।।
चरत कियो छें भीखु अणगार नो, बगडी सहर मजार हो । महा० ।
त अठारें साठा वरस में, फागण विद तेरस गुरवार हो । महा० ।थे०१२।।
आपर आगो पाछो आयो हुए, इधिको ओछो कह्यो हुए कोय हो । महा० ।
। वेंणीदासजी कहें कर जोडनें, मिच्छामि दुक्कडं छें मोय हो ।महा०।थे०।।१३।।

: ३ :

भिक्खु जश रसायण

[चतुर्थाचार्य जीतमलजी स्वामी कृत]

दुहा

सिद्ध साधु प्रगमी सखर, आंणी अधिक उलास।
सुख दायक आखूं सरस, बारू भिक्खु विलास।। २ ॥
गुणवंत ना गुण गावतां, उत्कृष्ट रसायण आय।
पद तीर्थंकर पामियै, कह्यौ सुज्ञाता मांय ॥ २ ॥
शासन वीर तणें समण, कह्या अधिक अधिकाय।
गुण बुद्धि तप अरू ज्ञान करि, चउदश सहंस सुहाय ॥ ३ ॥
सर्वज्ञ जिन मुनि सप्त सय, अवधि तेरसय आण।
मनपज्जव सयपञ्च मुनि, चिउंसय वादी पिछांण ॥ ४ ॥
पूर्वधर त्रिण सय पवर, वैक्रे सप्त सय बाय।
समणी सहंस छतीस शुद्ध, चउदश सय निरुपाधि ॥ ५ ॥
सुधर्म्म जम्बू तिलक शिव, अन्य मुनि अमर विमाण।
हिवडां पञ्चम काल मैं, भिक्खु प्रगट्या भांण ॥ ६ ॥
चतुर्थ आरा ना मुनि, नयणां देख्या नांय।
धिन धिन भिक्खु चरण धर, प्रत्यक्ष दर्शन पाय ॥ ७ ॥
किहां उपना जन्म्या किहां, परभव पद किहां पाय।
किया चौमासा किण बिधै, सांभलज्यो सुखदाय ॥ ८ ॥
चिउंसय सत्तर वर्ष लगै, नन्दीवर्द्धन निहाल।
त्याँ पीछै विक्रम तणौ, साम्प्रत संबत् संभाल ॥ ९ ॥

ढाल : १

(द्वारिका नगरी अति भली रे—ए देशी)

सकल द्वीप शिरोमणि रे लाल, जम्बू दीप सुतंत।
अष्टमी चन्द्रकला इसौ रे लाल, भरत क्षेत्र भलकंत। भवजीवां रे ॥
रूडौ लागै भिक्खु ऋषराय, रूडौ लागै स्वाम सुखदाय ॥ १ ॥
बतीस सहंस देशां मझै रे लाल, नरधाम मरुधर देश।
कांठै नगर कंटालियौ रे लाल, कमधज राज करेस। भव० ॥ रू० २ ॥
साह बलूजी तिहां वसै रे लाल, ओसवंस अवतंस।
जाति संकलेचा जाणज्यो रे लाल, बड़ै साजन सुप्रशंस ॥ ३ ॥
दीपांदे तसु भारज्या रे लाल, सरल भद्र सुखकार।
उदरे भिक्खु उपना रे लाल, देख्यौ सुपन उदार ॥ ४ ॥

मृगपति महा महिमा निलौ रे लाल, पुण्यवंत सुत सुपसाय।
सफल स्वप्न सुखदायकौ रे लाल, देखी हरषी माय॥ ५ ॥
यशधारी सुत जन्मियौ रे लाल, अनुक्रम अवसर आय।
संवत् सतरैंसे तियासियैं रे लाल, पञ्चाग लेखै ताहि॥ ६ ॥
आषाढ़ सुदी पख ओपतौ रे लाल, तेरस तिथ जणाय।
सर्व्व सिद्धा त्रयोदशी रे लाल, कहै जगत में वाय॥ ७ ॥
दशां माहिलौ दीपतौ रे लाल, नक्षत्र मूल निहाल।
पायौ चौथो परवरौ रे लाल, जन्म थयौ तिण काल॥ ८ ॥
जन्म किल्याण थयां पछै रे लाल, बाल भाव मुंकाय।
उत्पत्तिया बुद्धि अति घणी रे लाल, विविध मेलवै न्याय॥ ९ ॥
सुन्दर इक परण्या सही रे लाल, सुखदाइ सुविनीत।
भिक्खु नैं परभव तणी रे लाल, चिन्ता अधिकी चित्त॥ १० ॥
केता दिन गछवास्यां कन्हैं रे लाल, जाता कुलगुरु जांण।
पाछै पोत्याबंध कन्है रे लाल, सुणबा लाग्या बखांण॥ ११ ॥
पछै धास्या रुघनाथ जी रे लाल, छोड्या पोत्याबंध।
ते हिवडां संजम सरधै नहीं रे लाल, न सरधै सामायक संध॥ १२ ॥
काल कितौक बित्यां पछै रे लाल, शील आदरियौ सार।
भिक्खु नैं तसु भारज्या रे लाल, चारित्र नी चित्त धार॥ १३ ॥
लेवां संजम त्यां लगैं रे लाल, एकान्तर अवधार।
अभिग्रह एहवो आदस्यौ रे लाल, विरक्त पणैं सुविचार॥ १४ ॥
तठा पछै त्रिया तणो रे लाल, पड़ियौ तांम विजोग।
वर सगपण मिलता बहु रे लाल, भिक्खु न बंछ्या भोग॥ १५ ॥
दीक्षा नैं त्यारी थया रे लाल, अनुमति न दियै माय।
रुघनाथ जी नैं इम कह्यो रे लाल, म्हैं सिंह स्वप्न देखाय॥ १६ ॥
तब बौल्या रुघनाथ जी रे लाल, सांभल बाई वाय।
सिंह तणी पर गूंजसी रे लाल, ए स्वप्नौ छै चवदां मांय॥ १७ ॥
अनुमति मा आपी तदा रे लाल, सहंस रोकड़ उन्मान।
भिक्खु दिया जननी भणी रे लाल, चारित लेवा ध्यान॥ १८ ॥
दीख्या महोछब दीपतो रे लाल, बगड़ी शहर बखांण।
द्रव्ये चारित्र धारियौ रे लाल, भावे चरण म जांण॥ १९ ॥
संवत् अठारै आठै समै रे लाल, घर छोड्यो विष जांण।
द्रव्य गुरु धास्या रुघनाथ जी रे लाल, पिण नाई धर्म्म नीं छांण॥ २० ॥

प्रथम ढाल प्रगटपणैं रे लाल, कह्यौ भिक्खु नों जन्म किल्याण।
वलि द्रव्य दीक्षा वरणवी रे लाल, वारु आगै वखांण॥ २१॥

दूहा

अल्प दिवसरै आंतरै, सिख्या सूत्र सिद्धन्त।
तीव्र वुद्धि भीक्खु तणी, सुखदाई शोभन्त॥ १॥
विविध समय रस वांचतां, वारु कियौ विचार।
अरिहंत वचन आलोचतां, ऐ असल नहीं अणगार॥ २॥
यां थापिता थानक आदर्या, आधाकर्म्मी अजोग।
मोल लिया माहै रहै, नित्य पिण्ड लियै निरोग॥ ३॥
पडिलेह्यां विण रहै पड्या, पोथ्यां रा गञ्ज पेख।
विण आज्ञा दीक्षा दियै, विवेक विकल विशेष॥ ४॥
उपधि वस्त्र पात्र अधिक, मर्य्यादा उपरन्त।
दोष थापै जाणनैं, तिण सूं ऐ नहीं सन्त॥ ५॥
सरधा पिण साची नहीं, असल नहिं आचार।
इण विध करै आलोचना, पिण द्रव्य गुरु सूं अति प्यार॥ ६॥
पूछ्यां जाव पूरौ न दै, काल कितौ इम थाय।
पीत द्रव्य गुरु सूं परम, ते करै शोभ सवाय॥ ७॥
पूछै बात आचार नीं, जाणौ वैरागी जेह।
तिण सूं पूछै वलि वलि, पिण नहीं और सन्देह॥ ८॥
पटधारक भिक्खु प्रगट, हद आपस मैं हेत।
इतलै कुण विरतन्त हुऔ, सुणज्यो सहू सचेत॥ ९॥

ढाल : २

[परभवौ मन मैं चिन्तवै—ए देशी]

इह अवसर मेवाड मैं, राज नगर सुजाण।
राजसमुद्र पासै बस्यो, अधिका त्यां आइठांण॥ १॥
त्यां बस्ती घणी महाजनां तणी, जाण सूत्रा ना जेह।
वंदणा छोडी निज गुरु भणी, दिल मैं पडियौ संदेह॥ २॥
मुरधर मैं रुघनाथजी, सांभली सहु बात।
भिक्खु नैं तिहां भेजिया, शङ्का मेटण साख्यात॥ ३॥

बुद्धिवंत विण भ्रम नां मिटै, तिण सूं थे बुद्धिवान।
जाय शङ्का मेटो तेहनीं, इम कहि मेल्या ते स्थान ॥ ४ ॥
टोकरजी हरनाथजी, बीरभाणजी साथ।
भिक्खु शिष भारीमालजी, दीक्षा दी निज हाथ ॥ ५ ॥
ऐ साथ लेई भिक्खु आविया, राजनगर मझार।
संबत् अठारै पनरै समैं, चौमासो गुणकार ॥ ६ ॥
चूंप धरी चरचा करी, भायां थी तिण बार।
ते कहै बात भिक्खु भणी, आप देखौ आचार ॥ ७ ॥
आवाकरमी थांनक आदरया, मोल लिया प्रसिद्धि।
उपधि वस्त्र पात्र अधिक ही, आ पिण थे थाप कीधी ॥ ८ ॥
जांण किंवाड़ जड़ौ सदा, इत्यादिक अवलोक।
म्हें वन्दना करां किण रीत सूं, थेतौ थाप्या दोष ॥ ९ ॥
द्रव्य गुरु नौं बैंण राखवा, भिक्खु बुद्धि ना भण्डार।
अकल चतुराई करी तदा, दिया जाब तिवार ॥ १० ॥
कला विविध केलवी करी, त्यांनै पगां लगाया।
ते कहै शंका मिटी नहीं, पिण निसुणौ मुझ वाया ॥ ११ ॥
आप वैरागी बुद्धिवंत छौ, आपरी परतीत।
तिण कारण वंदना करां, आप जगत मैं वदीत ॥ १२ ॥
इम कहिनैं वंदना करी, इह अवसर मांय।
भिक्खु रै असाता वेदनी, उदय आवी अथाय ॥ १३ ॥
अधिक ताव अति आकरौ, सीऔ दोहरो सैहणो।
उत्तम नर नैं ते अवसरैं, रूड़ै चित रैहणौ ॥ १४ ॥
अधम पुरुष दुःख उपना, करै हायतराय।
समचित्त वैंदन नां सहै, पापे पिण्ड भराय ॥ १५ ॥
तीव्र ताप नीं वेदना, भिक्खु नैं अधिकाय।
तिण अवसर मैं आविया, एहवा अध्यवसाय ॥ १६ ॥
म्हैं साचां नैं तौ भूठा किया, श्री जिन वचन उठाय।
आउ आवै इह अवसरैं, तो माठी गति पाय ॥ १७ ॥
द्रव्य गुरु काम आवै कदी, तौ हिवे बात विचारूं।
कारण मिटियां निर्पक्ष सूं, साचौ मारग धारूं ॥ १८ ॥
जेम सिद्धंत मैं जिन कह्यौ, चूंप धरी तिम चालूं।
कांण न राखूं केहनी, भट जिन मारग भालूं ॥ १९ ॥

एहवौ अभिग्रह आदर्यौ, भिक्खू ताव मझार।
उत्तम पुरुष नैं आवै घणो, भय परभव नौं अपार ॥ २० ॥
दूजी ढाले आविया, राजनगर सुरीत।
आंख अभ्यन्तर उघड़ी, निर्मल धारी नीत ॥ २१ ॥

दुहा

तुरत ताव तब उतर्यौ, विधसूं कियौ विचार।
हिवै साचौ मत आदरी, करूं आतम तणौ उद्धार ॥ १ ॥
रखे जूठ लागैला मो भणी, तौ करणी पक्की पिछांण।
इम चिंतवि सिद्धंतनैं, वांच्या अधिक सुजांण ॥ २ ॥
जो साचां नैं झूठा कहूं, तो परभव रै मांय।
जीभ पांमणी दोहिली, विविध पणैं दुख पाय ॥ ३ ॥
पख राखी द्रव्य गुर भणी, जो कहूं साचा सोय।
तो पिण परभव नैं बिषै, काम कठिन अति होय ॥ ३ ॥
औ. दूधारौ खांडो अछै, एहवी मन मैं धार।
दोय दोय बार सूत्रां भणी, बांच्या धर अति प्यार ॥ ५ ॥
सूत्र विविध निर्णय करी, गाढी मन मैं धार।
सम्यक्त चारित बिहुं नहीं, एहवौ कियौ विचार ॥ ६ ॥
भायां नैं भिक्खु कह्यो, थे तौ साचा सोय।
म्हे झूठा गुरु सूं मिली, शुद्ध मग लेस्यां जोय ॥ ७ ॥
भाया सुण हरख्या घणा, बोल्या एहवी वाय।
अब म्हांरी शंका मिटी, दिल मैं रही न काय ॥ ८ ॥
प्रतीत आप तणी हुंती, जिसी म्हांरा मन मांय।
तिसी दिखाड़ी तुरत ही, इम कही हरषत थाय ॥ ९ ॥

ढाल : ३

[राणी भाखै सुणरे सूड़ा—ए देशी]

राजनगर थी कियौ विहार, चौमासौ उतरियां सार।
आवै मुरधर देश मझारं रे।
मन प्यारा भिक्खु जश रसायण सुणिजै ॥ १ ॥
साधां नै सहु बात सुणाई, सरधा किरिया ओलखाई।
ते पिण सुण हरख्या मन मांही रे। म० ॥ २ ॥
टोकरजी हरनाथजी ताय, भारीमाल घणा सुखदाय।
समझी लागा पूजरै पाय रे। म० ॥ ३ ॥

वीरभांणजी पिण तिणवार, आदर्‍या भिक्खु बयण उदार।
आवै सोजत शहर मझार रे। म० ॥ ४ ॥
बीचै गांम नान्हा जाणी सोय, दोय साथ किया अवलोय।
सीख इण पर दीधी जोय रे। म० ॥ ५ ॥
वीरभांणजी नैं कहै वाय, जो थे पहिलां जावौ गुरु पाय।
तौ या बात म करज्यो कांय रे। म० ॥ ६ ॥
पहिलां बात सुण्यां भिड़काय, मनखंच हुवै मन मांय।
तौ पछै समझाया दोरा जाय रे। म० ॥ ७ ॥
नेम तौ ते आगां रा गुरु है, मन खंच्यां समझणा दुकर है।
बिगड़ियां पछै कांम न सरहै रे। म० ॥ ८ ॥
कला विनय करी हूं कहस्यूं, दिल श्रद्धा बैसाड़ी देसूं।
युक्ति सूं समझाई लेसूं रे। म० ॥ ६ ॥
स्वामी एम त्यांनै समझाया, वीरभांणजी आगूंच आया।
रुघनाथजी सोजत पाया रे। म० ॥ १० ॥
कर जोड़ी नैं वन्दना कीधी, पूछै द्रव्य गुरु प्रसिद्धि।
भायां री शङ्का मेट दीधी रे। म० ॥ ११ ॥
वीरभांणजी बोल्या वायो, भाया तौ साचौ भेदज पायौ।
मन शङ्क हुवै तौ मिटायो रे। म० ॥ १२ ॥
आधाकर्मी थानक अशुद्ध आहार, बिन कारण नित्यपिण्ड वार।
आपें भोगवां ए अणाचार रे। म० ॥१३ ॥
वस्त्र पात्र अधिका सेवां, बिन आगन्यां दीख्यां देवां।
विवेक विकल भणी मूंड लेवां रे। म०॥१४॥
दिन रात्रि में जड़ां किंवाड़, इत्यादिक वहु दोष विचार।
त्यांरी थाप आंपांरे धार रै। म० ॥१५ ॥
भाया तौ कहै साची साख्यात, तिणमैं झूठ नहीं तिलमात।
द्रव्य गुरु निसुणी ए बात रे। म० ॥१६ ॥
द्रव्य गुरु कहै यूं कांई बोलै, वीरभांणजी पाछौ झखोलै।
कुड़ौ तौ भिक्खु पास अतोल रे। म० ॥१७॥
म्हारै कन्है तौ बांनगी तास, कूड़ी रास भीखणजी पास।
इम सांभल हुआ उदास रे। म० ॥ १८ ॥
वीरभांण रैं नहीं समाही, तिणसूं आगूंच बात जणाई।
हिवै आया भिक्खु ऋषराई रे। म० ॥१६॥

तंत ढाल कही ए तीजी, वीरभांण नी बात कहीजी।
ऋष भिक्खु नीं बात रहीजी रे।म०॥२०॥

दुहा

हिव भिक्खु द्रव्य गुरु भणी, वन्दै बेकर जोड़।
माथै हाथ दियौ नहीं, चश्मा देख्या और॥ १ ॥
जब भिक्खु मन जांणियौ, आगूंच आखी बात।
पहिली मनड़ौ फिर गयौ, तौ पूछूं साख्यात॥ २ ॥
कर जोड़ी नै इम कहै, यूं क्यूं स्वामीनाथ।
चित्त उदास तिण कारणैं, माथै न दियौ हाथ॥ ३ ॥
द्रव्य गुरु भाखै तांहरै, शंक पड़ी सुविचार।
तिण सूं कर शिर नां दियौ, मन पिण फाटौ धार॥ ४ ॥
बलि थांरै नैं मांहरै, भेलौ नहीं आहार।
वचन सुणी भिक्खु कहै, शंक मेटौ इहवार॥ ५ ॥
बलि भिक्खु मन चिन्तवै, म्हांमैं यांमैं जांण।
संजम समगत को नहीं, पिण हिवडां न करणी तांण॥ ६ ॥
प्राछित लेई एहनैं, द्यूं प्रतीत उपजाय।
पछै खपकर नैं समझाय नैं, आणूं मारग ठाय॥ ७ ॥
इम चिन्तव द्रव्य गुरु भणी, बोलै एहवी वाय।
शंक जांणौ तौ मुझ भणी, प्राछित दौ सुखदाय॥ ८ ॥
इम प्रतीत उपजायनैं, भेलौ कियौ आहार।
हिवैं समझावै किण विधैं, ते सुणज्यो विस्तार॥ ९ ॥

ढाल : ४

[हिव रांणी नैं हो समझावैं पण्डिता धाय—ए देशी]

हिवे द्रव्य गुरुनैं हो, समझावैं भिक्खु स्वाम।
सूत्र वयण दिल सरदहौ, निसुणौ बात अमांम॥ १ ॥
अरि अघ हणिवैं हो, देव कह्या अरिहन्त।
धर्म्म जिनेश्वर भाखियौ, गुरु जांणौ निर्ग्रन्थ॥ २ ॥
साची सरधा हो ए जांणौ तंत सार, पांमैं तिण सूं पार।
आज्ञा बारैं धर्म को नहीं॥ ३ ॥
यां तीनूं मैं हो भेल म जांणौं लिगार, अन्तर आंख उघाड।
सूत्र सीख सरधौ सही॥ ४ ॥

और वस्तु में हो भेल पड़ै जो आय, तो रूड़ी पिण बिगड़ाय।
तौ पुन्य पाप भेला किम हुवै ॥ ५ ॥
अशुभ जोगां सूं हो बंधै पाप एकन्त, शुभ सूं पुण्य बंधंत।
पुण्य पाप भेला किसा जोग सूं ॥ ६ ॥
एके करणी हो बंधै पुन्य कै पाप, तिण में मिश्र म थाप।
करणी तीजी जिण नां कही ॥ ७ ॥
भिक्खु भाखै हो द्रव्य गुरु नैं अवलोय, जिन वचन साहमौ जोय।
ग्रही टेक नैं परिहरौ ॥ ८ ॥
शुद्ध श्रद्धा हो हाथ न आई श्रीकार, असल नहीं आचार।
थाप दीसै घणा दोष री ॥ ९ ॥
जो थे मानौं हो सूत्र नीं बात, तौ थेइज म्हांरा नाथ।
नहिंतर ठीक लागै नहीं ॥ १० ॥
म्हैं घर छोड्या हो आतम तारण कांम, और नहां परिणाम।
तिणसूं बार बार कहूं आपनैं ॥ ११ ॥
आप मांनौं हो स्वामी सूत्रा नी बात, छोड़ देवौ पक्षपात।
इक दिन परभव जावणौ ॥ १२ ॥
पूजा प्रशंसा हो लही अनन्ती बार, दुर्लभ श्रद्धा श्रीकार।
निर्णय करौ आप एहनौं ॥ १३ ॥
विविध विनय सूं हो आख्या वयण उदार, मान्या नहीं लिगार।
क्रोध करी उलटा पड्या ॥ १४ ॥
भिक्खु भारी हो स्वामी बुद्धि ना भण्डार, मन सूं कियौ विचार।
ए हिवड़ा न दीसै समझता ॥ १५ ॥
धीरै २ हो समझावस्यूं धर पेम, आप विचारी एम।
तिण सूं आहार पाणी तोड्यौ नहीं ॥ १६ ॥
भिक्खु भाखै हो भेलौ करां चौमास, चरचा करस्यां विमास।
साच झूठ निर्णय करां ॥ १७ ॥
साची सरधा हो आदरस्यां सुखदाय, झूठी देस्यां छिटकाय।
तब बोल्या रुघनाथ जी ॥ १८ ॥
म्हांरा साधां नैं हो तूं लेवै फंटाय, जो चौमासो भेलौ थाय।
भिक्खु कहै राखौ जढ़ बाज नैं ॥ १९ ॥
ते चरचा मैं हो समझै नहीं लिगार, करौ चौमासौ श्रीकार।
दुर्लभ सांमग्री ए लही ॥ २० ॥

इण विध कीधा हो भिक्खु अनेक उपाय, तौ पिण नाया ठाय।
कर्म घणा तिण कारणैं॥ २१ ॥
बले मिलिया हो भिक्खु दूजी बार, बगड़ी शहर मझार।
आय द्रव्य गुरु नैं इम कहै॥ २२ ॥
स्वामी भूला हो शुद्ध श्रद्धा आचार, मन मैं करौ विचार।
विविध प्रकारै समझाविया॥ २३ ॥
पिण नहीं मानी हो द्रव्य गुरु बात लिगार, जांण लियौ तिणवार।
ए तौ न दिसै समझता॥ २४ ॥
निज आत्म नौं हो हिव हूं करूं निस्तार, एहवी मन मैं धार।
आहार पाणी तौड़ निसख्या॥ २५ ॥
चौथी ढाले हो आख्यौ चरचा सरूप, आछी रीत अनूप।
आगलि बात सुहांमणी॥ २६ ॥

दुहा

थानक बारै निसख्या, तड़के आहारज तोड़।
जब द्रव्य गुरु मन जांणियौ, बात हुई अति जोर॥ १ ॥
रहिवा जागां नां मिलै, तो फिर थानक आय।
सेवक फिरियौ शहर मैं, जागां म दीज्यो काय॥ २ ॥
जो रहिवा भिक्खु भणी, जागां दीधी जांण।
सर्व साथ सुणज्यो सही, संघ तणी छै आंण॥ ३ ॥
कड़ली कुबुद्धिज केलवी, आसी पाछा एम।
जब भिक्खु मन जाणियौ, करिवौ विचार केम॥ ४ ॥
पुर मैं जागां नां दियै, जो फिर थांनक जाय।
तौ पाछौ फन्द मैं पड़ूं, दुखे निसरणौ थाय॥ ५ ॥
एहवी करे विचारणा, विहार कियो तिण बार।
शूरवीर सिंह नी परै, न डख्या मूल लिगार॥ ६ ॥
आया बगड़ी बारणैं, बावल अधिक विशेष।
बाजी तब पग थांभिया, भिक्खु परम विवेक॥ ७ ॥
जैतसिंहजी री जिहां, छत्र्यां अधिक उदार।
देखी नैं आया जिहां, बैठा छत्र्यां मझार॥ ८ ॥
पुर मांहै जाण्यो प्रगट, सुण्यों द्रव्य गुर सोय।
आया छत्र्यां नैं विषै, साथै बहुला लोय॥ ९ ॥

ढाल : ५

(राम कहै सुग्रीव नैं रे लङ्का केतिक दूर—ए देशी)

बगड़ी री छत्र्यां मझें रे, बहु लोक बोलै इम वाय।
टोलो छोडी मत निकलौ रे, धैर्य धरौ मन मांय।
चतुर नर भिक्खु बुद्धि नां भंडार ॥ १ ॥
रुघनाथजी इसड़ी कहै रे, थे मांनौं भीखणजी बात।
अबारूं आरौ पांचमों रे, नहीं निभौला साख्यात। च० ॥ २ ॥
भिक्खु बल्ता भाखै भलौ रे, म्हे किम मांनां तुझ बात।
म्हें सूत्र बाचे निर्णो कियौ रे, शङ्का नहीं तिल मात। च० ॥ ३ ॥
तीर्थ श्रीजिनवर तणौ रे, छेहड़ा तांई विचार।
श्री जिन आणा सिर धरी रे, शुद्ध पालस्यूँ संजम भार। च० ॥ ४ ॥
ए वचन सुणी द्रव्य गुरु भणी रे, तूटी आश तिवार।
मोह आयौ तिण अवसरै रे, चिन्ता हुई अपार। च० ॥ ५ ॥
सांमजी ऋष नौं साध थौ रे, उदैभांण कहै एम।
टोला तणा धणी बाजनैं रे, आंसूं पच करौ केम। च० ॥ ६ ॥
किणरौ एक जावै तरै रे, आवै फिकर अपार।
म्हांरा पांच जावै सही रे, गण में पड़ैं बिगाड़। च० ॥ ७ ॥
मोह देखी द्रव्य गुरू तणैं रे, दृढ चित्त भिक्खु धार।
म्हैं घर छोड्यौ तिण दिने रे, मुझ माता रोई अपार। च० ॥ ८ ॥
भागलां भेलौ हूं रहूं रे, तौ परभव मैं पेख।
विविध पणैं रोवणौं पड़ै रे, पामैं दुःख विशेष। च० ॥ ९ ॥
कठिन छाती इण विध करी रे, बारुं ज्ञान विचार।
सैंठा रह्या तिण अवसरै रे, उत्तम जीव उदार। च० ॥ १० ॥
द्वेष स्यूं तुरत नर नां डीगै रै, राग दै तुरत चलाय।
द्रव्य गुरू मोह आंण्यौ सही रे, पिण कारी न लागी कांय। च० ॥ ११ ॥
फेर बोल्या रुघनाथजी रे, जासी कीतियक दूर।
आगो थांरौ नैं पूठौ मांहरौं रे, लोक लगावस्यूं पूर। च० ॥ १२ ॥
परीषह खमण री मुझ मन मझै रे, भिक्खु भाखै विशाल।
इम तौ डरायौ नहीं डरूं रे, जीवणुं कितौएक काल। च० ॥ १३ ॥
विहार कियौ बगड़ी थकी रे, द्रव्य गुरु लारै देख।
चरचा करी बड़लु मझै रे, सांभलज्यो सुविशेष। च० ॥ १४ ॥

रुघनाथजी इमड़ी कहै रे, सांभल भिक्खु वात।
पूरौ साधपणुं नहीं पलै रे, दुखम काल माख्यात। च० ॥ १५ ॥
भिक्खु कहै इम भाखियौ रे, सूत्र आचारङ्ग मांय।
ढीला भागल इम भाखसी रे, हिवड़ा शुद्ध न चलाय। च० ॥ १६ ॥
बल संघयण हींणा घणा रे, पञ्चम काल प्रभाव।
पूरौ आचार पलै नहीं रे, नहिं उत्सर्ग प्रस्ताव। च० ॥ १७ ॥
आगूंच जिनजी भाखियो रे, इम कहसी भेषधार।
ए जाब सुणी रुघनाथ जी रे, कष्ट हुवा तिणवार। च० ॥ १८ ॥
गुरु चेलां रै हुई घणी रे, चरचा माहो मांहि।
संक्षेप मात्र कही इहां रे, पूरी केम कहाय। च० ॥ १९ ॥
द्रव्य गुरू कहै भिक्खु भणी रे, दोय घड़ी सुभ ध्यान।
चोखौ चारित्र पालियां रे, पामैं केवलज्ञान। च० ॥ २० ॥
भिक्खु कहै इण विध लहै रे, बे घड़ी केवलज्ञान।
तौ दोय घडी तांई रहूं रे, स्वास रूंधी धरूं ध्यान। च० ॥ २१ ॥
प्रभव सिज्जंभव आदि दे रे, बे घड़ी पाल्यौ कै नाहिं।
केवल त्यांनैं न उपनौ रे, सोच विचारौ मन मांहि। च० ॥ २२ ॥
चवदै सहंस शिष वीरनैं रे, सात सौ केवली सोय।
तेर सहंस नैं तीन सौ रे, छद्मस्थ रहिया जोय। च० ॥ २३ ॥
त्यांमैं केवल नहीं उपनौ रे, त्यां बे घड़ी पाल्यौ कै नांहि।
थांरै लेखै त्यां पिण नहीं पालियौ रे, बे घड़ी चरण सुहाय। च० ॥ २४ ॥
बारै वर्ष तेरह पखै रे, वीर रह्या छद्मस्थ।
थांरै लेखै त्यां पिण नहीं पालियौ रे, दोय घड़ी चारित्त। च० ॥ २५ ॥
इत्यादिक हुई घणी रे, चरचा माहो मांहि।
समझाया समजै नहीं रे, किया अनेक उपाय। च० ॥ २६ ॥
पवर ढाल कही पांचमी रे, चर्चा विविध प्रकार।
हिव भिक्खु किण रीत सूं रे, करें आत्तम नौं उद्धार।
चतुर नर सांभलौ भिक्खु विलास ॥ २७ ॥

दुहा

द्रव्य गुरु तौ समझ्या नहीं, खप बहु कीधी ताहि।
जैमलजी काका गुरु, आया त्यांरै पाहि ॥ १ ॥
भद्र सरल प्रकृति भली, जैमलजी नीं जांण।
भिक्खु तास भली परै, समझावै सुविहांण ॥ २ ॥

जैमलजी रै जुक्ति सूं, दी सरधा बैसार।
भिक्खु रे साथै भला, ते पिण हो गया त्यार॥ ३॥
वात सुणी रुघनाथजी, भांग्या तसुं परिणांम।
फकीर वालौ दुपटौ हुसी, नहि हुवै थांरौ नांम॥ ४॥
बुद्धिवन्त साधु साधवी, लेसी त्यांनैं लार।
लाडै कोडै घर छोडिया, और होसी निराधार॥ ५॥
यांनैं रोसीं सहु जणा, थे म विचारौ बात।
थांरै बहु परिवार छै, घणां तणा थे नाथ॥ ६॥
थांरा सावां रा जोग सूं, होसी भिक्खु रौ कांम।
टोलौ भिक्खु रौ बाजसी, थांरौ न हुवै नांम॥ ७॥
इत्यादिक वचनां करी, पाड्या तसुं परिणाम।
तब जैमलजी बोलिया, सुणौ भीखणजी आंम॥ ८॥
गला जितौ हूं कल गयौ, थे शुद्ध पालौ सोय।
पंडितां रै जाणी वरौं, इम बोल्या अवलोय॥ ९॥

ढाल : ६

[सुण सुण रे शिष्य सयाणा—ए देशी]

शिष्य भिक्खु ना महा सुखकारी, भारीमाल सरल भद्र भारी।
त्यांरौ तात कृष्णोजी तास, बिहुं घर छोड्यो भिक्खु पास।
सुण सुण रे शिष्य सयांणा रूडौ भिक्खु जश रसांणा।
भिक्खु जश रस अमृत भारी, शिव सम्पति सुख सहचारी।॥ १॥
आसरै दशमैं वर्ष आया, भारीमाल सरल सुखदाया।
भेषधारयां माहि छतां सोय, सुत तात भिक्खु शिष्य होय। सु०॥ २॥
त्यांरै चेलां तणी छै रीत, तिणसूं शिष्य किया धरि प्रीत।
त्यांमैं रह्या आसरै वर्ष चार, पछै निसरिया भिक्खु लार। सु०॥ ३॥
कृष्णाजी री प्रकृति करड़ी जांणी, भारीमाल भणी वदै बांणी।
संजम लायक नहीं तुझ तात, तुम तो उत्तम जीव विख्यात। सु०॥ ४॥
आपां नवी दीख्या लेस्यां सोय, लागू होता दिसै बहु लोय।
आहार पांणी वचनादिक ताय, कृष्णाजी नैं दुक्कर अधिकाय। सु०॥ ५॥
तुझ मन मुझ पास रहिवा रो, कै निज जनक कन्है जावारौ।
इम पूछ्यौ भिक्खु घर प्रेम, भारीमाल उत्तर दियौ एम। सु०॥ ६॥

म्हांरै तात थकी कांई कांम, हूं तो आप कन्हें रहस्यूं ताम।
संजम पालस्यूं रूड़ी रीत, मोनें आप तणी परतीत। सु० ॥ ७ ॥
कृष्णाजी नें भिक्खु कहै तांम, थांसूं मूल नहीं म्हारें काम।
चारित्र पालणौ दुक्कर कार, तिण सूं थांनें न लेवां लार। सु० ॥ ८ ॥
किस्नौजी कहै मोनें न लेवो, तो म्हारौ पुत्र मोनें सूंप देवो।
सुत नें राखसूं मुझ साथ, इण नें लेजावा न देऊं विख्यात। सु० ॥ ९ ॥
भिक्खु कहै पुत्र ए थांरौ, आवै तौ नहीं बरजां लिगारो।
जब आयौ भारीमाल पास, और जागां लेई गयौ तास। सु० ॥१०॥
भारीमाल पिता नें भाखै, कृष्णाजी री कांण नहीं राखै।
थारां हाथ तणुं अन पांण, म्हांरै जाव जीव पचखांण। सु० ॥ ११ ॥
भारीमाल अभिग्रह कीयों भारी, दिन दोय निसरूया तिवारी।
रह्या सुरगिर जेम सधीरा, हलुकर्मी अमोलक हीरा। सु० ॥ १२ ॥
तब बाप थाकौ तिण वार, भिक्खु नैं आण सूंप्या उदार।
थांसूंईज राजी छै एह, म्हांसूं तौ नहीं मूल सनेह। सु० ॥ १३ ॥
इण नैं आहार पाणी आंण दीजै, रूड़ा जतन करी राखीजै।
म्हांरी पण गति कांइक कीजै, किण ही ठिकाणै मोनें मेलीजै। सु० ॥ १४ ॥
थे नहीं लियो संजम भारो, जितरै करो ठिकांणौ म्हांरो।
भिक्खु सूंप्यौ जैमलजी नैं आंण, जैमलजी हरख्या अति जांण। सु० ॥ १५ ॥
जैमलजी बोल्या तिणवारी, देखौ भीखणजी री बुद्धि भारी।
सूंप्यौ कृष्णोजी म्हांनैं सोय, तीनां घरां बधांवणा होय। सु० ॥ १६ ॥
कृष्णो हर्ष्यौ ठिकांणें हूँ आयौ, म्हे पिण हर्ष्या चेलौ एक पायौ।
भिक्खु हर्ष्या टलियौ औगालौ, तीनां घरां बधांवणा न्हालौ। सु० ॥ १७ ॥
भारीमाल रौ सङ्कट टलियौ, मन बाञ्छत कारज फलियौ।
छट्ठी ढाले भारीमाल भारी, रह्या अडिग अचल गुणधारी। सु० ॥ १८ ॥

दुहा

हिव भिक्खु भारीमालजी, संत आदि दे तेर।
मनसोबो मोटौ कियौ, चारित लैणौ फेर॥ १ ॥
शहर जोधांणा मैं सही, तेरह श्रावक ताहिं।
सामायक पोसा करी, बैठा बाजार रे माहिं॥ २ ॥
फतैचन्द सिंघी प्रगट, दीवांण पद दीपंत।
चौहटै देख्या चालतां, प्रत्यक्ष तव पूछंत॥ ३ ॥

सामायक पोसा सखर, कीधा चौहटै केम।
थानक में क्यूं नां किया, उत्तर आपौ एम॥ ४ ॥
तज थांनक मन थिर कियौ, मुझ गुरु महिमावंत।
भिक्खु ऋष भारी घणा, परहर दियौ कुपंथ॥ ५ ॥
कहै दीवांण किम निसर्या, बलि श्रावक बोलंत।
बात घणी थिरता हुवै, जब सुणजो धर खंत॥ ६ ॥
दीवांन कहै थिरता अबहि, वर्णवौ सगली बात।
श्रावक तब आखै सकल, विवरा सुध विख्यात॥ ७ ॥
आधाकर्मी आदि दे, दूर किया सहू दोष।
सिंघी सुण हर्ष्यौ सही, पायौ परम सन्तोष॥ ८ ॥
साधु नौं औहिज शुद्ध, मारग मोटौ मांण।
प्रशंसै सिंघी प्रगट, बारूं करै बखाण॥ ९ ॥

ढाल : ७

[सोई तेरापंथ—ए देशी]

फतैचन्द दीवांन ते, बलि पूछा करै बारू हो।
श्रावक थे केता सही, धार्यौ धर्म उदारू हो।
शिव साधन सारू हो, भिक्खु जश सांभलौ बारू हो॥ १ ॥
श्रावक कहै तेरै अछां, आतम तारण हारू हो।
सिंघी बलि पूछै सही, संत किता सुखकारू हो।
नीका शिव ने तारू हो।॥ भि० २ ॥
श्रावक कहै तेरै सही, साधु सखर श्रद्धालु हो।
भिक्खु समण शिरोमणि, वर माग विशालु हो।
साधण सिव पट सालू हो।॥ भि० ३ ॥
सिंघी कहै आछौ मिल्यौ, वर जोग विचारू हो।
श्रावक पिण तेरै सही, तेरे संत तंत सारू हो।
भिक्खु बुद्धि ना भण्डारू हो।॥ भि० ४ ॥
सिंघी मुख प्रशंसा सुणी, सेवग ऊभौ सुधारू हो।
तत्खिण तिण जोड्यौ तुकौ, तेरा पंथ ए तारू हो।
विस्तर्यौ नांम बारू हो।॥ भि० ५ ॥

सेवग कृत दुहा

साध साधरो गिलौ करै, ते तौ आप आपरौ मंत।
सुणजो रे शहर रा लोकां, ए तेरा पन्थी तंत ॥ १ ॥

ढाल तेहिज

लोक कहै तेरापन्थी, भिक्खु संवली भावै हो।
हे प्रभु औ तेरौ पन्थ है, और दाय न आवै हो।
मन भ्रम मिटावै हो, सो ही तेरापन्थ पावै हो ॥ ६ ॥
पंच महाव्रत पालता, शुद्धि सुमति सुहावै हो।
तीन गुप्त तीखी तरै, भल आतम भावै हो।
चित्त सूं तेरा ही चाहवै हो ॥ ७ ॥

भिक्खु कृत छन्द

गुण बिन भेष कूं मूल न मांनत, जीव अजीव का किया निवेरा।
पुन्य पाप कुं भिन्न भिन्न जांनत, आस्त्रव कर्मा कुं लैत उरेरा ॥
आवता कर्मा नै संवर रोकत, निर्जरा कर्मा कुं दैत बिखेरा।
बन्ध तौ जीव कुं बांधिया राखत, शास्वता सुख तौ मोक्ष मैं डेरा ॥
इसी घट प्रकाश किया, भव जीव का मेट्या मिथ्यात अंधेरा।
निर्मल ज्ञान उद्योत कियो, ए तौ है पन्थ प्रभु तेरा ही तेरा ॥ १ ॥
तीन सौ तेसट्ठ पाखण्ड जगत मैं, श्री जिन धर्म सूं सर्व अनेरा।
द्रव्य लिंगी केई साध कहावत, त्यां पिण पकड्या त्यांराइज केड़ा ॥
ताहि कुं दूर तजै ते संत, विधि सूं उपदेश दिया रूड़ेरा।
जिन आगम जोय प्रमाण किया, जब पाखण्ड पन्थ मैं पड़्या बिखेरा ॥
व्रत अव्रत दान दया बतावत, सावद्य निर्वद्य करत निवेरा।
श्री जिन आगन्या मांहै धर्म बतावत, ए तौ है पन्थ प्रभु तेरा ही तेरा ॥ २ ॥

ढाल तेहिज

पन्थ अनैरा मैं रह्यो, तिणसूं भमण भमावै हो।
प्रभु अब आयो तेरा पन्थ मैं, तेरी आज्ञा सुहावै हो।
तेह थी शिव पद आवै हो ॥ ८ ॥
तेरौ वचन आगै करी, चारू धर्म चलावै हो।
तेहिज छै तेरापन्थी, थिर कीरत थावै हो।
भिक्खु समचित भावै हो ॥ ९ ॥

हिन्सा भूठ अदत हरै, मैथुन परिग्रह मिटावै हो।
तीन करण तीन जोग सूं, त्याग करी तन तावै हो।
बारु व्रत बसावै हो ॥ १० ॥
इर्या भाषा एषणा, रूड़ी रीत रखावै हो।
आयाण भण्ड निखेवणा, परठण जैणा करावै हो।
सखरी सुमति सुहावै हो ॥ ११ ॥
अशुद्ध मन नहीं आदरै, वच सावज बस लावै हो।
पाडुइ काया परिहरै, तीन गुप्त तंत लावै हो।
थिरता पद चित्त थावै हो ॥ १२ ॥
सखर ढाल आ सातमी, गुण भिक्खु ना गावै हो।
नाम तेरापन्थ निर्मलो, अर्थ अनुपम आवै हो।
सखरौ सुजश सुणावै हो ॥ १३ ॥

दुहा

भारी बुद्धि भिक्खु तणी, निर्मल मेल्या न्याय।
अरिहन्त आज्ञा थाप नै, श्रद्धा दी ओलखाय ॥ १ ।
चरचा कर त्यारी हुवा, तेर जणा तिणवार।
नाम कहूं हिव तेहना, भिक्खु गण श्रृङ्गार ॥ २ ॥
थिरपालजी फतेचन्दजी, बड़ा तात सुत बेह।
भिक्खु आचारज भला, ज्ञान कला गुण गेह ॥ ३ ॥
टोकरजी हरनाथजी, भारीमाल सुविनीत।
सरल भद्र मुखदायका, परम पूज्य सूं प्रीत ॥ ४ ॥
वीरभांणजी सातमौ, लिखमीचन्दजी लार।
बखतरांम नै गुलाबजी, दूजो भारमल धार ॥ ५ ।
रूपचन्द नै पेमजी, ए तेरां रा नांम।
नवी दीक्षा लेवा तणा, तेरां रा परिणाम ॥ ६ ॥
रुघनाथजी रा पाञ्च छै, छः जयमलजी रा जोय।
दोय अन्य टोलां तणा, ए तेरह ही होय ॥ ७ ॥
चर्चा केयक बोल री, करी माहोमा तास।
केइक अल्पज चरचिया, ऊपर आयो चौमास ॥ ८ ॥
चौमासा सगलां भणी, भिक्खु दिया भलाय।
आसाढ़ सुदि पुनम दिने, संजम लीज्यो ताय ॥ ९ ॥

ढाल : ८

[सीहल नृप कहै चन्द नै—ए देशी]

भिक्खु मुख सूं इम भणै, मुणिन्द मोरा चौमासो उतरयां जाण हो।
सरधा आचार मींढ्यां पछै, मुणिन्द० भेलो करस्यां आहार पाण हो।
सखर गुणां कर सोभतो, ऋष भिक्खु गुण निलो।
मु० अधिक ओजागर आप हो ॥ १ ॥
जो श्रद्धा आचार मिली नहीं, मु० तो भेलो न करां आहार हो।
इम पैंहला समझाविया, मु० आया देश मेवाड़ हो ॥ २ ॥
सम्बत् अठारै सतरे समैं, मु० पंचांग लेखै पिछांण हो।
आसाढ़ सुदी पुनम दिनै, मु० कैलवै दीक्षा किल्याण हो ॥ ३ ॥
अरिहन्त नीं लेई आगन्या, मु० पचख्या पाप अठार हो।
सिद्ध साखे करी स्वामजी, मु० लीधो संजम भार हो ॥ ४ ॥
हरनाथजी हाजर हुंता, मु० टोकरजी भिक्खु पास हो।
परम भगता भारीमालजी, मु० पूरो ज्यांरो विश्वास हो ॥ ५ ॥
सतरोतरै कैलवा मझै, मु० प्रथम चौमासो पेख हो।
देवल अंधारी ओरी तिहां, मु० कष्ट सह्यौ सुविशेष हो ॥ ६ ॥
हिवै चौमासौ उतरयो, मु० भेला हुवा सहु आंण हो।
बखतराम नै गुलाबजी, मु० कालवादी हुवा जाण हो ॥ ७ ॥
नव तत्व मैं तर्क उपजी, मु० इक जीव आठ अजीव हो।
जे सिद्धा मैं वस्त पावै नहीं, मु० सरधै काल सदीव हो ॥ ८ ॥
थिरपालजी फतैचन्दजी, मु० भिक्खु ऋष जग भांण हो।
टोकरजी हरनाथजी, मु० भारीमाल बहु जांण हो ॥ ९ ॥
रूड़ै चित्त भेला रह्या, मु० वर षट संत वदीत हो।
जावजीव लग जांणज्यो, मु० परम माहोमाहि प्रीत हो ॥ १० ॥
सात जणा भेला नां रह्या, मु० केयक धुर ही थी न्यार हो।
कोयक पाछै न्यारो थयो, मु० थेट न पौंहता पार हो ॥ ११ ॥
वर्ष किता वीरभांणजी, मु० रह्या भिक्खु रै हजूर हो।
अविनय अवगुण आकरौ, मु० तिण सूं निषेध नै कियौ दूर हो ॥ १२ ॥
पछै श्रद्धा पिण फिर गई, मु० वीरभांण री विशेष हो।
इन्द्रियां सावज श्रद्धनैं, मु० बले द्रव्य भाव जीव एक हो ॥ १३ ॥

अनेक बोल ऊंधा पड्या, मु० बिगड़ी अविनय थी बात हो।
वर्ष बतीसैं गण बारै कियो, मु० पछै मैंणा नें मूंड्या साख्यात हो।।१४।।
षट रह्या तेरां माहिला, मु० सात हुवा इम दूर हो।
पिण पुण्य प्रबल भिक्खु तणा, मु० दिन दिन चढ़तै नूर हो।। १५ ।।
शूरा सिंह तणी परै, मु० सुर-गिर जेम सधीर हो।
अङ्गज ओजागर अति घणा, मु० बिड़द निभावण वीर हो।। १६ ।।
टोलौ छोडी नैं निंसर्‍या, मु० त्यांरी पिण नहीं तमाय हो ।
ग्रन्थ हजारां जोड़ीनैं, मु० श्रद्धा दीधी ओलखाय हो।। १७ ।।
अतिशय धारी ओपता, मु० शासण शिरमणि मौड़ हो।
आचार्य इण काल मैं, मु० अबर न एहनीं जोड हो।। १८ ।।
सावद्य निर्वद्य शोधनैं, मु० दान दया ओलखाय हो।
व्रत अव्रत वर बारता, मु० भिन्न भिन्न भेद बताय हो।। १९ ।।
उत्पत्तिया बुद्धि आपरी, मु० आछी अधिक अनूप हो।
दृष्टान्त विविधज दीपता, मु० चित्त चरचा अति चूंप हो।। २० ।।
ढाल भली ए आठमीं, मु० भिक्खु गुण रा भंडार हो।
उमङ्ग करी चरण आदर्‍यौ, मु० समण शिरोमणि सार हो।। २१ ।।

दुहा

स्वाम मारग साचौ लियौ, करवा जन्म कल्याण।
कुगुरु कुबुद्धि अति केलवी, जन भरमाया जांण।। १ ।।
भागल भेष धार्‍यां तणैं, उपनौं द्वेष अत्यन्त।
लोकां भणी लगाविया, विविध वचन विलपन्त।। २ ।।
कोई सङ्ग यांरौ कीज्यो मती, लाग जावैला लाल।
निन्हव छै ए निंकल्या, कोई कहै जमाली गोसाल।। ३ ।।
यां देव गुरु नैं उत्थापिया, दान दया नैं उत्थाप।
जीव बचावै तेह मैं, ए कहै अठारै पाप।। ४ ।।
भगु भिड़काया पुत्रां भणी, साधां मैं चूक बताय।
ज्यूं भिक्खु सूं भिडकाविया, औहिज मिलियौ न्याय।। ५ ।।
जिहां जिहां भिक्खु विचरता, आगूंच जोवै बाट।
कह्यौ कन्हैं जायज्यो मती, थोड़ा मैं होय जाय थाट।। ६ ।।
केई तौ प्रश्न पूछवा, केयक देखण काज।
कुगुरां रा भरमाविया, ऊंधा बोलता नांणैं लाज।। ७ ।।

उपसर्ग अनेक दे रह्या, वदै बचन विकराल।
पिण क्षमा भिक्खु तणी, वारुं अधिक विशाल ॥ ८ ॥
अधिक नीत आचार नीं, अधिक सुमति उपयोग।
अधिक गुप्त गुण आगला, जशधारी शुभ जोग ॥ ९ ॥

ढाल : ६

[ब्रजवासी लाल कान्ह तैं मेरी गागर कांय मरोड़ी—ए देशी]

भिक्खु स्वाम भारी, जगत उद्धारक जशधारी। ए आंकड़ी।
भारी रे खिम्यां गुण भिक्खु नौं भाल २, निर्लोभी मुनि निर्मल न्हाल। भि० ॥ १ ॥
कपट रहित शुद्ध सरल कहाय २, निरहंकार रूड़ी नरमाय। भि० ॥ २ ॥
लाघव कर्म उपधि वर लाज २, सत्य वचन स्वामी सुख साज। भि० ॥ ३ ॥
वारु रै भिक्खु नौ संजम वाह वाह २, लीधौ मनुष्य जनम नौ लाह। भि० ॥ ४ ॥
वारु रे भिक्खु नौ तप तहतीक २, रूडै चित्त मुनि महा रमणीक। भि० ॥ ५ ॥
बारु रे दान मुनि नैं दै आंण २, नित्य प्रति गौचरी करत प्रधांन। भि० ॥ ६ ॥
घोर ब्रह्म भिक्खु नौ सार २, सङ्ग रहित तिहुं जोग श्रीकार। भि० ॥ ७ ॥
इर्या धुन भिक्खु मुनिराज २, जाणके चाल रह्यौ गजराज। भि० ॥ ८ ॥
भाषा सुमति भिक्खु नीं भाल २, निर्वद्य निर्मल सुधा सम न्हाल। भि० ॥ ९ ॥
एषणा अधिक अनुपम सार २, देखन हारौ पांमैं चमत्कार। भि० ॥ १० ॥
वस्त्रादि लैतां जैणा विशेष २, म्हेलतां अति उपयोग संपेख। भि० ॥ ११ ॥
पंचमी सुमति भिक्खु नीं पिछांण २, सावचेत भिक्खु सुविहांण। भि० ॥ १२ ॥
मन वच काया गुप्त गुणवन्त २, सत दत शील दया निर्ग्रंथ। भि० ॥ १३ ॥
अष्ट सम्पदा गुण अधिकार २, आचार्य भिक्खु अणगार। भि० ॥ १४ ॥
आचारज ना गुण सुछतीस २, भिक्खु मैं शोभै निश दिस। भि० ॥ १५ ॥
पञ्च महाव्रत निर्मल पालंत २, च्यार कषाय भिक्खु टालंत। भि० ॥ १६ ॥
बश करै इन्द्रिय पञ्च विचार २, पञ्च सुमति त्रिण गुप्ति उदार। भि० ॥ १७ ॥
आचार पञ्च भिक्खु ना अमोल २, बाड़ सहित ब्रह्म अधिक अतोल। भि० ॥ १८ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि भिक्खु नीं उदार २, तत्क्षण जाब दियै तंतसार। भि० ॥ १९ ॥
अन्यमति स्वमति सुण वच सार २, चित्त माहै पांमैं चमत्कार। भि० ॥ २० ॥
वारु रे भिक्खु थारा दृष्ठन्त २, आश्चर्यकारी अधिक अत्यन्त। भि० ॥ २१ ॥
वारु रे भिक्खु तुझ बुद्धि ना जाब २, पूछतां उत्तर देवै सताब। भि० ॥ २२ ॥
वारु रे भिक्खु वीर्य आचार २, तैं कियौ उद्यम अधिक उदार। भि० ॥ २३ ॥
वारु रे भिक्खु तुझ नीत बैराग २, तूं प्रगट्यौ बहु जन नैं भाग। भि० ॥ २४ ॥

वाह रे भिक्खु तूं गिरवौ गम्भीर २, तूं गुणदधि* कुंण पामैं तीर। भि० ॥ २५ ॥
वाह रे भिक्खु तुझ मुद्रा ऐन २, पेखत पांमैं चित्त में चैन। भि० ॥ २६ ॥
सांवली सूरत दीर्घ देह विशाल २, लाल नयण गज हस्ती नीं चाल। भि० ॥ २७ ॥
जीव घणा तिरणा इण काल २, आगूंच देख्या दीन दयाल। भि० ॥ २८ ॥
त्यां जीवां रैं तरण रै साज २, तूं प्रगट्यौ मोटौ मुनिराज। भि० ॥ २९ ॥
याद आवै भिक्खु दिन रैन २, तन मन विकसावे मुझ नैंन। भि० ॥ ३० ॥
मरणौ तेवर तैं धार्‌यो शुद्ध माग २, भ्रम भञ्जन मुनि तू महाभाग। भि० ॥ ३१ ॥
अनघ अथग गुण भिक्खु मझार २, मैं संक्षेप कह्यो सुविचार। भि० ॥ ३२ ॥
नवमी ढाले भिक्खु ऋष न्हाल २, महिमागर मोटा गुण माल। भि० ॥ ३३ ॥

दुहा

भारी गुण भिक्खु तणा, कह्या कठा लग जाय।
मरण धार शुद्ध मग लियौ, कमिय न राखी काय ॥ १ ॥
परम दुर्ल्लभ श्रद्धा प्रगट, आखी श्रीजिन आप।
तीजे उत्तराध्ययन तन्त, थिर भिक्खु चित्त थाप ॥ २ ॥
बहुलकर्मी जीव बहु, ऊपजिया इण आर।
दिलमैं बैसणी दोहिली, श्रद्धा महा सुखकार ॥ ३ ॥
परम पूरी धूर पगथियौ, श्रीजिन श्रद्धा सार।
शुद्ध सरध्यां समकित सही, भिक्खु कियौ विचार ॥ ४ ॥
धर्म तणा द्वेषी घणा, लागू बहुला लोंग।
समझाया समझै नहीं, अधिका मूढ़ अयोग ॥ ५ ॥
जब भिक्खु मन जांणियौ, कर तप करूं किल्यांण।
मग नहीं दिखै चालतौ, अति घन लोग अजांण ॥ ६ ॥
घर छोड़ी मुझ गण मझै, सञ्जम कुंण लै सोय।
श्रावक नैं बलि श्राविका, हुंता न दिसै कोय ॥ ७ ॥
एहवी करे आलोचना, एकन्तर अवधार।
आतापन बलि आदरी, संतां साथै सार ॥ ८ ॥
चौबिहार उपवास चित्त, उपधि ग्रही सहु संत।
आतापन लै बन मझै, तप कर तन तावंत ॥ ९ ॥

*गुणदधि = गुणोदधि

ढाल : १०

[पूज्यजी पधरौ हो नगरी सेविये—ए देशी]

थिरपालजी स्वामी फतैचन्दजी, संत दोनूं सुखकार हो। महामुनि।
तात सुत ने दोनूं तपसी भला, सरल भद्र सुविचार हो। महामुनि।
थे भलां नें अवतरिया हो, भिक्खु भरत क्षेत्र मैं ॥ १ ॥
टोला मैं छतां बड़ा स्वाम भिक्खु थकी, त्यांनैं बड़ा राख्या भिक्खु स्वाम हो। म०।
यांनैं छोटा करनैं हूं वड़ौ होऊं, इन मैं सूं परमार्थ तांम हो। म० ॥ २ ॥
करै एकान्तर भिक्खु ऋष भला, लेवै आतापन लाभ हो। म०।
व्रत अव्रत लोकां नैं बतावता, जन हर्षे सुण जाव हो। म० ॥ ३ ॥
सरल भद्र कैक लागा समझवा, वारु कैक बुद्धिवांन हो। म०।
ओलखणा आई श्रद्धा आचार नीं, पायौ धर्म प्रधांन हो। म० ॥ ४ ॥

सोरठिया

पंच वर्ष पहिछांण रे, अन पिण पूरौ नां मिल्यो।
बहुल पणै वच जांण रे, घी चोपड़ तौ ज्याहीई रह्यौ ॥

ढाल तेहिज

नित्य थिरपालजी फतैचन्दजी इम कहै, स्वामी भिक्खु नैं सोय हो। म०।
क्यूं तन तोड़ौ थे तपस्या करी, समझता दिसै बहु लोय हो। म० ॥ ५ ॥
थे बुद्धिवांन थांरी थिर बुद्धि भली, उत्पत्तिया अधिकाय हो। म०।
समझावौ बहु जीव सैणां भणी, निर्मल बतावौ न्याय हो। म० ॥ ६ ॥
तपस्या करां म्हे आतम तारणी, अधिक पौंच नहीं और हो। म०।
आप तरौ थे तारौ अवर नैं, जाझौ बुद्धि नौं जोर हो। म० ॥ ७ ॥
संत बड़ा रौ वचन भिक्खु सुणी, धार्‌यौ धर चित्त धीर हो। म०।
न्याय विशेष बतावता निर्मला, हरख्यौ हिवड़ौ हीर हो। म० ॥ ८ ॥
दान दया हद न्याय दीपावता, ओलखावता आचार हो। म०।
जिन वच करी प्रभु माग जमावता, समझ्या बहु नर नार हो। म० ॥ ९ ॥
प्रगट मेवाड़ मैं पूज्य पधारिया, युक्ति आचार नीं जोड़ हो। म०।
अनुकम्पा दया दान रै ऊपरै, जोड़ां करी धर कोड़ हो। म० ॥ १० ॥
अति उपकार करी पूज्य आविया, मुरधर देश मझार हो। म०।
सखर पणैं बर जोडां सुणावता, इम करतां उपगार हो। म० ॥ ११ ॥

व्रत अव्रत नै मांड बतावता, सखरी रीत सुचङ्ग हो। म०।
श्री जिन आज्ञा में धर्म श्रद्धावता, सुण जन पांमैं उमङ्ग हो। म० ॥ १२ ॥
जटाधारी भिक्खु नौं जगत मैं, बाध्यौ जश विख्यात हो। म०।
बुद्धि प्रबल गुण पुण्य नौं पोरसौ, स्वाम भिक्खु साख्यात हो। म० ॥ १३ ॥
शिष भारीमाल भिक्खु पै सोभता, सरल बडा सुविनीत हो। म०।
भद्र प्रकृति बुद्धि पुण्य गुणे भला, परम पूज सूं प्रीत हो। म० ॥ १४ ॥
दशमी ढाले पूज दयाल नीं, जाभी कीरति जांण हो। म०।
देश प्रदेश मांहैं जश दीपतौ, विस्तरियौ सुविहांण हो। म० ॥ १५ ॥

दुहा

साधू श्रावक ने श्राविका, सखर भला सुविनीत।
समणी न हुई स्वाम रै, वर्ष किता इम बीत॥ १ ॥
किण ही भिक्खु नैं कह्यौ, तीर्थ थांरै तीन।
साध श्रावक नैं श्राविका, समणी नहीं सुचीन॥ २ ॥
तिण कारण छै तांहरै, मोदक मोटौ मांण।
समणी बिण खाण्डौ सही, प्रत्यक्ष देख पिछांण॥ ३ ॥
भिक्खु ऋष भाषै इसौ, लाडू खाण्डौ लेख।
पण चौगुणी तणौ पवर, स्वाद अनूंप संपेख॥ ४ ॥
आछी बुद्धि उत्पात सूं, उत्तर दियौ अनूप।
दिन केतैं हुई दीपती, समणी तीन सद्रुप॥ ५ ॥
तीन बायां त्यारी हुई, सञ्जम लेवा साथ।
भिक्खु रिष भाषै भली, सुन्दर सीख साख्यात॥ ६ ॥
सञ्जम लेवौ साथ त्रिण, पण तीनां मैं पेख।
वियोग एक तणौं हुवां, स्यूं करिवौ सुविशेष॥ ७ ॥
सलेषणा करणी सही, त्यां दोयां नैं तांम।
करार पक्कौ इम करी, सञ्जम दीधौ स्वाम॥ ८ ॥
कुशलांजी मट्टू कही, त्रीजी अजबू ताय।
एक साथै अदरावियो, साधपणौ सुखदाय॥ ९ ॥

ढाल : ११

[स्वामी ऋष रायचन्द राजा—ए देशी]

गजब गुण ज्ञान करी गाजैं रे, गजब गुण ज्ञान करी गाजैं।
गुरु भिक्खु पैं अजब छटा हट भारीमाल छाजैं ॥ ए आंकड़ी ॥
सरल भद्र भल श्रमण शिरोमणि, ऋप रूड़ा राजैं।
पर्ण कर्ण धर समस्यां चित्त सूं, भ्रम कर्म भाजैं ॥
गजब गुण ज्ञान करी गाजैं रे। ग० ॥ १ ॥
क्षान्त दांत चित्त शांति खरालज, उभय थकी लाजैं।
परम विनीत प्रीत हद पूरण, शिव रमणी साजैं। ग० ॥ २ ॥
जोड़ी गोयम वीर जिसी वर, शिष्य वारु बाजैं।
कार्य भलायां बेकर जोड़ी, करत मुक्ति काजैं। ग० ॥ ३ ॥
परम पीत पूज्य सुं जल पयसी, पद भवदधि* पाजैं।
कठिन वचन गुरु सीख कहै तौ, समचित मुनि साजैं। ग० ॥ ४ ॥
उत्तराध्ययन छत्रीसे अध्ययने, ऊभां छतां अधिकारी।
वार अनेक गुणियां विध सूं, धुर गुरु आज्ञा धारी।
गजब गुण ज्ञान गरब गारी रे। ग० ॥
गुरु भिक्खु पैं अजब छटा, हद भारीमाल भारी ॥ ५ ॥
भिक्खु भारीमाल नैं भाषै, सांभल सुखकारी।
काढै खूंचणो गृहस्थ कोई तो, तेलौ डंड त्यारी। ग० ॥ ६ ॥
भिक्खु भारीमाल नैं भापै, साचौ कहै सारी।
तब तौ तेलौ तन्त खरौ, पिण द्वेप जगत् धारी। ग० ॥ ७ ॥
झूठौ नांम लियै कोई जन, लागू अति लारी।
सूं करिवौ ते स्वामी प्रकाशौ, आज्ञा अधिकारी। ग० ॥ ८ ॥
भिक्खु कहै जो साचौ भापै, तो तेलौ त्यारी।
अणहुंतौ कोई आल दियैं, तौ संचित सम्भारी। ग० ॥ ९ ॥
पूर्व संचित पाप उदय नौं, तेलौ तंत सारी।
स्वामी नौं वच श्रद्ध कियौ, कर जोड़ी अंगीकारी। ग० ॥ १० ॥
भारीमाल सुवनीत इसा भड़, सुगुणा सुखकारी।
पुण्य प्रबल थी भिक्खु पाया, ममत मांन मारी। ग० ॥ ११ ॥
घोर घटा घन गरजारवसी, बाण सुधा उवारी।
भिन्न २ भेद भली पर भापत, दाखत दमितारी। ग० ॥ १२ ॥

*भवदधि=भवोदधि

हद वचनामृत सुण जन हर्षंत, निरखत नर नारी।
नयनानन्दन कुमति निकन्दन, पद सूरत प्यारी। ग० ॥ १३ ॥
हिये निर्मल हरनाथ मुनि, टोकरजी तंत सारी।
परम विनीत भारमलजी, भल संत साताकारी। ग० ॥ १४ ॥
घर छोड़ी बहु थया मुनि, धन्य ज्ञान गर्व गारी।
समणी पिण बहु थई सयांणी, स्वाम शरण भारी। ग० ॥ १५ ॥
दिन २ भिक्खु नौं मग दीपत, शासण शिणगारी।
पंचम काल स्वाम प्रगटियौ, हूं तसुं बलिहारी। ग० ॥ १६ ॥
एकादशमी ढाल अनोपम, बारु विस्तारी।
कठा तिलक भिक्खु गुण कहियै, पांमत किम पारी। ग० ॥ १७ ॥

दुहा

आगम रहिस अनुपम लही, स्वाम भिक्खु सार।
शुद्ध श्रद्धा शोधी सही, बलि आचार विचार ॥ १ ॥
दान सुपात्रे दाखियौ, संत मुनी नैं सार।
असंजती नैं आपियां, एकंत पाप असार ॥ २ ॥
भगवती अष्टमैं शतक भल, षष्टम उद्देशै आप।
असंजती नैं आहार दे, प्रभु कह्यौ एकंत पाप ॥ ३ ॥
दैं गृहस्थ नैं दान ते, अनुमोदैं अणगार।
निशीथ पनरमैं निरखल्यौ, डंड चौमासी धार ॥ ४ ॥
सावज दान प्रशंसिया, हिन्सा रौ बांछण हार।
सूयगड़ा अंग सूत्र मैं, आख्यौ मुनि आचार ॥ ५ ॥
श्रावक सामायक मझै, अधिकरण अति जांण।
भगवती सप्तम शतक भल, प्रथम उद्देशै पिछांण ॥ ६ ॥
व्यावच गृहिनीं वर्णवी, अणाचार मैं आंम।
दशवैकालिक देखल्यौ, तीजै अध्येने तांम ॥ ७ ॥
श्रावक नौं खाणौ सर्व, अव्रत मैं अधिकार।
वर्णन उववाई बीस मैं, बलि सूगडांग विचार ॥ ८ ॥
इत्यादिक जिनवर अखी, शोधी भिक्खु स्वाम।
बले संक्षेपे वर्णऊं, सूत्र साख सुख ठांम ॥ ९ ॥

ढाल : १२

[पूज्यने नमैं शोभो गुण करैं—ए देशी]

पुत्र भगु नौं परवरौ, उत्तराध्ययन उमंग। सुज्ञानी रे।
विप्र जिमायां तमतमा, चउदमैं अज्झयण सुचंग। सुज्ञानी रे॥
श्रद्धा दुर्ल्लभ देवां कही॥ १॥

आद्रमुनि इम आखियौ, सुगडांग छट्ठै सम्भाल। सु०।
ब्राह्मण बे सहंस जिमावियां, नरय तणा फल न्हाल।सु०। श्रद्धा० ॥ २॥

आणन्द श्रावक लियौ अभिग्रहौ, सातमैं अंग श्रीकार। सु०।
अन्यतीर्थी नैं आपूं नहीं, असणादिक च्यारूं आहार। सु० ॥ ३॥

प्रत्यक्ष गोसाला नैं आपिया, सकडाल सेज्झा संथार। सु०।
उपासग सातमैं आखियौ, नहीं धर्म तप लिगार। सु० ॥ ४॥

दैतौ लैतौ वर्त्तमान देखनैं, मून कही तिणकाल। सु०।
पंचम अध्येने परवरौ, सूयगड़ा अंग संभाल। सु० ॥ ५॥

दुःखी मृगालोढौ देखनैं, प्रभु नैं गोतम पूछन्त। सु०।
'किंदच्चा' दान किसौ दियौ, विपाक सूत्र मैं वृतन्त। सु० ॥ ६॥

भाव अव्रत शस्त्र भाखियौ, ठाणाअंग दशमैं ठाण। सु०।
कोई अव्रत सेवायां धर्म कहै, जिन मारग रा अजांण। सु० ॥ ७॥

नव प्रकारै पुण्य नींपजै, नवमा ठाणा मैं न्हाल। सु०।
समचै नवूं ही कह्या सही, समचै मन वचन संभाल। सु० ॥ ८॥

करणी धर्म अधर्म नीं कही, जुजूई दोनूं सुजांण। सु०।
आचारंग चौथा अध्ययन मैं, तीजी मिश्रनी करखी म तांण। सु० ॥ ९॥

आज्ञा माहैं धर्म आखियौ, बोलवौ जुगतौ न बाहार। सु०।
उत्कृष्टी चरचा आचारङ्ग मैं, छट्ठे अध्ययन रै दूजै विचार। सु० ॥ १०॥

जिन आज्ञा तणा अजाणनैं, समकित दुर्लभ सुजाण। सु०।
आचारंग चौथे अध्ययन मैं, चौथे उदेशै पिछांण। सु० ॥ ११॥

उद्यम करै आज्ञा बिना, आज्ञा मैं आलस आय। सु०।
सुगुरु कहै बे बोल होज्यो मती, आचारंग पांचमां रै छट्ठा मांय। सु० ॥ १२॥

आज्ञा लोपी छान्दै चालै आप रै, ज्ञान रहित गुण हीण। सु०।
आचारंग दूजा अध्ययन मैं, छट्ठे उदेशै सुचीन। सु० ॥ १३॥

प्रमादी द्रव्यलिंगी पासत्था, वीर कह्या आज्ञा बारै अवधार। सु०।
आचारंग चौथा अध्ययन मैं, पिण धर्म न कह्यौ आज्ञा बार। सु० ॥ १४॥

सावां छोड्यौ उन्मार्ग सर्वथा, आदर्‍यौ मार्ग उदार । सु० ।
आवसाग चौथा अध्ययन मैं, साघां छोड्यौ ते अधिक असार । सु०॥ १५ ॥
चार मंगल उत्तम शर्ण चिहुं, केवली परूप्यौ धर्म मंगलीक । सु० ।
एहिज उत्तम शरणौ पिण एहनौं, तंत आवसग मैं तहतीक । सु० ॥ १६ ॥
इत्यादिक बोल अनेक छै, आगम मैं अधिकाय । सु० ।
स्वामी भिक्खु शोध शोधनैं, आछी रीत दिया ओलखाय । सु० ॥ १७ ॥
पाखण्डियां प्रभु पन्थ उत्थापियौ, ओलख्यो जिन वचन अमोल । सु० ।
भिक्खु आगम न्याय शोधी भला, प्रगट कीधी पाखण्ड्यां री पोल ।सु० ॥ १८ ॥
सावद्य दान मैं धर्म श्रद्धायनैं, मतिहीन न्हांखै फन्द मांय । सु० ।
स्वामी सूत्र न्याय सम्भालनैं, व्रत अव्रत दीधी बताय । सु० ॥ १९ ॥
धर्म आगन्या बारै धारनैं, भेषधार्‍यां मांड्यौ भ्रम जाल । सु० ।
थिर नींव आज्ञा भिक्खु थापनैं, बारु जिन वच थाप्या विशाल । सु० ॥ २० ॥
आगन्या बारै धर्म पाखण्ड्यां आदर्‍यौ, वर भिक्खु पूछ्यो इम वाय । सु० ।
आगन्या बारै धर्म किण परूपियौ, इणरौ मोनैं नाम बताय । सु० ॥ २१ ॥
विकल कहै म्हारी माता बांजणी, दियौ तिणरौ दृष्टान्त । सु० ।
वेश्या ना पुत्र तणुं वलि, खरा न्याय मेल्या घर खन्त । सु० ॥ २२ ॥

भिक्खु स्वाम कृत

जिण धर्म री जिन आज्ञा दियैं, जिन धर्म सिखावै जिनराय । भविक जन हो ।
आज्ञा बारै धर्म केणैं सिखावियौ, इणरी आज्ञा देवें कुण ताय । भविक जन हो ।
श्री जिण धर्म जिन आज्ञा तिहां ॥ १ ॥
कोई कहै म्हांरी माता है बांजणी, हूं छूं तिणरौ अंग जात । भ० ।
ज्यूं मूरख कहै जिन आज्ञा बिना, करणी कियां धर्म साख्यात । भ० ॥ २ ॥
मा बिन बेटा रौ जन्म हुवै नही, जनमैं तिका बांज न होय । भ० ।
ज्यूं धर्म छै तौ जिन आगन्या, आज्ञा नहीं औ धर्म नहीं कोय । भ० ॥ ३ ॥
वेश्या पुत्र नैं पूछा करै, थांरी कुंण मायनैं कुण तात । भ० ।
तौ नांम बतावै किण तात रौ ज्यूं, आ आगन्या बारला धर्म नी बात । भ० ॥ ४ ॥
वेश्या रौ अंग जात ऊपनौं, उणरौ कुण हुवै उदेरी नैं बाप । भ० ।
ज्यूं आगन्या बारै धर्म नैं पुण्य तणी, जिन धर्मी तौ कुंण करै थाप । भ० ॥ ५ ॥
वेश्या रौ अंग जात ऊपनौं, उण लखणौ हुवै उदेरीनैं बाप । भ० ।
ज्यूं आज्ञा बारै धर्म नैं पुण्य तणी, भेषधारी करे रह्या थाप । भ० ॥ ६ ॥

इण आज्ञा बारला धर्म रौ कुण धणी, कुण आज्ञा देवै जोड्यां हाथ। भ०।
देव गुरु मून साझ न्यारा हुवा, इणरी उत्पत्ति री कुण नाथ। भ०॥ ७॥
दुष्ट जीव मंजारी नैं चीतरा, छल सूं करै पर प्राणी नी घात। भ०।
ज्यूं दुष्ट हिंसाधर्मी जीवड़ा, छल सूं घालै लोकां रे मिथ्यात। भ०॥८॥

ढाल तेहिज

इत्यादिक आज्ञा ऊपरै, स्वामी न्याय मेल्या सुखदाय। मु०।
भाख्या भिन्न २ भेद भली परै, कसर न राखी काय। मु०॥ २३॥
बारु ढाल कही ए बारमी, साखां दान आज्ञा ऊपर सार। मु०।
बलि श्रद्धा तणी बहु वारता, तिणमैं सूत्र साख तंत सार। मु०॥ २४॥

दुहा

पुण्य री करणी परखड़ी, श्रीजिन आगम सिन्ध।
भिक्खु तास भली परै, प्रगट करी प्रबन्ध॥ १॥
निर्जरा री करणी निमल, जिन आज्ञा मैं जांण।
ते शुभ जोग निर्वद्य त्यां, पुण्य बन्ध पहिछाण॥ २॥
विरुई आज्ञा बारली, सावद्य करणी सोय।
पाप बन्धै तेहथी प्रगट, जिण थी पुण्य म जोय॥ ३॥
शुद्ध बहिरावै साध नैं, कहि निर्जरा एकन्त।
भगवती अष्टम शतक भल, छट्ठै उदेशे सुचिन्त॥ ४॥
शुभ लाम्बौ आऊ सखर, तसु बन्ध तीन प्रकार।
हिन्सा झूठ सेवै नहीं, संत भणी दै सार॥ ५॥
बहिरावै वन्दना करि, आहार मनोज्ञ उदार।
भगवती पंचम शतक भल, छट्ठै उद्देशे विचार॥ ६॥
वन्दणा ना फल वर्णव्या, नीच गोत क्षय नाश।
ऊंच गोत नौं बन्ध इम, उत्तराध्ययन उजास॥ ७॥
व्यावच कीधां बन्ध बलि, तीर्थंकर पुण्य तांम।
गुणतीसम ज्ञानी कह्यौ, उत्तराध्ययने आंम॥ ८॥
इत्यादिक आज्ञा तिहां, पुण्य नौ बन्ध पिछांण।
समय शोध भिक्खु सखर, आखी उज्झम आंण॥ ९॥

ढाल : १३

[पुण्य निपजै शुभ जोग सूं रे लाल—ए देशी]

दाखी व्यावच दश प्रकार नी रे लाल, ठांणां अंग दशमैं ठांण हो। भविकजन।
प्रगट दशों ही साध पिछांणज्यो रे लाल, जिणसूं पुण्य बन्धे निर्जरा जाण हो। भ० ॥
स्वामी श्रद्धा दिखाई श्रीजिन बयण सूं रे लाल॥ १ ॥

कालोदाई पूछ्यौ कर जोड़नैं रे लाल, भगवती मैं भाख्यौ भगवन्त हो। भ०।
पाप स्थानक अठारह परहर्‍यां रे लाल, किल्याणकारी कर्म बन्धन्त हो। भ०॥ स्वा २ ॥
सेवै पाप स्थानक अठारह सही रे लाल, बन्धै पाप कर्म विकराल हो। भ०।
सात में शतक सम्भालज्यो रे लाल, दाख्यो दशमैं उद्देशै दयाल हों। भ० ॥ ३ ॥
कर्कस वेदनी पिण इमहिज कही रे लाल, अठारह पाप सेव्यां असराल हो। भ०।
न सेव्यां अकर्कस भर्तनीं परै रे लाल, भगवती सातमा रै छट्ठै भाल हो। भ० ॥ ४ ॥
आख्यौ ज्ञाता रै आठमा अध्ययन मैं रे लाल, बीस बोलां तीर्थङ्कर पुण्य बन्धाय हों। भ०।
बीसूं ही निर्वद्य वर्णव्या रे लाल, श्री जिन आज्ञा मैं शोभाय हो। भ० ॥ ५ ॥
सूत्र विपाक मैं सुबाहु तणी रे लाल, गौमत पूछा करी प्रभु पास हो। भ०।
'किं दच्चा' इण दान दियौ किसो रे लाल, बाए निर्वद्य करनी विमास हो। भ० ॥ ६ ॥
अणुकम्पा सर्व जीवां री आणियां रे लाल, प्राणी नैं दुख नहीं उपजाय हो। भ०।
सातावेदनी तिणरै बन्धै सही रे लाल, सातमैं शतक भगवती सुहाय हो। भ० ॥ ७ ॥
करणी आठ कर्म बन्धनी कही रे लाल, भगवती आठमा रै नवमैं भेद हो। भ०।
तिणमैं निर्वद्य करणी पुण्य तणी रे लाल, सावद्य पाप री करणी संवेद हो। भ० ॥ ८ ॥
जयणा सूं आधु आहार करै जिहां रे लाल, पाप न बन्धै पिछाण हो। भ०।
दसवैकालिक चौथे देषलौ रे लाल, इहां पिण जिण आगन्या अगवांण हो॥ ९ ॥
साधु री गोचरी असावज सही रे लाल, दशवैकालिक देख हो। भ०।
अध्ययन पंचमैं आखियौ रे लाल, बांणुंमी गाथा विशेष हो। भ० ॥ १० ॥
सात कर्म ढीला पड़ै सही रे लाल, शुद्ध आहार करंतां साध हो। भ०।
पहिलै शतक भगवती नवमैं पेखल्यौ रे लाल, एहवा श्रीजिन वचन आराध हो। भ० ॥ ११ ॥
इत्यादिक बहु बोल अनेक छै रे लाल, श्रीजिन आज्ञा मैं सोय हो। भ०।
तिणसूं निर्जरा हुवै पुण्य बन्धै तिहां रे लाल, स्वामी ओलखाया सूत्र जोय हो। भ० ॥ १२ ॥
सावज्ज करणी आज्ञा बारै सही रे लाल, प्रगट थाप्यौ पाखण्डयां पुण्य हो। भ०।
भिक्खु आगम न्याय शोधी भला रे लाल, ज्यांरी श्रद्धा दिखाई जबून हो। भ० ॥ १३ ॥
तंत ढाल कही ए तेरमी रे लाल, निर्विद्य करणी पुण्य री निर्दोष हो। भ०।
भिक्खु ओलखाई भांत भांत सूं रे लाल, मिलै तिणसूं अविचल मोक्ष हो। भ० ॥ १४ ॥

दुहा

सूत्र में समचें कही, अणुकम्पा अधिकार ।
भिक्खु तास भली परें, शोध लीयो तंतसार ॥ १ ॥
जीव असंजती जेहनों, जीवण बान्छै जाण ।
सावज अनुकम्पा सही, मोहराग महि मांण ॥ २ ॥
मरणौ वंछ्यां द्वेष महि, जीवण राग जिवार ।
पाप आठारा में प्रगट, भ्रमण करावै भार ॥ ३ ॥
मोहराग अनुकम्प में, आज्ञा न दियै आप ।
इन कारण सावद्य छै, प्रगट राग है पाप ॥ ४ ॥
तरणौ बांछै ते सही, श्रीजिन आज्ञा सार ।
पाप टलावै पार कौ, ते निर्वद्य इकतार ॥ ५ ॥
निर्वद्य करुणा निर्मली, सावज अधिक असार ।
विविध सूत्र निर्णय सखर, स्वाम कियौ तंतसार ॥ ६ ॥
प्राश्चित आवैं प्रगट, अरिहन्त आज्ञा बार ।
अनुकम्पा सावज छै, बारु हियैं विचार ॥ ७ ॥
गाय भैंस आक थोर नौं, ये चारूं ही दूध ।
ज्यूं अनुकम्मा जाणज्यो, मन मैं राखी सुध ॥ ८ ॥
आक दूध पीधां थकां, जुदा हुवै जीव काय ।
ज्यूं सावज अणुकम्पा कियां, पाप कर्म बंधाय ॥ ६ ॥

ढाल : १५

[दया धर्म श्री जिनजी री बाणी—ए देशी]

अनुकम्पा त्रस जीव नी आंणी,, बान्धै छोडै साधु तिण वारोजी ।
छोड़ता नैं अनुमोद्यां चौमासी, निशीथ बारमैं निरधारो जी ॥
स्वाम भिक्खु निर्णय कियौ सूत्र सूं ॥ १ ॥
बाघ सिंह हिंसक जीव विलोकी, मार न कहै मतिवन्तो जी ।
मति मार नहीं कहै राग आणी मुनि, सूगडांग इकवीस मैं संतो जी ॥
वीर असंजम जीतब बरज्यौ, दशमैं सूगडांग दयालो जी ।
दशमैं ठांणै बलि आचारंग मैं, बारु वचन अनेक विशालो जी ॥ ३ ॥
उत्तराध्ययन बावीस में अध्येनैं, नेम पाछा फिस्या जीव न्हालो जी ।
इतला जीव हणैं मुझ अर्थै, बारु फल परभव न विशालो जी ॥ ४ ॥

मिथिला नगरी बलती जांण नमि मुनि, स्हामौ न जायौ सोयो जी।
उत्तराध्ययन रै नवमैं अध्ययनैं, कुरणा सावज नांणी कोयो जी ॥ ५ ॥
मनुष तिर्यंच देव मांहों मांहीं, विग्रह देखी विशेषो जी।
जीत हार बांछणी बरजी जिन, दशवैकालिक सात मैं देखो जी ॥ ६ ॥
बायरौ वर्षा शीत तावड़ौ, कलह उपद्रव रहित सुकालो जी।
बोल सातूं ही बांछणा वरज्या, दशवैकालिक सात मैं दयालो जी ॥ ७ ॥
दूजै आचारंग अध्ययन दूसरै, प्रथम उद्देशै सुपन्थो जी।
माहोंमा गृहस्थ लड़ता देखी नैं मुनि, मार मत मार न कहै महन्तो जी ॥ ८ ॥
तीन आत्मरूप तीजा ठाणा रै तीजै, दैणौ उपदेश हिंसक देखी जी।
न समझै तौ मून राखणी निरमल, बलि एकन्त जाणौ विशेषी जी ॥ ९ ॥
उत्तराध्ययन रे इकवीस मैं अध्ययनैं, तस्कर नैं मारतौ देखी तायो जी।
समुद्रपाल लियौ वर संजम, मोह करुणा नांणी मन मांयो जी ॥ १० ॥
समचै अनुकम्पा कही ते साम्भलौ, लखण आज्ञा थकी मींढ लीज्यो जी।
प्रभु आज्ञा देवै तेतो निर्वद्य प्रत्यक्ष, आज्ञा नहीं ते सावज ओलखीज्यो जी ॥ ११ ॥
अणुकम्पा सुलसां री आंणी, सुर हरणगवेषी सोयो जी।
पुत्र देवकी रा म्हेल्या प्रत्यक्ष, अन्तगढ़ मैं अवलोयो जी ॥ १२ ॥
ईंट उपाड़ मूकी कृष्ण आवत, अणुकम्पा पुरुष नी आंणी जी।
अन्तगढ़दशा मैं पाठ अनोपम, जिन आगन्या नहीं जांणी जी ॥ १३ ॥
उत्तराध्ययन बारमैं अध्ययनैं, अणुकम्पा हरकेशी नीं आंणी जी।
छात्रा नैं ऊंवा पाड्या यक्ष छलकर, प्रत्यक्ष सावद्य पिछाणी जी ॥ १४ ॥
रैणा देवी री करुणा करी जिन रिष, स्हामौ जोयौ साक्षातो जी।
नवमैं अध्ययने ज्ञाता मांहैं न्हालौ, अनर्थ दुःख उत्पातो जी ॥ १५ ॥
कोई कहै कलुणरस छै, करुणा, अणुकम्पा नहीं आखी जी।
अणुकम्पा करुणा दया अनुक्रोस ए, कलुण रसना नांम अमर साखीजी ॥ १६ ॥
करी नेम जीवां री अनुकम्पा, अनुक्रोस पाठ आछौं जी।
तिण अनुक्रोस नौ अर्थ कुरणा टीका मैं, सावज निर्वद्य कलुणरस साचो जी ॥ १७ ॥
सम्यक्त्व बिन मेघ गज भव साम्प्रत, अणुकम्पा सुसला री आंणी जी।
प्रत संसार मनुष्य आयु प्रगट, प्रथम अध्ययन ज्ञाता मैं पिछांणी जी ॥ १८ ॥
निज गर्भ री अणुकम्पा निमतै, रूड़ौ भोगव्यौ धारी रांणी जी।
प्रथम अध्ययन ज्ञाता मांही प्रत्यक्ष, जिहां जिन आगन्या किम जांण जी ॥ १९ ॥
अभयकुमार नी कर अणुकम्पा, दौहलौ पूर्‌यौ धारणी री देवौ जी।
ए पिण ज्ञाता रैं प्रथम अध्ययनैं, साम्प्रत सावज जांणौ स्वयमेवो जी ॥ २० ॥

शीतल तेजू लेश्या म्हेली स्वामी, अणुकंपा गोशाला री आंणी जी।
सूत्र भगवती पनरमें शतके, वृति माहें सराग बखांणी जी॥ २१ ॥
पन्नावणा सूत्र रै छत्रीस में पद, लब्धी तेजू फोड्यां क्रिया लागै जी।
तिणरा दोय भेद उष्ण शीतल तेजू छै, शीतल तेजू फोड़ी वीर सागै जी॥ २२ ॥
कही साधु री हर्ष खेद्यां वैद नैं क्रिया, नहीं साधु रै क्रिया निहाली जी।
पिण धर्म अन्तराय साधु रै पाड़ी वैद, भगवती सोलमा रै तीजे भाली जी॥ २३ ॥
इत्यादिक बोल अनेक आख्या छै, समचै सूत्र मांही सोयो जी।
जिन आज्ञा नहीं ते सावज जानौ, आज्ञा ते निर्वद्य अवलोयो जी॥ २४ ॥
नेम समुद्रपाल गज नैं नमि ऋषि, आतम ऋषि अवधारौ जी।
निर्वद्य आगन्यां मैं छै निर्मल, सावज भ्रमण संसारो जी॥ २५ ॥
स्वाम भिक्खु ए सूत्र शोधी, अनुकम्पा ओलखाई जी।
विविध हेतु न्याय जुगति बताया, कुमित न राखी कांई जी॥ २६ ॥
भेषधारी भ्रम पाड़ै भोलां ने, दया मोहराग नैं दिखाई जी।
सिद्धन्त रा जोर सूं भिक्खु स्वामी, असल श्रद्धा ओलखाई जी॥ २७ ॥
चवदमी ढाल सुन जन चातुर, अनुकम्पा निर्वद्य आदरजो जी।
रूड़ी आसता भिक्खु नीं राखी, पाखण्ड मत परहरो जी॥ २८ ॥
दान दया सूत्र साख दिखाई, खण्ड प्रथम धर खंतो जी।
सूत्र नेश्राय ए ज्ञान स्वाम नौं, मति ज्ञान नौं भेद सुतंतो जी॥ २९ ॥

कलश

जय जय कारण दुख विडारण, सुमग धारण स्वाम जी।
शुद्ध सुमति सारण कुमति बारण, जगत तारण कांम जी॥ १ ॥
प्राक्रम मृगपति सखर धर चित्त, ज्ञान नेत्रे रिषी गुणी।
जिन मग्ग केतु हद सुहेतु, नमो भिक्खु महा मुनि॥ २ ॥

द्वितीय खण्ड

सोरठा

प्रथम खण्ड पहिछांण रे, रचियौ रूड़ी रीत सूं।
खण्ड दूजै गुण खाण रे, दृष्टन्त कहूं दयाल ना॥

दुहा

आख्यौ दान दया असल, जिम भाख्यौ जिनराज।
बुद्धि उत्पत्तिया महाबली, साध्यौ शिव पन्थ साज॥ १ ॥
मतिज्ञान महिमा निलौ, दोय भेद तसु देख।
सूत्रे नेश्राय सिद्धन्त छै, सूत्र बिना सम्पेख॥ २ ॥
सूत्र कहीजे बात सहु, निर्मल सूत्र नेश्राय।
बुद्धि सूं मिलती बात बर, सहु असूत्र नेश्राय॥ ३ ॥
सूत्र साख श्रद्धा सखर, स्वाम दिखाई सार।
सूत्र तणी नेश्राय शुद्ध, आगम अर्थ उदार॥ ४ ॥
चार बुद्धि सूं चिन्तवी, दियै विविध दृष्टान्त।
असूत्र नेश्राय ओलखौ, बर नंदी बिरतंत॥ ५ ॥
हिवे असूत्र नेश्राय हद, दिया स्वाम दृष्टांत।
मति ज्ञान महा निर्मलौ, स्वाम तणौ शोभंत॥ ६ ॥
केवल उत्तरतौ कह्यो, मति ज्ञान महाराज।
पज्जवां लेख पिछांणज्यो, सूत्र भगवती साज॥ ७ ॥
सखरौ भिक्खु स्वाम नौं, महा मोटौ मति ज्ञान।
साचा न्यायज शोधिया, दृष्टान्त देई प्रधान॥ ८ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि सूं अख्या, मिलता न्याय मुणन्द।
केशी नीं परै शुद्ध कथा, दृष्टान्त अति दीपंत॥ ६ ॥

ढाल : १५

[अभड़ भड़ रावण इन्द्रा सूं अड़ियो रे—ए देशी]

पाखण्डियां सावज दान परूपियौ, त्यांनैं भिक्खु पूछ्यौ तिणवार।
सावज मैं पुण्य श्रद्धियौ, एक सांभलज्यौ हेतु उदार॥
स्वामी बुद्धि सागरू, बारु मेल्या न्याय विशाल।
अधिक गुण आगरू भल, उत्पत्तिया बुद्धि भाल॥ १॥
पांच सीरी बायौ खेत परवरौ जी, चणां तणो चित्त धार।
नाज पांच सौ मण चणा निपना, तब मतौ कियौ तिणवार॥ २॥
घर मांहैं तौ धन आपांरै घणुं जी, करां दान धर्म कहि वाय।
एक जणैं सौ मण चणा आपिया, वहु भिख्यारयां नैं वोलाय॥ ३॥
दिया सौ मण चणां रा दूसरै, सेकाय भूंगरा सोय।
त्यांरी गुगरी तीजै करायनैं, जिमाया भिखारयां नैं जोय॥ ४॥
चौथै रोट्यां सौ मण चणा तणी जी, कडी पाखती कराय।
भिखारी रांकादिक भणी जी, जुगति सूं दिया जिमाय॥ ५॥
सौ मण चणा पांचमैं बोसिराविया, तिणरै हाथ लगावा ना त्याग।
कहौ धर्म पुन्य घणो केहनै, सखरौ उत्तर देवौ सताव॥ ६॥
भगवन्त री आज्ञा किण भणी, कुण आज्ञा बार कहात।
एम सुणने उत्तर आयौ नहीं, ऐसी भिक्खु नीं बुद्धि उत्पात्त॥ ७॥
दान ऊपर दृष्टांत दूसरौ, स्वाम भिक्खु दियौ सुखदाय।
हलुकर्मी सांभल हर्षै घणा, भारीकर्मी रै द्वेष भराय॥ ८॥
भिख्या मांगतौ डोकरौ, भम रह्यौ अभ्यागत दुखियौ एक।
धर्मात्मा भूखा नैं धान द्यौ, बिरुआ बोलै वचन विशेष॥ ९॥
एक जणैं अणुकम्पा आंणनैं, सेर चणा दिया सोय।
गुणग्राम भिखारी करै घणा, आशीश देवै अवलोय॥ १०॥
आगै जाई एम बोलियौ, सेर चणा दीधा सेठ एक।
पिण दांत नहीं कोई पीस दौ, बारु छै कोई धर्मी विशेष॥ ११॥
एक बाई अणुकम्पा आंण नै, पीस दियो कैहत पांण।
वलि आगै जाई इम बोलियौ जी, छै कोइ धर्मी पिछांण॥ १२॥
एक सेठ चणां सेर आपिया, पीस दिया दूजी पुण्यवांन।
आटौ फाकणी आवै नहीं, जिण सूं रोटी कर दौ धर्मजान॥ १३॥

अनुकम्पा तीजी आणनैं, सेर चूणा रा फांफड़ा सोय।
सिन्धो घाल कर दीधा सही, जीमी तृप्त हो गयौ जोय॥ १४॥
तृषा लागी तिण अवसरें, आगै जाई बोल्यौ बात।
सेर चणा दिया एक सेठ जी, पीस दिया दूजी पुन्यवांन॥ १५॥
झट रोट्यां कर तीजी जीमावियौ, अति लागी है तृषा अथाय।
है धर्मात्मा एहवौ, प्राण जातानैं पाणी पाय॥ १६॥
चौथी बाई अणुकम्पा चित्त धरी, पायौ त्रस सहित काचौ पांण।
कहौ धर्म घणौ हुवो केहनैं, पाछै कह्या च्यारुं ही पिछाण॥ १७॥
आज्ञा बारला दान ऊपरै, दियौ स्वामी भिक्खु दृष्टन्त।
प्रत्यक्ष कारण पापना जी, किण विध पुन्य कहंत॥ १८॥
हलुकर्मी सांभल हर्षे हियै, भारीकर्मी सुणे भिड़कन्त।
सूत्र न्याय साचा सही, धारै उत्तम पुरुष धर खंत॥ १९॥
पवर ढाल कही पनरमी, स्वामी थापी है श्रद्धा सार।
उत्पत्तिया बुद्धि ओपती, बलि आगलि बहु विस्तार॥ २०॥

दुहा

जाब सुणी बुद्धिवान जन, चित्त पामैं चमत्कार।
सांभल केइक समझियां, पाम्या हर्ष अपार॥ १॥
केयक बलि इण पर कहै, थे दान दया दी उथाप।
श्रद्धा किहां ही नां सुणी, प्रत्यक्ष श्रद्धौ पाप॥ २॥
भिक्खु बलता इम भणौं, पज्जुसणा मैं पेख।
आखा आटौ आदि दै, आपै नहीं अशेष॥ ३॥
पर्व्व दिवस पज्जुसणा, धर्म्म तणा दिन धार।
अधिक धर्म्म तिहां आदरै, पाप तणौ परिहार॥ ४॥
दान अनेरा नैं दियां, जांणैं धर्म्म जिवार।
कीधौ बंध किण कारणैं चित्त सूं करौ विचार॥ ५॥
एह बात है आगली, परम्परा पहिछांण।
कहौ ए थाप करी किणैं, बारु करौ विनांण॥ ६॥
हूं तौ हिवड़ाइज हुवौ, जद तौ नहीं थौ जांण।
जाब दियौ अति जुगत सूं, सुण हरष्या सुविहांण॥ ७॥
सूत्र न्याय शुद्ध परम्परा, सखर मिलावै स्वांम॥ ८॥
जग पूर्व धारी जिसा, औजागर अभिरांम॥ ८॥

अपर दान रै ऊपरै, दीधा वलि दृष्टान्ति।
विविध न्याय वर वारता, सांभलजो चित्त शांति॥ ६॥

ढालः १६

[घोड़ी री देशी]

शहर खेरवै पधारस्या स्वामी, ओटौ गाल प्रश्न पूछ्यौ एम।
श्रावक कसाई गिणौ थे सरीखा, कहै खोटी श्रद्धा इसड़ी धारां म्हें केम॥
स्वाम भिक्खु रा दृष्टान्त सुणजो॥ १॥
स्वाम कहै किम गिणां सरीखा, जब ते कहै श्रावक नैं दियां पाप जोणौं।
कसाई नैं दिया पिण पाप कहौ छो, प्रत्यक्ष दोनूं सरीखा इण न्याय पिछांणौ॥ २॥
स्वाम कहै इम नहीं सरीखा, श्रावक कसाई बे जुआ संपेख।
ओटौ कहै दोनूं थया सरीखा, दोयां नैं दियां पाप कहौ तै लेख॥ ३॥
पूज कहै थांरी माता नैं पायौ, सचित पाणी री लोटी भर सोय।
कहौ तिणमैं थांरै निपनौं कांई, ओटौ कहै पाप छै अवलोय॥ ४॥
पुनरपि स्वाम औटा ने पूछ्यौ, पाणी लोटी भर वेश्या नैं पायौ।
धर्म थयौ कै पाप हुवौ थानैं, ओटौ कहै तिणमैं पिण पाप थायौ॥ ५॥
पूज कहै दोयां मैं पाप थायौ, थांरी माता नैं वेश्या सरीखी थांरै न्यायौ।
जो माता वेश्या नैं न गिणौ सरीखी, तौ श्रावक कसाई सरीखा न थायौ॥ ६॥
अति कष्ट थयां लोक कहै ओटै जी, माता नैं वेश्या सरीखी मांनी।
चित्त मांहै चमत्कार लहै चातुर, अणहुंता अवगुण धारै अग्यानी॥ ७॥
संवत् अठारै पैंतालीसै स्वामी, प्रगट चौमासौ कियौ पीपार।
जनक हस्तु कस्तु नौं जगु गांधी, वारु चरचा सूं श्रद्धा चित्त धार॥ ८॥
भेषधारी तिगनैं लागा भड़कावा, खोटी श्रद्धा भीखणजी री खार।
एक गृहस्थ श्रावक नैं बासती आपी, पाप कहै तिण माहीं अपार॥ ९॥
बलि किणहि गृहस्थ री बासती चोर ले गयौ, तिणरौ पिण गृहस्थ नैं पाप बतावै।
श्रावक नैं चोर गिणैं इम सरीखौ, जब जगु स्वामी जी नैं पूछ्यौ प्रस्तावै॥१०॥
पूज कहै उणनैंज पूछणौ, चद्दर थांरी एक ले गयौ चोर।
एक चद्दर थे श्रावक नैं आपी, जद थांनैं डंड किणरो आवै जोर॥११॥
तस्कर चद्दर लेई गयौ तिणरौ, प्राश्चित मूल न सरधै संपेख।
श्रावक नैं दियां री प्राश्चित सरधै, जद तौ दैणौज खोटौ ठहरचौ त्यांरै लेख॥१२॥
जाव सुणी समझ्यौ जगु गांधी, ऐसी स्वामीजी री बुद्धि उत्पात।
सिद्धांत री सरधा नैं थापण साची, न्याय विविध मेलव्या स्वामी नाथ॥१३॥

सोलमी ढाल में भिक्खु स्वामी री, ओलखाई बुद्धि श्रद्धा उदार।
श्री जिन आगन्या धारी सिर पर, सरधा दिखाय दीधी तंत सार॥ १४॥

दुहा

श्रद्धै सावज दान में, पुण्य मिश्र एकन्त।
पूछ्यां कहै मुझ मून है, केई इसड़ौ कपट करंत॥ १॥
पूछ्यां न कहै पाधरौ, पुन्य मिश्र पख एक।
आख्यौ हेतु ओपतौ, वारु स्वाम विशेष॥ २॥
किण ही पुरुष पूछा करी, नार भणी पिउ नांम।
थारौ धणी रौ नाम कुंण, स्यूं पेमौ है ताम॥ ३॥
कहै पेमौ क्यांनें हुवै, बलि पूछ्यौ तिणवार।
नाथू नांम है तेहनौं, कंत तणौ अवधार॥ ४॥
कहै नाथू क्यांनें हुवै, बलि पूछ्यौ सुविशेष।
पाथू है नांम तेहनौ, तुझ पीतम संपेख॥ ५॥
कहै पाथू क्यांनें हुवै, इम बहु नांम विचार।
सागे नांम आयां थकां, रहै अबोली नार॥ ६॥
सैंणौ तव जांणें सही, इणरा पिउ रौ नाम।
एहिज छै तिण कारणैं, मून रही इण ठाम॥ ७॥
ज्यूं सावज दान में पाप है, कहै क्यांनें हुवै पाप।
मिश्र पूछ्यां पिण इम कहै, क्यांनें है मिश्र थाप॥ ८॥
पुन्य पूछ्यां सूं मून रहै, न करै तास निखेह।
सैंणौ जब जांणें सही, इणरै श्रद्धा एह॥ ९॥

ढाल : १७

[प्रभवौ मन मैं चिन्तवै—ए देशी]

पूज्य भीखणजी पधारिया, वर इक गांम विमास।
साध अमर सिंघजी तणा, पूज आया त्यां पास॥ १॥
प्रश्न भिक्खु स्वाम पूछियौ, अनुकम्पा मन आंण।
मरता नैं मूला दिया, जिणमैं सूं हुवौ जांण॥ २॥
तांमस आंणी ते कहै, प्रश्न इसौ पूछन्त।
जे मिथ्याती जांणियै, भिक्खु बलि भाषंत॥ ३॥
पूछण वालै पूछियौ, समकती होवै सोय।
अथवा मिथ्याती मानवी, जे पिण पूछै जोय॥ ४॥

उत्तर आपै एहनीं, जो मिथ्याती होय जाय।
उत्तर तौ आपौ मति, नहीं तौ आखौ न्याय ॥ ५ ॥
तब ते बोल्या तड़कनैं, मूला मांहै पाप ।
पूज्य कहै पुन्य पाप बिहुं, के केवल पाप किलाप ॥ ६ ॥
दैण वाला नैं दाखियै, पुन्य पाप पिछांण ।
जाव न देवै जांण नैं, वलि भिक्खु कहै वांण ॥ ७ ॥
केई मूला खवायां मिश्र कहै, इम पूछ्यां कहै आंम ।
मिश्र कहै ते पापी सही, तब स्वामी कहै तांम ॥ ८ ॥
केई मूलां खवायां पाप कहै, वलि ते बोल्या वांण ।
पाप कहै सो पापिया, झूठा एकन्त जांण ॥ ९ ॥
फिर स्वामी पूछा करी, मूला खवायां मांण ।
कई एक पुण्य कहै सही, जब ते वोल्या जांण ॥ १० ॥
पुण्य कहै सोही पापिया, सुणनैं स्वाम विचारै ।
श्रद्धा पुन्य री दीसै सही, वात तीनूंई वारै ॥ ११ ॥
वलि मन भिक्खु विचारियौ, कहिण वाला नें कह्यो पापी ।
पिण श्रद्धण वाला पुरुष नीं, थिर पूछा करूं थापी ॥ १२ ॥
पूज इम चिन्तवी पूछियौ, अनुकम्पा आंण ।
मूला देवै ते मनुष्य नैं, पुण्य केई श्रद्धै पिछांण ॥ १३ ॥
स्वाम तणी पूछा सांभली, वलि बोल्यो ते वांण ।
मन आसी ज्यूं सरधसी, जब स्वाम लियौ जांण ॥ १४ ॥
इम चिन्तवी स्वामी ऊचरै, मूला खवायां मांण ।
प्रगट पुन्य प्ररूपौ नहीं, पिण श्रधा पुन्य री पिछांण ॥ १५ ॥
इत्यादिक जाब अनेक सूं, कष्ट किया अधिकाय ।
आया ठिकांणैं आपणें, स्वामी महा सुखदाय ॥ १६ ॥
मोटी मति महाराज नीं, वारुं वुद्धि सुविचार ।
जाब लियौ अति जुगत सूं, ऊपर सूं अवधार ॥ १७ ॥
सखर ढाल कही सतरमीं, आगै वहु अधिकार ।
स्वाम दृष्टान्त सुणी करी, चतुर लहै चिमत्कार ॥ १८ ॥

दुहा

भीखणजी स्वामी भणी, किणही पूछा कीध ।
दान असंजती नैं दियां, पाप कहो प्रसिध ॥ १ ॥

कड़वा फल किण कारणैं, निर्मल बतावौ न्याय।
कहै भिक्खु किण सेठ रै, नवली कड़ी बंधाय॥ २॥
ते नवली रुपयां तणी, तस्कर देखी तांम।
सेठ तणैं लारै हुवौ, रुपया लेवण कांम॥ ३॥
पूठैं तस्कर पेखनैं, साहुकार न्हासंत।
लारै तस्कर दौड़तो, इतलै पग अखुड़ंत॥ ४॥
पग आखुड़ हेठौ पड़्यौ, चित्त बिलखांणौ चोर।
इतलै किण हीक मांनवी, अमल खवायौ जोर॥ ५॥
अमल खवाय पायौ उदक, सैंठौ कियौ शूर।
दुश्मन ते तिण सेठ नौं, साझ दियौ भरपूर॥ ६॥
अमल खवायौ ते पुरुष, बैरी सेठ नौं बाध।
साझ दियौ बैरी भणी, अरि थी हुवै उपाधि॥ ७॥
ज्यूं छकाय ना हिंसक भणी, जे नर पोषै जाण।
ते बैरी पट काय नौं, प्रत्यक्ष हियै पिछाण॥ ८॥
हणण हार पट काय नौं, तसुं पोषे कियौ शूर।
तिण कारण जीवां तणौ, बैरी ते भरपूर॥ ९॥

ढाल : १८

[सीता दियैं रे आलंभड़ो—ए देशी]

सावज दान श्रद्धायवा, दियौ भिक्खु दृष्टान्त।
खेत बायौ एक करसणी, पाकौ खेत अत्यंत।
तंत दृष्टांत भिक्खु तणा॥ १ ॥
इतलै धणी रै बालौ हुवौ, दूखणी आयौ देख।
किणहिक औषध दे करी, सांत रौ कियौ विशेष। तं०॥ २ ॥
ताजौ हुवौ तिण अवसरै, खेत काट्यो धर खंत।
साझ दैण वाला नैं सही, लागै पाप एकन्त॥ ३ ॥
कहै पाप हुवै खेत काटियां, तौ काटण वाला नैं सोय।
साझ देई नैं साझौ कियौ, तिणनैं पिण पाप जोय॥ ४ ॥
तिमहिज और पापी तणैं, साता कीधी विशेष।
तिण माहैं धर्म किहां थकी, दिल माहें देख॥ ५ ॥
कैकेइक भेषधारी कहै, धन दीधां धर्म।
बले कहै ममता ऊतरी, भौलां रे पाड़ै भ्रम॥ ६ ॥

पूज्य भिक्खु तिण ऊपरैं, निरमल मेल्या न्याय।
भ्रम लोकां रौ भाजवां, स्वामी महा सुखदाय॥ ७ ॥
किणही मनुष्य रैं खेती हुंती, बीस बिघा विचार।
दश बिघा ब्राह्मण नैं दिया, धर्म अर्थे धार॥ ८ ॥
बीस हलां री खेती विषै, दश हल खेती दीध।
ए पिण ममता उतरी, तिणरैं लेखैं प्रसिद्ध॥ ९ ॥
कह्यो परिग्रह नव प्रकार नों, दोपद चौपद देख।
पांच दास्यां दीवी पर भणी, पांच गाया संपेख॥ १० ॥
ए पिण ममता ऊतरी, तिणरैं लेखैं तहतीक।
धर्म कहै रुपया दियां, तौ इणमैं पिण धर्म ठीक॥ ११ ॥
दास्यां खेती गायां दियां, पुन्य रौ अंश म पेख।
इमहिज रुपया आपियां, धर्म पुन्य म देख॥ १२ ॥
पाप अठांरां में पंचमौ, परिग्रह महा विकराल।
सेव्या सेवायां पाप छै, भगवती मैं सम्भाल॥ १३ ॥
सावद्य साता करैं सही, इणसूं पाप एकन्त।
जिन आज्ञा वाहिर जाणज्यो, सूयगडा अङ्ग शोभंत॥ १४ ॥
भिक्खु स्वाम भली परैं, ओलखाया ऐंन।
हलुकर्मीं हरख्या घणा, चित्त मैं पाम्या चैन॥ १५ ॥
आखी ढाल अट्ठारमी, वारु स्वामी ना बोल।
बोल सार ही सुहांमणा, आछा नैं अमोल॥ १६ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, असंजती अवलोय।
तिणनैं दान देवा तणा, त्याग करावौ मोय॥ १ ॥
भिक्खु स्वामी इम भणैं, सरध्या मुझ वच सोय।
प्रतीतिया रुचिया पवर, जिणसूं त्याग सुजोय॥ २ ॥
कै म्हांनैं भांडण भणी, करै इसा पचखांण।
इम कही कष्ट कियौ अति हि, सखर स्वाम बुद्धिवांन॥ ३ ॥
किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, टोला वाला ताहि।
प्रत्यक्ष पुन्य प्ररूपैं नहीं, सावज दान रैं माहि॥ ४ ॥
स्वाम कहै कोई असतरी, जल लोटौ भर जांण।
म्हारैं हाटै सूंपज्यौ, कही किण नैं वांण॥ ५ ॥

नाम पिउ नौ नां लियो, पिण सूंप्यौ कर सांन।
इम सांनी कर पुन्य कहै, पुन्य री श्रद्धा पिछांण ॥ ६ ॥
किणहिक स्वामी नैं कह्यो, पड़िमाधारी पेख।
दान निर्दोषण तसुं दियां, सूं फल कहौ विशेष ॥ ७ ॥
स्वाम कहै लै सूझतौ, पड़िमाधारी पिछांण।
तसुं फल होवैं ते सही, दैंणवाला नैं जाण ॥ ८ ॥
लैण वाला नैं पाप कहै, पाप लगायौ दातार।
तिण मैं पुन्य किहां थकी, स्वाम जाब श्रीकार ॥ ९ ॥

ढाल : १६

[वीर सुणौ मोरी विनती—ए देशी]

काचौ पांणी पायां मांहैं पुन्य कहै, स्वामी दीधो हो तेहनैं दृष्टन्त।
कोई खाई लुंटावै पारकी, थारै लेखै हो इणमैं पुन्य एकन्त ॥
तंत दृष्टन्त भिक्खु तणा ॥ १ ॥
खाई लुटायां जो पाप है, पाणी पायां हो किम होसी पुन्य।
दोनूं बरोबर देखल्यौ, सावद्य दोनूं हो कण रहित है सुन्य ।तं०॥२॥
अव्रत में अन धन दियां, भेषधारी हो थापै धर्म नैं पुन्य।
स्वाम भिक्खु दियो शोभतौ, हद हेतु हो सुणज्यो तन मन ॥ ३ ॥
लाय मां सूं काढ़ै दूजी लाय मैं, धन न्हांख्यां हो कांम न आवै ते धार।
आप कन्है धन अव्रत मैं हुंतौ, अव्रती ने हो दियौ अव्रत मझार ॥ ४ ॥
लाय लागां गृहस्थ रौ घर जलै, वलतौ देखी हो किण ही धन काढ्यौ बार।
ले न्हांख्यौ दूजी लाय मैं, तत्खिण आयौ हो सेठ पास तिवार ॥ ५ ॥
अहो सेठजी तुझ घर आग थी, सखरी वस्तु हो धन काढ्यौ म्है सार।
सेठ सुणी हरख्यौ सही, ते धन किहां छै हो आपौ वस्तु उदार ॥ ६ ॥
औ कहै न्हांख्यौ दूजी आग मैं, सेठ जाण्यौ हो पूरौ मूरख सोय।
लायमां सूं काढी न्हांख्यौ लाय मैं, काम न आवै हो तिण लेखै कोय ॥ ७ ॥
अव्रत रूप लाय हुंती आप रै, अव्रती नैं हो दीधौ औरनैं धन।
लाय लगाई और रै, प्रत्यक्ष देखौ हो तिणमैं किम हुवै पुन्य ॥ ८ ॥
श्रावक रै त्याग तेतौ व्रत सही, अव्रत जाणौ हो बाकी रह्यौ आगार।
अव्रत सेवावै और री, तिण माहैं हो धर्म नहीं लिगार ॥ ९ ॥
अव्रत व्रत न ओलखै, भेषधारी हो करै भेल संभेल।
दृष्टान्त स्वाम दियौ इसौ, घी तम्बाकू हो भेल्यां कदेय न मेल ॥ १० ॥

औषध जीभ आंख्यां तणौ, आंह्मौ सांह्मौं हो घाल्यां दोनूं बिलाय।
ज्यूं अव्रत मैं धर्म सरधियां, पाप व्रत मैं हो सरध्यां दुर्गति जाय ॥ ११ ॥
शोरीगर रा घर मैं शोर बासदी, न्यारा राख्यां हो घर बिणसै नांय।
ज्यूं व्रत अव्रत फल जु जूआ, जन जांण्यां हो समकित न जलाय ॥ १२ ॥
प्रगट पसारी रै पारखा, न्यारा राखै हो मिश्री सोमल न्हाल।
ज्यूं धर्म अधर्म खातौ जू जुवौ, सैंठी समकित हो शुद्ध सरध्यां संभाल ॥ १३ ॥
कोई कहै गृहस्थ री छान्दो अछै, दान देवै हौ गृहस्थ नैं देख।
भिक्खु कह्यौ छान्दा मैं तो धूल छै, घृत तौ छै हो कूड़ी मैं संपेख ॥ १४ ॥
मैदौ खाण्ड घृत शुद्ध मिल्यां, सखरा कहियै हो लाड़ सरस सवाद।
ज्यूं चित्त वित्त पात्र तीनूं जूड्यां, अति फल लहियै हो भव दधि तिरियै अगाध ॥१५॥
घृत खाण्ड विहुं शुद्ध घणा, मैदा री जागां हो लाद है मांय।
ज्यूं चित्त वित्त दोनूं चोखा मिल्या, पात्र जागां हो असाधु नैं बहिराय ॥ १६ ॥
घृत मैदौ चौखा घणा, खाण्ड जागां हो माहैं घाली धूल।
ज्यूं चित्त पात्र दोनूं ही शुद्ध जूड्या, वित्त जागां हो असूझतौ विष तुल्य ॥ १७ ॥
खाण्ड मैदो चौखा खरा, घृत जागां हो माहैं घाल्यौ गौमूंत।
ज्यूं वित्त पात्र दोनूं ही शुद्ध जूड्या, चित्त जागां हो दैवणवालो कपूत ॥ १८ ॥
घृत री ठौर गौमूंत ह्वै, खाण्ड ठांमैं हो घाली धूल महा खार।
लाद मैदा री जायगां, आत्री मिलिया हो तीनूं अधिक असार ॥ १९ ॥
ज्यूं दैणवालौ ही असूझतौ, वस्तु दीधी हो असूझती जबून।
अव्रत माहीं लेवाल अंगीकरी, प्रत्यक्ष पेखौ हो इणमें किम हुवै पुन्य ॥ २० ॥
चित्त वित्त पात्र चोखा मिल्यां, कर्म निर्जरा हो पुन्य बन्ध कहिवाय।
एक अधूरौ तीनां मझे, थिर चित्त देखौ हो तिणमें पुन्य न थाय ॥ २१ ॥
दृष्टान्त ऐसा भिक्खु दिया, स्वामी मेल्या हो सूत्र नैं न्याय सिंध।
यां बिन इसड़ी कुण कथै, पूर्वधारी हो जैसा भिक्खु प्रबन्ध ॥ २२ ॥
पंचम आरै प्रगट्या, आप औजागर हो आपसूं अनुराग।
हूं पिण हिवड़ां ऊपनौ, साची श्रद्धा हो पांमी ए मुझ भाग ॥ २३ ॥
आखी ढाल उगणीसमी, चित्त उमग्यौ हो भिक्खु आया चीत।
याद आयां हो हियौ हुलसै, गुण गावत हो हुवौ जन्म पवित्र ॥ २४ ॥

दुहा

सखरौ मारग शोधनैं, दियौ स्वाम उपदेश।
कुबुद्धि कुकला केलवी, पूछै प्रश्न अशेष ॥ १ ॥

थानैं असाध सरधनैं, दीधौ मैं तुझ दान।
तिणरौ मुझनैं स्यूं हुवौ, इम पूछ्यौ किण जांन ॥ २ ॥
भिक्खु कहै मिश्री भली, किण खाधी विष जांण।
मन सुख पावै के मरै, उत्तर एह पिछांण ॥ ३ ॥
ज्यूं थे असाध जांणने, दियौ सूझतौ दांन।
अजांणपणौ घट थांहरै, पात्र उत्तम फल जांन ॥ ४ ॥
इत्यादिक बहु आखिया, दांन ऊपर दृष्टन्त।
किंचित् मात्र मैं कथ्या, बधतौ जाणी ग्रन्थ ॥ ५ ॥
विविध दया ऊपर बलि, हेतु महा हितकार।
आक थोहर रा दूध सम, सावज दया असार ॥ ६ ॥
अनुकम्पा इहै लोक री, जीवणो बांछै जांण।
मोह राग माहैं तिका, तिणमैं धर्म म तांण ॥ ७ ॥
जे आरम्भ सहित जीवणौ, असंजती रौ अंभ।
जिण बांछ्यौ ए जीवणौ, तिण बांछ्यौ आरम्भ ॥ ८ ॥
सूत्रे श्री जिन बरजियौ, असंजम जीतब आस।
भिक्खु स्वाम भली परै, मेल्या न्याय बिमास ॥ ९ ॥

ढाल २०

[नगर सोरीपुर राजवी रे—ए देशी]

केई पाखण्डी इम कहै रे, लाय बुझावै लोयो।
अल्प पाप बहु निर्जरा रे, दम्भ करी थापै दोयो।
दम्भ करी दोय थापैं बेशर्मो, तेउ जीव मुंआ ते पाप कर्मो।
आगला जीव बच्या तिणरो धर्मो।
भौलां तणैं मन पाड़ै भ्रमो जी, सहु कोई जी हो ॥ १ ॥
उत्तर भिक्खु आपियौ रे, सांभलज्यो चित्त लायो।
हलुकर्मी सुण हर्षियें रे, भारीकर्मी भिड़कायो।
भारीकर्मी भिड़कै लहै तापो, तेउ जीव मुवां रो कहै पापो।
और बच्या तिण रौ धर्म थापो, कर रह्या मूरख कूड़ किलापो।
तिणरी श्रद्धा रौ लेखौ सुण आपो, नाहर मार्‍यां एकलौ नहीं पापो जी ॥ २ ॥
नाहर हिल्यौ एक आकरौ रे, करै मनुषां रौ खैंगालो।
गायां भैंस्यां अजा बाकरा रे, सांभर रोझ सियालो।
सांभर रोझ सियाल पिछाणौं, प्रत्यक्ष लूंट रह्यौ पर प्रांणो।
जीव घणां रौ करै घमसांणो, पङ्क प्रभा उत्कृष्ट पयांणौ जी ।स०॥३॥

किणही विचार इसौ कियौ रे, एतौ है मांस आहारी।
ए जीवियां जीव मारै घणा रे, एहवा अध्यवसाय धारी।
एहवा अध्यवसाय सूं सिंह मारी, उणरी श्रद्धा रै लेखै विचारी।
नाहर रौ पाप हुवौ निरधारी, और बच्यां रौ धर्म हुवौ भारी जी।स०।।४।।

बीजौ दृष्टन्त भिक्खु दियौ रे, छै एक पापी कसाई।
पांच पांच सौ भैंसा नैं मारतौ रे, करुणा न आंणै काई।
मन मांहैं करुणा आंणैं नें काई, किण ही विचार कियौ मन मांही।
एहनैं मार्‌यां बहु जीव बचाई।
एम विचारी नैं मारयो कसाई, घणा जीवा नैं बचावण तांई जी।स०।।५।।

लाय बुझायां मिश्र कहै रे, तिणरी श्रद्धा रै लेखौ।
कसाई नैं मार्‌यां पिण मिश्र छै रे, पोता नीं श्रद्धा पेखौ।
पोतारी श्रद्धा पेखौ निज नैंणौ, पाप कसाई नौं ए सत्य वैंणौ।
जीव घणा बच्यां रौ धर्म लैणौं।
पोता री श्रद्धा लेखै कहि देणौ, कसाई नैं मार्‌यां एकन्त पाप न कैहिणौं जी।स०।।६।।

तीजौ दृष्टन्त स्वामी दियौ रे, उरपुर एक अजोगो।
घणा ऊंदरां ना गटका करै रे, मनुष्य पहुंचावै परलोको।
मनुष्य मार परलोक पहुंचावै, घणा पंख्यां ना अण्डा पिण खावै।
सर्प घणा जीवां नैं सतावै, उत्कृष्टे धूमप्रभा लग जावै जी।स०।।७।।

किण ही विचार इसौ कियौ रे, सर्प घणा नैं सतावै।
एक सर्प मार्‌यां थकां रे, जीव घणा सुख पावै।
जीव घणा सुख पावै सुजांणी, अनुकम्पा बहु जीवां री आंणी।
सर्प मार बचाया बहु प्राणी, लाय बुझायां कहै मिश्र वाणी।
तिणरै लेखै इणमैं मिश्र पिछांणी जी।स०।।८।।

चौथौ दृष्टान्त स्वामी दियौ रे, कोई पुरुष नौं एहवौ आचारो।
बाप मुंवां पहिली कह्यौ रे, काल करतां तिणवारो।
काल करतां सुत कही थी वांणो, सुखे तुम्हारा निसरो प्रांणो।
थां लारै अटव्यादिक बालस्यूं जांणी, घणा ग्राम नगर बाल करस्यूं घमसांणौजी।स०।।९।।

मनुष्य ढांढा घणा मारस्यूं रे, बाप नैं एहवौ सुणायौ।
पिता पहुंतौ परलोक मैं रे, पछै करवा लागौ सहु तायो।
करवा लागौ छै जीवां रौ घमसांणौ, किणहिक मन मैं विचार्‌यौ जांणौ।
एक मार्‌यां सूं बचै बहु प्राणो, इन चिन्तन ने पुरुष नैं मार्‌यौ अयाणो जी।स०।।१०।।

लाय बुझायां मिश्र कहै रे, तिणरै लेखै ए पिण मिश्र होयौ।
एक मास्यौ पाप तेहनौं रे, बहु बचिया तिणरौ धर्म जोयो।
बचियां रौ धर्म त्यांरै लेखै बाजै, अल्प पाप बहु पुन्य फल राजै।
एक मास्यौ घणा राखण काजै, इणमैं पिण मिश्र कहितां कांय लाजै जी।स०॥ ११॥

पूज्य कह्यौ वलि पांचमौं रे, दृष्टान्त अधिक उदारो।
कोई तुरकादिक आकरौ रे, साथ सेना ले अपारो।
सेना लेई देश ऊपर आयौ, ग्राम नगर कतल करवानैं ध्यायौ।
मनुष्य तिर्यच मारण ऊमाह्यौ, सेन्य अधिकारी ना हुक्म थी थायो जी।स०॥ १२॥

किण ही विचार इसौ कियौ रे, करसी घणा जीवां रौ संहारो।
सेन्य अधिकारी नैं मारियां रे, सर्व जीव बचै इणवारो।
जीव बचै कतल नहीं हुवै तायो, इम जाण अधिकारी नैं परभव पहुंचायौ।
मास्यौ ते पाप वच्यौ पुन थायो, तिणरे लेखै इणमैं पिण मिश्र कहिवायो जी।स०॥१३॥

बचियारी धर्म बतायनैं रे, कहै लाय बुझायां धर्म।
जीव अग्नि रा जीवियां रे, तिणसूं घणा मरै ते अधर्म।
अग्नि जीव्यां घणा मरै ते पापो, इण विध कर रह्या कूड़ किलापो।
अग्नि जीव हणियां मिश्र थापो, तेहनौं न्याय सुणौ चुप चापो।
तिणरै लेखै गायां मास्यां केवल न पापोजी।स०॥१४॥

गायां भेंस्यां आदि जीवसी रे, तेपिण घणी छःकाय हणंतो।
मनुष्यादि पवन छतीस छै रे, मच्छादिक जलचर जन्तो।
जन्तु मच्छादिक जलचर जांणी, ते पिण हणैं छःकाय ना प्रांणी।
अग्नि जीव नै हण्यां मिश्र मांणी, तिणरै लेखै ए सर्व हण्यां मिश्र जांणी जी।स०॥ १५॥

संसार मांहैं साधु बिनां रे, सर्व हिंसा रा त्याग न दीसै।
पन्नवणा पद बीस मै रे, भाख्यौ श्री जगदीसै।
श्री जगदीश भाखी इम रेंसो, प्राणातिपात बेरमण सु अशेषो।
मनुष्य बिनां और रै न कहेसो, बुद्धिवन्त जोय विचारज्यो रेंसो जी।स०॥ १६॥

साधु विना संसारी सहु रे, हिंसक जीव कहायो।
त्यां सगलां नैं मारियां रे, एकलौ पाप न थायो।
किण ही नैं मास्यां एकलौ पापो, जिणनैं मास्यौ तिणरौ महा तापो।
और बच्या तिणरौ पुन्य मिलापो, साधु नैं मास्यां रौ एकन्त पापो।
खोटी श्रद्धा रा लेखा री ए थापो जी।स०॥ १७॥

लाय बुझायां मिश्र कहै रे, तिणरी श्रद्धा रै न्यायो।
हिंसक नैं मारण तणा रे, त्याग करावणा नहीं तायो।
त्याग करावें छै किण न्यायो, हिंसक वच्या घणा जीव हणायो।
हिंसक मार्यां मिश्र धर्म थायो, ऊंधी सरधा रौ नौं [illegible] जी ।स०॥१८॥

दृष्टन्त स्वाम भिक्खु दिया रे, सूत्र न्याय तंत सारी।
जीव बच्यां धर्म थापनैं रे, भूल गया भ्रम मैं भेषधारी।
भूल गया भ्रम में भेषधारी, मोहराग माहैं दया विचारी।
भिक्खु ओलख तसु कियौ परिहारी, तिरणौ वांछै निज पर नौं तिवारी।
तिण माहैं धर्म कह्यौ तंतसारी जी ।स०॥१९॥

वीसमी ढाल विषै कह्या रे, दया ऊपर दृष्टन्तो।
सूत्र सिद्धन्त रा जोर सूं रे, न्याय मिलाया तंतो।
स्वाम भिक्खु शुद्ध न्याय मिलायो, दान दया रूड़ी रीत दिखायो।
हलुकर्मी सुण हर्षायो, भारी कर्मा रै तौ मन नहीं भायो जी ।स०॥२०॥

दुहा

पाली शहर पधारिया, पूज्य भवोदधि पाज।
एक जणौं तिहां आवियौ, चरचा करवा काज॥ १ ॥
ऊंचौ बोलतौ कहै, दुष्ट श्रावक तुझ देख।
फांसी कोई रा गलहुंती, काढै नहीं संपेख॥ २ ॥
थांरा म्हांरा मति करौ, स्वामी भाखै सोय।
समचै बात करौ सही, न्याय हियै अवलोय॥ ३ ॥
फांसी ली किण रूंख थी, देख्यौ जावत दोय।
काढ़ै नहीं ते कैहवौ, काढ़ै तैं कैहवौ होय॥ ४ ॥
ते कहै फांसी काढ़ लै, उत्तम पुरुष ते तंत।
जाणहार शिव स्वर्ग नौं, दयावंत दीपंत॥ ५ ॥
नहिं काढ़ै ते नरक रौ, जाणहार दौभाग।
भिक्खु कहै तुम तुझ गुरु, जाता दोनूं माग॥ ६ ॥
कुण फांसी काढ़ै कहौ, कहै हूं काढ़ूं तिहां जाय।
मुझ गुरु तौ काढ़ै नहीं, मुनि नैं कल्पै नांय॥ ७ ॥
स्वाम कहै शिव स्वर्ग नौं, जाणहार तूं पेख।
तुझ गुरु नरक निगोद ना, जाणहार तुझ लेख॥ ८ ॥

मुणनैं कष्ट हुवौ घणौं, जाब दैन असमर्थ।
ऐसी बुद्धि स्वामी तणी, उर मैं अधिक ओपंत॥ ६ ॥

ढाल : २१

[पर नारी संग परिहरो—ए देशी]

सावद्य उपकार संसार तणा छै, तिणमैं म जाणज्यो तंतो।
पूज्य भिक्खु ओलखायवा, प्रगट दियौ इसौ दृष्टन्तो॥
स्वाम भिक्खु रा दृष्टांत सुणज्यो॥ १ ॥

एक नृपति चोर पकड़्या इग्यारह, दुवौ मारण रौ दीधौ।
साहुकार एक अरज करी इम, सांभलज्यो प्रसिद्धो। स्वा०॥ २ ॥
पंच पंच सौ सौ रुपया प्रगट, इक इक चोर ना लीजै।
आप कृपानिधि अरज मानी नैं, पोर इग्यारा छोड़ीजै। स्वा०॥ ३ ॥
राजा भाखैं महा अपराधी, दुष्ट घणाई दुख दाता।
छोड़वा जोग नहीं छै तस्कर, मान मछर मद माता। स्वा०॥ ४ ॥
सेठ कहै दश मूंकौ स्वामी, लाभ रुपयां रौ लीजौ।
तौ पिण नृप नहीं छौड़ै तस्कर, कहै चोरां री पख नहीं कीजै। स्वा०॥ ५॥
नव तस्कर मूंकौ कृपानिधि, आठ सात आदि जांणी।
इण पर अरज करी अधिकेरी, महिपति तौ नहीं मांनी। स्वा०॥ ६ ॥
रोकड़ पांच सौ देई राजा नैं, चोर एक छोड़ायौ।
ते पिण विनती अधिक करी तब, तस्कर मूंक्यौ तायौ। स्वा०॥ ७ ॥
पुर ना लोक करै गुण प्रगट, सेठ तणा सहुकोयो।
धन्य धन्य लोक कहै यौ धर्मी, हर्ष हियै अति होयो। स्वा०॥ ८ ॥
बंधी छोड़ लोकां मैं बाजै, अधिक कियौ उपगारो।
तस्कर पिण गुण गावै तेहना, सुजश फैल्यौ संसारो। स्वा०॥ ९ ॥
महिपति दश चोरां नैं मराया, इक निज स्थानक आयौ।
समाचार न्यातीलां नैं सुनाया, परियण दुख अति पायौ। स्वा०॥ १० ॥
तस्कर दश ना न्यायतीला ते, भारी द्वेष भरांणा।
वैर वालण नैं भेला हुवा, बहु प्रत्यक्ष ही प्रगटांणा। स्वा०॥ ११ ॥
चोर सारां नैं साथै लेई चाल्यौ, पुर दरवाजै पिछाणौ।
चिट्ठी बांध लोकां नैं चेतायौ, सांभलज्यो सहु वांणो। स्वा०॥ १२ ॥
मुझ तस्कर दश मार्‍या तिणरौ, इग्यारे गुणौ वैर गिणस्यूं।
मनुष्य एक सौ दश मार्‍यां स्यूं, पछै विपटाली करस्यूं। स्वा०॥ १३ ॥

साहुकार ना पुत्र सगां नें, मित्र भणी नहीं मारूं।
अवर न छोड़ूं उरांणें आयौ, पंथ रह्या पिण पारूं। स्वा० ॥ १४ ॥
एम कही जन मारण उमग्यौ, सुत किण ही रौ संहारै।
किण ही रौ तात भाई हणैं किण रौ, माता किण री मारै। स्वा० ॥ १५ ॥
किण री नार हणैं अति कोप्यौ, बहिन कोई री विणसै।
किण ही री भूवा भतीजी किण री, तस्कर इम जन त्रासै। स्वा० ॥ १६ ॥
प्रबल भयंकर नगर में प्रगट्यौ, होय रह्यौ हा हा कारो।
सेठ नैं निंदवा लागा सहु जन, प्राभवै वचन प्रहारो। स्वा० ॥ १७ ॥
साहुकार रै घर जाई सगला, रोवैं लोग लुगाई।
कोई कहै मुझ माता मराई, कोई कहै प्रिय भाई। स्वा० ॥ १८ ॥
रे पापी तुझ घर धन बहु थौ, तो कूवा में क्यों नहीं न्हाख्यौ।
चोर छोड़ाई म्हारा मनुष मराया, तस्कर जींवतौ राख्यौ। स्वा० ॥ १९ ॥
सेठ लातरियौ शहर छोड़ीनैं, बीजै गाम वस्यौ जाई।
इण भव फिट २ हुवौ अधिकौ, परभव दुर्गति पाई। स्वा० ॥ २० ॥
जे जन गुण करता था तेहिज, अवगुण करत अथागो।
संसार नौं उपगार इसौ छै, मोख तणौ नहीं मागो। स्वा० ॥ २१ ॥
मोख तणौ उपगार है मोटौ, सुर शिव पद संचरियै।
जिण अगन्या तिण माहैं जांणी, उलट धरी आदरियै। स्वा० ॥ २२ ॥
भिक्खु स्वाम भली पर भाख्यौ, दया ऊपर दृष्टन्तो।
उत्पत्तिया बुद्धि अधिक अनोपम, हलुकरमी हरषंतो। स्वा० ॥ २३ ॥
इक बीसमी ढाल में आख्यौ, अघ हेतु उपगारो।
प्रत्यष ही फल सेठज पाया, आगलि बहु अधिकारो। स्वा० ॥ २४ ॥

दुहा

शिव संसार तणा सही, कह्या दोय उपगार।
भिक्खु तिण ऊपर भला, दृष्टन्त दिया उदार ॥ १ ॥
उरपुर खाधौ एक नैं, उजाड़ में अवधार।
किण झाड़ौ देई करी, ताजौ कियौ तिवार ॥ २ ॥
पिता कहै मुझ सुत दियौ, भाई बहिन भाषंत।
तैं म्हांनैं भाई दियौ, त्री कहै दीधौ कंत ॥ ३ ॥
चूड़ौ चूंदड़ी अमर रही, ते थारौ उपगार।
इम कहै मंत्रणहार नैं, स्वजन सगा परिवार ॥ ४ ॥

ए उपगार संसार नौं, तिण मैं नहीं तंतसार।
कर्म्म बंध कारण कह्यौ, नहीं धर्म्म पुण्य लिगार ॥ ५ ॥
उरपुर खावौ एक नैं, साधां नैं कहै सोय।
यन्त्र मन्त्र बूंटी जड़ी, औषध आपौ मोय ॥ ६ ॥
संत कहै कल्पै नहीं, बलि बोल्यौ ते बांन।
करामात ह्वी तौ कहौ, कैं लियो भेष तुफांन ॥ ७ ॥
करामात मुनि कहै इसी, दुखी कदे नहीं थाय।
ते कहै मुझ ते पिण कहौ, अणशण मुनि उचराय ॥ ८ ॥
मरणा सूंस दिया घणा, शिवगांमी सुर थाय।
मोख तणौ उपगार ए, स्वाम दियौ ओलखाय ॥ ९ ॥

ढाल : २२

[डाभ मुंजादिक नीं डोरी—ए देशी]

दूजौ दृष्टान्त भिक्खु दीधौ, सांभलज्यो प्रसिद्धौ।
लोक मोक्ष नैं मग नहीं मेले, तेतौ कठे ही न थावै भेल ॥ १ ॥
साहुकार रै स्त्रियां दोय, एक श्राविका शुद्ध अवलोय।
बैराग अत्यंत बखांण, किया रोवण रा पचखांण ॥ २ ॥
दूजी धर्म्म मैं समझै नाहीं, चित्त काम भोग री चाहि।
केतलाइक काल विचार, परदेश माहैं भरतार ॥ ३ ॥
काल कर गयौ ते किण वार, बात सांभली छै बेहुं नार।
तिणरै रोवण रा छै त्याग, ते तौ रोवै नहीं धर राग ॥ ४ ॥
समताधार बैठी सोय, कियौ नेम न भांगै कोय।
शुभ अशुभ कर्म्म स्वभावैं, प्रत्यष ओलख लियौ प्रभावै ॥ ५ ॥
दुःख पाप प्रभावै देखै, बलि कर्म्म बांधू किण लेखै।
उदै बांध्या जिसाईज आय, इम चित्त नैं दियौ समझाय ॥ ६ ॥
बीजी रोवै करंत विलाप, कहै कवण उदय हुवा पाप।
छाती माथौ कूटै तन झाड़ै, अति रोवती बांगां पाड़े ॥ ७ ॥
हाहाकार हुवौ तिण बेलां, लोक हुवा सैकड़ा भेला।
रोवै तिणनैं अधिक सरावै, पतिव्रता ये दुःख पावै ॥ ८ ॥
बले बोलै घणा लोग लुगाई, धन्य धन्य ये नार सुहाई।
इणरै प्रीतम स्यूं अति प्यार, तिणस्यूं रोवै छै बांगां पाड़ ॥ ९ ॥
नहीं रोवै तिणनैं जन निन्दै, आ तौ पापणी थी अपछंदे।
आ तौ मुंवीज बांछती कंत, आंख मैं आंसू नहीं आवंत ॥ १० ॥

संसारी रै मन इम भावै, मोह कर्म्म बसै मुरझावै।
साधु कहौ किणनैं सरावै, परमारथ बिरला पावै ॥ ११ ॥
मोख नैं लोक रौ मग न्यारौ, बुद्धिवंत हिया में विचारौ।
दियौ स्वाम भिक्खु दृष्टांत, प्रत्यक्ष देखाया दोनूंइ पंथ ॥ १२ ॥
इम ही संसार नौं उपगारो, मोक्ष रा मारग सूं न्यारौ।
बारुं मोख तणौं उपगार, संसार नौं छेदणहार ॥ १३ ॥
ऐसा भिक्खु उजागर भारी, न्याय मेलविया तंतसारी।
कही ढाल बावीसमी सार, भिक्खु रा गुणा रौ नहीं पार ॥ १४ ॥

दुहा

श्रद्धा ऊपर स्वामीजी, दिया घणा दृष्टांत।
कहि २ नैं कितरौ कहूं, न्याय मिलाया तंत ॥ १ ॥
बलि आचार रै उपरै, न्याय मिलाया सार।
ग्रन्थ बधतौ जाणनैं, न कियौ बहु विस्तार ॥ २ ॥
इन्द्रीवादी ऊपरै, कालवादी पर सोय।
दृष्टांत पूज दिया घणा, म्हैं वहु न कह्या जोय ॥ ३ ॥
प्रस्ताविक प्रगट पणैं, हेतु हद हितकार।
आख्या भिक्खु ओपता, उत्पत्तिया अधिकार ॥ ४ ॥
कथा नंदी सूत्रे कही, चार बुद्धि पहिछांण।
तिण कारण दृष्टांत सुण, चमकौ मति सुजांण ॥ ५ ॥
केसी स्वामी पिण कह्या, सखरा हेतु सार।
इमहिज भिक्खु जाणज्यो, पंचम काल मझार ॥ ६ ॥
मूरख जन दृष्टांत सुण, उलटा बांधै कर्म्म।
खबर नहीं जिन धर्म्म री, भूला अज्ञानी भ्रम ॥ ७ ॥
हलुकर्मी दृष्टांत सुण, पामैं अधिकौ प्रेम।
भारीकर्म्मा सांभली, बोलै भावै नेम ॥ ८ ॥
विचरत विचरत आविया, शहर कैलवै स्वाम।
ठाकुर मौहकम सिंहजी, वांदण आया तांम ॥ ९ ॥

ढाल : २३

(आगै जातां अटवी—ए देशी)

सहु परषदा सुणतां, सिरदार सुहायौ रे।
मौहकम सिंहजी, बोलै इम बायो रे ॥
भिक्खु ऋष भणी ॥ १ ॥

गांम गांम री विनत्यां, अति आपनैं आवै रे।
जन बहु देश नां, सहु आपनैं चहावै रे। भि० ॥ २ ॥
नर नारी आपनैं, देखी हुवै राजी रे।
कर जोड़ी करै, जन कीरत जाझी रे। भि० ॥ ३ ॥
पुण्यवंता प्रत्यक्ष, नर नारी निरखै रे।
सूरत देखनैं, हिवड़ै अति हर्षै रे। भि० ॥ ४ ॥
घणा लोक लुगायां नैं, आप बल्लभ लागौ रे।
ते कारण किसौ, यांरै हर्ष अथागौ रे। भि० ॥ ५ ॥
इसौ गुण कांई आपमैं, ते मुझ नैं बतावौ रे।
सखरपणैं सही, दिल मैं दरसावौ रे। भि० ॥ ६ ॥
भिक्खु इम भाखै, एक सेठ प्रदेशै रे।
वर्ष बहु वीतिया, त्रिय छै निज देशै रे। भि० ॥ ७ ॥
ते नार पतिव्रता, शीले गह गहती रे।
निज प्रीतम थकी प्रेमे अति रहती रे, भिखु ऋष भणैं। भि० ८ ॥
घणा महीना हुवा, कागद नवी आयौ रे।
त्रिय चिन्ता करै, मन प्रीतम माह्यो रे। भि० ॥ ९ ॥
ते सेठ प्रदेश थी, कासीद पठायो रे।
खरची दे करी, तिण पुर ते आयौ रे। भि० ॥१० ॥
सेठ तणी हवेली, आय ऊभौ तायो रे।
किणहिक पूछियौ, किण पुर थी आयौ रे। भि० ॥ ११ ॥
लियौ नांम ते पुर नौं, नारी सुण हरषी रे।
आवी बारणैं, नैंणां तसुं निरखी रे। भि० ॥ १२ ॥
कासीद नैं देखी, हिवड़ै हरषांणी रे।
सुखसाता सुणी, रुं रुं विकसांणी रे। भि० ॥ १३ ॥
उन्हां पांणी सूं, उण रा पग धोवै रे।
आनन्द जल भर्या, नेत्रां सूं जोवै रे। भि० १४ ॥
वर भोजन करनैं, कन्हैं बेस जीमावै रे।
पूछै वलि वलि, समाचार सुहावै रे। भि० ॥ १५ ॥
साहजी डिलां मैं, किसाईक छै जांणी रे।
सुख साता अछै, पूछै हरषांणी रे। भि० ॥ १६ ॥
साहजी कठै पौढ़ै, किण जागा वैसै रे।
बात सारी कहौ, सुणनैं अति उलसै रे। भि० ॥ १७ ॥

कोई कारण नहीं छै, साहजी रै तन मैं रे।
उत्तर सांभली, त्रिय हर्षे मन मैं रे। भि० ॥ १८ ॥
साहजी कह्यौ मुझनें, समाचार कह्या छै रे।
इहां आसी कदे, वर्ष बहोत थया छै रे। भि०॥ १६ ॥
दिन रात्रि हूं तौ, दिल अति चिन्ता करती रे।
कागद नां दियौ, मन मैं दुख धरती रे। भि० ॥ २० ॥
कासीद कहै सुणौ, साहजी रा जावो रे।
एम कह्यो सही, अबां छां सतावो रे। भि० ॥ २१ ॥
पिण कोइक कारण सूं, अल्प दिन री जेजो रे।
मुझनें मेलियौ, सुण वाध्यौ हेजो रे। भि० ॥ २२ ॥
समाचार आपनैं, साहजी कहिवाया रे।
म्हे ताकीद स्यूं, आया कै आया रे। भि० ॥ २३ ॥
पैदास घणी छै, सुख सूं तुम रहिज्यो रे।
किण ही बात री, मन फिकर म कीजो रे। भि०॥ २४ ॥
समाचार ज्यूं ज्यूं कहै, त्यूं त्यूं मन हरषै रे।
राजी हुवै घणी, कासीद नैं निरखै रे। भि० ॥ २५ ॥
कासीद नैं देखी, हर्षै अति नारी रे।
ते कहै पिउ तणी, बतका अति प्यारी रे। भि० ॥ २६ ॥
एहवौ विरतन्त देखी, कहै अजांण एमो रे।
इण दलिद्री थकी, पतिव्रता नौं पेमो रे। भि० ॥ २७ ॥
सुण बोल्यौ सैंणो, नहीं इण स्यूं प्यारो रे।
पिउ समाचार थी, हरषी है नारो रे। भि० ॥ २८ ॥
और भ्रम मति राखौ, आ महा गुणवन्ती रे।
सत्यवंती सती, शुद्ध माग चलंती रे। भि० ॥ २६ ॥
समाचार प्रयोगे, पतिव्रता हरषाणी रे।
और भ्रम नहीं, तिमहिज म्हे जांणी रे। भि० ॥३०॥
भगवांन रा गुण म्हे, विध रीत बतावां रे।
शिव संसार नौं, मारग ओलखावां रे। भि० ॥ ३१ ॥
झीणी झीणी म्हे, सूत्र रहिस बतावां रे।
लोभ रहित पणैं, भिन्न २ दरसावां रे। भि० ॥ ३२ ॥
दुःख नरक निगोद ना, दूरा टल जावै रे।
ते बातां कहां, तिण कारण चाहवै रे। भि० ॥ ३३ ॥

घणा लोग लुगाई, इण कारण राजी रे।
गांमो गाम थी, विनतियां ताजी रे। भि० ॥ ३४ ॥
कवडी नहीं मांगां, शिव पंथ बतावां रे।
नर नार्‍यां भणी, इण कारण सुहावां रे। भि० ॥ ३५ ॥
कासीद निर्गुण थौ, पिण पिउ समाचारो रे।
तिण मुख स्यूं कह्या, तिण स्यूं हरषी नारो रे। भि०॥३६॥
म्हे महाव्रत धारी, जिण वैण सुणावां रे।
बहु प्रकार थी, नर नार्‍यां नैं सुहांवां रे। भि० ॥३७॥
नरपति सुरपति पिण, राण्यां इन्द्राणी रे।
ते मुनिवर भणी, निरखै हरषांणी रे। भि० ॥ ३८ ॥
मुनि नौ अभरोसौ, कोई नहीं राखै रे।
अण समभूं तिकौ, मन आवै ज्यूं भाखै रे। भि० ॥ ३९ ॥
ठाकुर मौहकमसिंह, सुणनैं हरषांणौं रे।
सत्य वचन आपरा, स्वामी वैण सुहांणो रे। भि० ॥ ४० ॥
ऐसा भिक्खु स्वामी, बुद्धि अधिक उदारी रे।
उत्तर अति भला, सुणतां सुखकारी रे। भि० ॥ ४१ ॥
भिक्खु ना जवाब स्यूं, अनुरागी हर्षै रे।
भिक्खु गुण भला, गुणग्राही परखै रे। भि० ॥ ४२ ॥
द्वेषी अगुणी जन, सुण मुंह मचकोड़ै रे।
ते अवगुण थकी, आतम नैं जोड़ै रे। भि० ॥ ४३ ॥
तंत ढाल तेबीसमी, सुणतां सुखदाई रे।
स्वाम भिक्खु तणी, बतका मन भाई रे। भि० ॥ ४४ ॥

दुहा

किण ही भिक्खु नैं कह्यौ, लागूं तुझ बहु लोय।
अवगुण काढ़ै थांहरा, स्वाम कहै तब सोय ॥ १ ॥
अवगुण काढ़ै मांहरा, छौंनीं काढ़ता सोय।
म्हौंरे अवगुण काढ़णा, माहैं न राखणा कोय ॥ २ ॥
कांयक तप संयम करी, अवगुण काढ़ां आप।
कांयक जन अवगुण करै, सम रहि काढ़ां पाप ॥ ३ ॥
संवली बैवी स्वामजी, इम बहु बात अनेक।
देसूरी जांतां मिल्यौ, द्वेषी महाजन एक ॥ ४ ॥

तिण पूछयौ सूं नांम तुझ, भीक्खण नाम कहीज।
तिण कह्यौ तेरापंथी नें, स्वाम कहै तेहीज ॥ ५ ॥
तब कहै तुझ मुख देखियां, जावै नरक मझार।
पूज कहै तुझ मुख देखियां, किहां जावै कहौ धार ॥ ६ ॥
मुझ मुख देख्या शिव स्वर्ग, तब बोल्या महाराय।
म्हे तौ इसड़ी नां कहां, मुख थी नरक शिव पाय ॥ ७ ॥
पिण मुख देख्यौ थांहरौ, म्हारै तौ शिव स्वर्ग।
म्हारौ मुख देख्यौ तुम्हें, तुम कहिणी तुझ नर्क ॥ ८ ॥
सुणनें कष्ट हुवौ घणौ, ऐसी बुद्धि अधिकाय।
वलि उत्पत्तिया बुद्धि करी, निर्मल मेल्या न्याय ॥ ९ ॥

ढाल : २४

[कहै छै रुपश्री नार सुराज्यो—ए देशी]

स्वाम भिक्खु सुखदाय, मणिधारी महा मुनिराय हो।
भिक्खु बुद्धि भारी।
अति मति श्रुति पर्यव अथाय, जसुं गुण पूरा कह्या न जाय हो॥
भिक्खु बुद्धि भारी।
बुद्धि अति अधिक अपारी, ऐ तौ स्वाम सदा सुखकारी हो। भि० ॥ १ ॥
धर देव गुरु नें धर्म्म, पद तीन दिखाया पर्म्म हो। भि०।
शुद्ध सरध्यां समकित सार, धुर शिव पावड़ियौ धार हो। भि० ॥ २ ॥
दियौ गुरु ऊपर दृष्टन्त, तकड़ी रौ डांड़ी रौ तंत हो। भि०।
तीन बेच डांड़ी रै समीच, बिहु पासै नैं इक बीच हो। भि० ॥ ३ ॥
बिचले ह्वै फरकज बांण, कहियै तसु अन्तर कांण हो। भि०।
तसु बिचलौ बेच हुवै तंत, कोई अन्तर कांणी न कहंत हो। भि० ॥ ४ ॥
ज्यूं देव गुरु धर्म्म जांणी, पद गुरु नौं बीच पिछांणी हो। भि०।
गुरु होवै शुद्ध गुणवंत, तौ देव धर्म्म कहै तंत हो। भि० ॥ ५ ॥
होवै गुरु हीन अचारी, बलि श्रद्धा भ्रष्ट विचारी हो। भि०।
पाडै देव मांहै पिण फेर, धर्म्म मैं पिण कर दै अंधेर हो। भि० ॥ ६ ॥
गुरु मिले ब्राह्मण तत् खेव, तौ देव कहै महादेव हो। भि०।
अनै धर्म्म बतावै एह, जन विप्र जमावै जेह हो। भि० ॥ ७ ॥
भोपा गुरु मिलै भरमाजा, देव कहै देव धर्म्मराजा हो। भि०।
सुरह गायनौं वाहरूसावौ, धर्म्म पातील्यौ भोपा जिमावौ हो। भि० ॥ ८ ॥
गुरु मिलै कांबरिया कहे जी, देव बताय देवै रामदेजी हो। भि०।
धर्म्म कहै कांवर जिमावौ, वले जमारी रात्रि जगावौ हो। भि० ॥ ९ ॥

अरु गुरु मिल जावै मुल्ला, तौ देव बताय दै अल्ला हो। भि०।
धर्म्म जबै करण जलपंता, एर चरंति आदि कहंता हो। भि० ॥ १० ॥

दुहा

एर चरति मैरू चरति, खेर चरति बहुतेरा।
हुक्म आया अल्ला साहिब रा, गला काटूंगा तेरा ॥ ११ ॥
ए साखी पढ़ पापिया, कती करै पर जीव।
ते पाप उदय आयां छतां, पामै दुःख अतीव ॥ १२ ॥

ढाल तेहिज

जो गुरु मिलै हिंसा धर्म्मी, कहै निगुणा देव कुकरमी हो। भि०।
धर्म्म फूल पांणी मैं थापै, सूत्रां रा वचन उत्थापै हो। भि० ॥ १३ ॥
गुरु मिलै असल निर्ग्रन्थ, देव बताय देवै अरिहंत हो। भि०।
धर्म्म जिन आज्ञा मैं बतावै, इहां अन्तर कांण न आवै हो। भि० ॥ १४ ॥

दुहा

गजी मंमूंदि वासती, तीनूं एकण गोत।
जिणनैं जैसा गुरु मिल्या, तिसा काढ़िया पोत ॥ १५ ॥

ढाल तेहिज

इण दृष्टन्त गुरु हुवै जैसा, तिकै देव बतावै तैसा हो। भि०।
बलि धर्म्म इसौज बतावै, नर समझू न्याय मिलावै हो ॥ १६ ॥
उत्तम पुरुष आचारी, गुरु सप्त बीस गुण धारी हो। भि०।
निर्मल धर्म्म देव निर्दोष, मन सूं सरध्यां लहै मोख हो ॥ १७ ॥
वर लेखा भिक्खु बताया, दिलमैं भिन्न २ दरशाया हो। भि०।
ए कही चोबीसमीं ढाल, भिक्खु यश अधिक रसाल हो ॥ १८ ॥

दुहा

अजांण कैयक इम कहै, म्हारै करणी सूं नहीं काम।
म्हेतौ ओघौ मुंहपत्ति, वांदां छां सिर नांम ॥ १ ॥
भिक्खु कहै ओघा भगी, वंदणा कियां तिरंत।
तौ ओघौ हुवै ऊंनरौ, ऊन गाडर उपजंत ॥ २ ॥
पग गाडर ना पकरना, जो तिरै ओघा थी तास।
धिन है माता तूं सही, सो ओघा करै पैदास ॥ ३ ॥

मुंहपति हुवै कपास नीं, कपास बणि नीं होय।
जो तिरै मुंहपति वांदियां, तो बणि नैं वंदनी जोय॥ ४ ॥
धिन है बणि सो ताहरी, हुवै मुंहपति एह।
भेष भणी इम वांदियां, भव दधि केम तिरेह॥ ५ ॥
गुण लारै पूजा कही, तौ निगुण पूजंता जाय।
चौड़ै भूला मानवी, किम आणीजै ठाय॥ ६ ॥
जिन मारग में देखल्यौ, गुण लारै पूजाह।
निगुणा नैं पूजै तिके, ते मारग दूजाह॥ ७ ॥
गुण गोली सीरै भरी, पुरस्यां पांत बणाय।
गुण बिन ठाली ठीकरौ, देख्यां भूख न जाय॥ ८ ॥
एक व्रत भागै इसौं, दीपण थापै जांण।
इम इक व्रत भागां छतां, पांचूं जाय पिछांण॥ ९ ॥

ढाल : २५

[कामण गारौ छै कुरा—ए देशी]

किणहिक स्वाम भणी कह्यौ रे, किम ए वात मिलाय।
एक महाव्रत भांगां छतां रे, पंच वरत किम जाय।
सुणज्यो दृष्टंत भिक्खु तणा रे॥ १ ॥
स्वाम कहै तुमे सांभलौ रे, पाप उदै थी पिछांण।
इण भव मैं पिण दुःख उपजै रे, सुण एक हेतु सयाण।
तंत दृष्टन्त भिक्खु तणा रे॥ २ ॥
एक भिखारी भीख मांगतौ रे, फिरतां फिरतां पुर मांहि।
पंच रोटी रौ आटौ पांमियौ रे, अन्तर भूख अथाय। तं० ॥ ३ ॥
रोटी करण लागौ तदा रे, भिख्याचर भागहीण।
एक रोटी नैं उतारनैं रे, चुला लारै मेली दीन। तं० ॥ ४ ॥
एक रोटी तवै सक रही रे, एक पीरै सकै आंम।
एक रोटी रौ लोयो हाथ मैं रे, लोयौ एक कठौत्ती मैं तांम। तं० ॥ ५ ॥
स्वांन एक आयौ तिण समैं रे, पाप तणैं प्रमाण।
लोयौ कठौती रौ ले गयौ रे, जद ते स्वान लारै न्हाठौ जांण। तं० ॥ ६ ॥
स्वान लारै भिख्याचर न्हासतां रे, आतुर पडियौ अचांण।
हाथ माहैं जे लोयौ हुंतौ रे, ते धूल मैं बिखरियौ पिछांण। तं० ॥ ७ ॥
ततखिण पाछौ आवी तदा रे, देखण लागौ तिवार।
चूला लारै रोटी पड़ी हुंती रे, ले गई तास मंजार। तं० ॥ ८ ॥

तवा तणो तवै बल गई रे, खीरां री खीरै हुय गई छार।
पांचूं बिललाई इण रीत सूं रे, पाप तणा फल धार। तं० ॥ ९ ॥
इमहिज एक भागां थकां रे, पांच जावै परवार।
दोपण थोपै जे जांणनैं रे, भव भव होवै खुवार। तं० ॥ १० ॥
दोष सेव्यां डंड संपजै रे, डंड जितौई भागंत।
नवी दिख्या आवै जेह थी रे, ते दोष सेव्यां सर्व जावंत। तं० ॥ ११ ॥
भिक्खु स्वाम भली परै रे, दीधौ वारु दृष्टन्त।
हलुकर्म्मी सुण हरषियै रे, भारी कर्म्मा भिड़कंत। तं० ॥ १२ ॥
पचीसमी ढाल परवरी रे, भिक्खु बुद्धि भरपूर।
नित्य प्रति हूं वन्दना करूं रे, पौह ऊगंतै सूर। तं० ॥ १३ ॥

दुहा

आधाकर्म्मी जायगां, थानक तिणरौ नांम।
एहवा थांनक भोगवै, बले कहे निरदोषण तांम ॥ १ ॥
बलि कहै म्हे मुख सूं कद कह्यौ, जद बोल्या भिक्खु स्वाम।
जाय जमाई सासेरे, ते पिण न कहै तांम ॥ २ ॥
मुझ निमतै सीरौ करौ, इम तौ न कहै तेह।
पिण कीधौ ते भोगवै, जद दूजी बार करेह ॥ ३ ॥
जो सीरा नां सूंस करै, तौ न करै दूजी वार।
त्याग नहीं तिण सूं करै, भोजन विविध प्रकार ॥ ४ ॥
ज्यूं भेषधारी रहे थांनक मझै, बले कहै मुख सूं तांम।
थांनक मुझ निमतै करौ, इम म्हे कद कह्यौ आंम ॥ ५ ॥
त्यां निमतै कियौ भोगवै, फिर करै दूजी बार।
त्याग करै थानक तणां, तौ आरम्भ टलै अपार ॥ ६ ॥
वले डावरौ कद कहै, करौ सगाई मोय।
पिण सगपण कीधां पछै, कुण परणीजै सोय ॥ ७ ॥
बलि बहू वाजै केहनीं, घर किणरौ मंडाय।
डावड़ा तणौज जांणज्यो, थानक एम गिणाय ॥ ८ ॥
थानक बाजै तेहनौं, मांहें पिण रहै तेह।
न कह्यौ थानक नौं तिणां, पिण सहु कांम करेह ॥ ९ ॥

ढाल : २६

[कपि रे प्रिया संदेशौ कहेय०—ए देशी]

गच्छवास्यां रै उपसारै रे, मथेण तणैं पोशाल।
फकीर रै तकियौ कहै रे, नांम मैं फरे निहाल रे।
जीव स्वाम बुद्धि विशाल॥ १ ॥
स्वाम बुद्धि अति शोभती रे, निर्मल न्याय निहाल रे। जी० ॥ २ ॥
कान फाडां रै आसण कहै रे, भक्तां रै अस्तल भाल।
भक्त फुटकर तेहनैं रे, मंढी नांम निहाल॥ ३ ॥
सन्यासां रै मठ कहै रे, रामसनेह्यां रै गेह।
राम दुवारौ केईक कहै रे, राम मोहलौ कहै केह॥ ४ ॥
घर राध णी रै घर कहै रे, सेठ रै हवेली सुहाय।
कहै गांम धणी रै कोटरी रे, किहांएक रावलौ कहाय॥ ५ ॥
राजा रै महिल कहै सही रे, कांयक ठौर दरबार।
साधां रै थांनक बाजतौ रे, नांम मैं फेर विचार॥ ६ ॥
सगलाई घर रा घर अछै रे, कठैएक बुहा कौदाल।
किहांयक कसो बुही सही रे, आधाकर्म्मी असराल॥ ७ ॥
आरम्भ तौ षटकाय नौं रे, हुवौ ज्यूं रौ ज्यूं जांण।
अरिहंत नीं नहिं आगन्यां रे, छःकाय नौं घमसांण॥ ८ ॥
घर छोड़्या मुख सूं कहै रे, गांम २ रह्या घर मांड।
तिण घर री नांम थानक दियौ रे, रह्या भेष नैं भांड॥ ९ ॥
आधाकर्मी थानक भोगव्यां रे, महा सावज किरिया संभाल।
दूजै आचारङ्ग देखल्यौ रे, कह्यौ दूजै अध्ययने दयाल॥ १० ॥
आधाकर्म्मी आदर्यां रे, चौमासी डंड पिछाण।
निशीथ दश मैं निहालज्यो रे, वीर तणी एह वाण॥ ११ ॥
आधाकर्म्मी भोगव्यां रे, रुलै अनन्तौ काल।
पहलै शतक भगवती मैं पेखल्यौ रे, नवमैं उदेशैं निहाल॥ १२ ॥
इत्यादिक बहु बारता रे, आखी आगम मांहि।
भिक्खु तास भली परैं रे, रुड़ी रीत दीधी ओलखाय॥ १३ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि अति घणी रे, अधिक उजागर आप।
निश दिन मनड़ौ मांहरौ रे, जप रह्यौ आपरौ जाप॥ १४ ॥
स्वप्नै सूरत स्वाम नीं रे, देखत ही सुख होय।
प्रत्यष नौं कहिवौ किसूं रे, शरण आपनौं मोय॥ १५ ॥

आदि जिणंद तणी परै रे, ओलखायौ श्रद्धा आचार।
जन्म जन्म किम विसरै रे, तुझ गुण अनघ अपार ॥ १६ ॥
बारु ढाल छवीसमी रे, भिक्खु गुण मुझ चित्त।
याद आयां हियौ हुलसै रे, परम आपसूं प्रीत ॥ १७ ॥

दुहा

भारीमाल शोभै भला, पूज भीखणजी पास।
बारूं कला बखाण की, घन जिम शब्द गुंजास ॥ १ ॥
नित्य वखाण दै निरमलौ, ऊपर भिक्खु आप।
दान दया दीपावता, सुणतां टलै संताप ॥ २ ॥
हलुकर्म्मी हरखै घणा, भारीकर्म्मी भिड़कन्त।
अल गाही अवगुण करै, विकल वचन विलपन्त ॥ ३ ॥
किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, वर तुम करौ बखाण।
निन्दक ऐ निन्द्या करै, अलगा बैठ अजांण ॥ ४ ॥
भिक्खु उत्तर दै भलौ, स्वान तणुंज स्वभाव।
झालर रौ झिणकार सुण, रोवण करौ राव ॥ ५ ॥
नीच इती जांणैं नहीं, ए झालर अधिकार।
व्याव तणी बाजै आछै, कै मुवां नी धार ॥ ६ ॥
ज्यूं ऐ पिण जांणैं नहीं, बाचै ज्ञान बखांण।
राजी ह्वैणौ ज्यांही रह्यौ, अवगुण करै अजांण ॥ ७ ॥
उलटी निन्द्या ऐ करै, निन्द्या तणौंज न्हाल।
स्वभाव यांरौ छै सही, झूठी करै झखाल ॥ ८ ॥
ऐसी बुद्धि उत्पात री, निर्मल अपूर्व न्याय।
मेलै मुनि महिम्म निला, स्वाम घणा सुखदाय ॥ ९ ॥

ढाल : २७

[हो म्हारा राजा रा—ए देशी]

स्वाम भिक्खु गुरु महा सुखदाई, भारीमाल शिष्य अति भारी।
अमृत वांण सुधा सी अनोपम, हद देश ना महा हितकारी।
हो म्हांरा शासण रा शिणगार स्वामी जी, भिक्खु भारीमाल ऋष भारी ॥ १ ॥
हद वांण सुणी हलुकर्म्मी हरखैं, द्वेषी बोल्या धर्म्म द्वेष धारी।
सवादौढ पौहर रात्रि आइ सौ, यांनैं कल्पै नहीं इणवारी ॥ २ ॥

भिक्खु कहै दुःख नीं रात्रि भूंडी, झट सुख निसा सोहरी जावै ।
समी सांज माहै मनुष्य मूंआं सूं, लोकां में रात्रि मोटी लखावै ॥ ३ ॥
संत वखाण देवै ते न सुहावै, ज्यांनैं रात्रि घणीज जणावै ।
दंभ मिथ्यां नीं अधिक न दीसै, आनी पीहर रे आसरै आवै ॥ ४ ॥
दोहा सहित दिया दृष्टन्त दोनूं, पैंतालीसै सहर पीपार ।
तंत चौमास में सोजत तेपनैं, उठैं हुवौ घणौ उपगार ॥ ५ ॥
किणहिक स्वाम भिक्खु नैं कह्यौ, इम उपगार तौ आछौ कीधौ ।
जीव घणां नैं समझाया, जुगति सूं लाभ धर्म्म रौ लीधौ ॥ ६ ॥
वलता भिक्खु कहै खेती तौ वाही, पिण गांमरै गोरवें पेखौ ।
सो खर नहीं आय पड्या है तौ टिकसी, वाकी कठिन है अधिक विशेषो ॥ ७ ॥
गधा समांन पाखण्डी गिणियै, जिहां जोरौ विशेष जिणांरौ ।
खेती समान धर्म्म खय कर दै, तिणसूं संग न करणौ तिणांरौ ॥ ८ ॥
किणही कह्यौ देवौ दृष्टन्त करला, स्वामीनाथ बोल्या सुण वायो ।
करड़ौ रोग ऊठ्यौ गंभीर केरौ, मृदु फुगाल्यां केम मिटायौ ॥ ९ ॥
हलवांणी रा डांम लागां हुवै हल्कौ, गंभीर रौ रोग गिणायो ।
करड़ौ मिथ्यात रोग मिटावण काजै, करडा दृष्टन्त कहायो ॥ १० ॥
किणही स्वामीजी नैं पूछा कीधी, कच्ची बुद्धिवालौ समझै न कांई ।
मुनि भिक्खु कहै दाल मूंग मोंठां री, फिर दाल चणां री पिण थाई ॥ ११ ॥
पिण गोहां री दाल हुवै नहीं, अन्धज ज्यूं भागी करना न समझै जांणी ।
हलुकर्म्मी बुद्धिवान हुवै ते, पक्ष छांडै जिण धर्म्म पिछांणी ॥ १२ ॥
शुद्ध जात्र दूजौ देवै तिणमें न समझै, आपरी भाषा रौ ही अजांण ।
दृष्टन्त स्वाम ते ऊपर दीधौ, समझावण काज सयांण ॥ १३ ॥
एक बाई बोली म्हारौ भर्तार एहवौ, आखर लिखै ते अधिक अजोग ।
बीजा सूं आखर बचै नहीं बिरुआ, मोनैं ठोठरौ मिल्यौ संयोग ॥ १४ ॥
इतरै दूजी कहै मुझ पिउ इसड़ौ, पोंता रा लिख्या अखर पिछांणौ ।
जे पिण पोता सूं वंच्या नहीं जावै, अति ही मूर्ख एहवौ अजांणौ ॥ १५ ॥
ज्यूं आपरी भाषा नैं आप न जांणैं, केवली भाख्यौ धर्म्म किम आवै ।
सरधा तौ परम दुर्लभ कही सूत्रे, परवींण हलुकर्म्मी पावै ॥ १६ ॥
पाखंड्यां रौ मत गायां री पगडांड़ी, दूर थोड़ी तौ मारग दीसै ।
आगै उजाड़ मोटी अटवी मैं, दुष्ट कांटा विषम दुधरीसै ॥ १७ ॥
ज्यूं दान शीलादिक अल्प दिखाई, पाखण्डी पछै हिंसा पमावै ।
आगे चलै नहीं ये उन्मारग, जाव माहैं घणा अटक जावै ॥ १८ ॥

पातशाही रास्ता जिम पंथ प्रभु नौं, नहीं अटकै कठेई ते न्यायो।
दृष्टन्त पाग तणौ स्वाम दीधौ, पार थेट तांई पौंहचायो ॥ १६ ॥
पाग चोरी ल्यायां पूछ्यां न पूगै, मुदो थेठ तांई न मिलाई।
साचौ कहै मोल लियौ उण सेती, रुड़ी अमकडियां पास रंगाई ॥ २० ॥
इम साची सरधा न्याय किहांई न अटकै, झूठी सरधा अटकै झोला खावै।
दृष्टन्त स्वाम भिक्खु एहवा दीधा, दान दया आज्ञा दरशावै ॥ २१ ॥
एहवा भिक्खु स्वाम आप उजागर, ज्यांरा गुण पूरा कह्या न जावै।
हद न्याय सुणी हरषै हलुकर्म्मी, भारी कर्म्मा सांभल भिड़कावै ॥ २२ ॥
सखर ढाल कही सप्तबीसमीं, दृष्टन्त भिक्खु रा दिखाया।
मति श्रुत सूं वर न्याय मिलाई, स्वामी जीव घणा समझाया ॥ २३ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, सूंस करावौ सोय।
ते लेई भांगै तिकौ, पाप आपनैं होय ॥ १ ॥
स्वामी भाखै सांभलौ, कोयक साहुकार।
वस्त्र किणनैं वेंचियौ, सौ रुपयां रौ सार ॥ २ ॥
नफौ मोकलौ नींपनौ, बेंच्यौ तास विचार।
बलि वस्त्र लेवाल रा, सांभलजो समाचार ॥ ३ ॥
कपड़ौ लीधौ तिण किया, एक एक रा दोय।
तौ पिण नफौ उण तणौ, बेंच्यौ तास न होय ॥ ४ ॥
कपड़ौ जो लेई करी, जाले अग्नि मझार।
तोटौ पिण उणरै तिकौ, बेंच्यौ तसुं म विचार ॥ ५ ॥
समझाई म्हे सूंस द्यां, तिणरौ नफौ अमांम।
हमनैं तौ ते हो गयौ, तोटा मै नहीं तांम ॥ ६ ॥
सूंस पालसी अति सखर, थिर फल तेहनें थाप।
भांग्यां दोषण उण भणी, पिण म्हानैं नहीं पाप ॥ ७ ॥
बलि दूजो दृष्टन्त वर, दमि नैं किण घृत दीध।
मुनि नैं वहराई जिय मूंआं, पापज तास प्रसिध ॥ ८ ॥
अथवा मुनि अन्य साध नैं, घृत दे बन्धे जिन गोत।
तौ पिण फल ते मुनि तणैं, हिव गृही नैं नहिं होत ॥ ९ ॥

ढाल : २८

[आज हुकर में बाई०—रा देशी]

वैरागी री वाणी सुण्यां वैराग वाधै, दियौ स्वाम भिक्खु दृष्टान्तो रे लो।
कसुंबौ आप गल्यां गालै कपडौ, आवै रंग अत्यन्तो रे लो।
स्वाम भिक्खु तणा दृष्टन्त सुणजो ॥ १ ॥
गांठ कसुंबा री गाढ़ी बांधै, पोतै गलियां पिण रंग न पमावै रे लो।
ज्यूं वैराग हींण तणी वाणी सूं, अति वैराग किण विध आवै रे लो ॥ २ ॥
भेषधारी कहै म्हे जीव बचावां, भीखणजी नांहि बचावै रे लो।
भिक्खु कहै थांरा रह्या बचावणा, मारणाज छोड़ी मन ल्यायो रे लो॥ ३ ॥
थांनक मांहै रही किवाड़ जड़ी थे, जीव घणा मर जावैं रे लो।
किवाड़ जड़वारा सूंस कियां सूं, घणा जीवां री घात न थावै रे लो ॥ ४ ॥
चौकीदार हुंतो सो चौकी देंणी तौ छोड़ी, चोरी करवा लागौ छानैं छानैं रे लो।
कहै लोकां नैं चौकी द्यूं करूं जावता, मैंनत रा पैसा देवौ थे म्हांनै रे लो ॥ ५ ॥
चौकी रही थारी चोरचां छोड़ तूं, बोल्या लोक तिवारै रे लो।
दिन रा तौ घर हाट देखी जावै, पछै रात्रि समैं आय फाड़ै रे लो ॥ ६ ॥
पइसौ पइसौ तोनैं देसां परहौ, घर बैठा नैं गिणायो रे लो।
ज्यूं भेषधारी कहै म्हे जीव बचावां, मारणा छोड़ौ भिक्खु फुरमायो रे लो ॥ ७ ॥
किणही पूछचौ ऋषपाल मुनि कह्या, रिख्या करै किण री तो रे लो।
भिक्खु कहै ज्यूं छै तिमहिज राखणा, आघा पाछा न करणा अनीतो रे लो ॥ ८ ॥
पशु निलोती चरता नैं मुनि पेखै, किम ऋषपाल कहीजै रे लो।
त्रिविधे त्रिविधे हणवौ त्याग्यौ ते, रक्षक अभय सर्व नैं आपीजै रे लो ॥ ९॥
कोई कहै हिवड़ां पंचम काल छै, पूरो साधपणौ न पलायो रे लो।
तब पूज कहै चौथा आरा मैं तेलौ, कितरा दिना रौ कहायो रे लो ॥ १० ॥
तब ते बोल्यौ तीन दिन रौ तेलौ, चौथै आरै चित्त चाह्यो रे लो।
भिक्खु पूछचौ एक भूंग रौ भोगव्यां, तेलौ रहै कै भागै ताह्यो रे लो ॥ ११ ॥
तब ते बोल्यौ परहौ भागै तेलौ, इम चोथा आरा रौ तेलौ उलखायौ रे लो।
फेर स्वामी पूछै पंचम आरै, किता दिवस रौ तेलो कहायो रे लो ॥ १२ ॥
तब ते बोल्यौ तेलो तीन दिनां रौ, पंचम आरै पिछांणी रे लो।
भिक्खु कहै एक भूंग रौ खाधां, शुद्ध रहै कै भागै सो जांणी रे लो ॥ १३ ॥
तब ते बोल्यौ परहौ भागैं तेलौ, वलि पूज बोल्या बायो रे लो।
भूंग रा सूं ई तेलौ परहौ भागै, दोष थाप्यां संजम किम ठहरायो रे लो ॥१४॥

काल दुखम रै माथै कांय न्हांखौ, नेयेठै छहूं चरण ते नींकौ रे लो।
पंचम चौथा आरा में प्रत्यप, सहु रे त्याग है एक सरीखौ रे लो ॥ १५ ॥
दोष लागां रौ डंड दोनूं आरा में, डंड लीधां चारित्र दोनूं आरौ रे लो।
दोनूं आरां माहै दोष थाप्यां सूं, चारित दोनूं आरां में हुवै छारो रे लो ॥१६॥
भिक्खु स्वाम दृष्टन्त भली पर, बारु भिन्न भिन्न भेद बताया रे लो।
ज्यां पुरुषां जिण माग जमायौ, स्वामी चार तीर्थ सुखदाया रे लो ॥ १७ ॥
एहवा पुरषां रा औगुण बोलै, कृतघ्न कर्म्म रेख काली रे लो।
दुर्ल्लभ बोध अवर्णवाद सूं दाख्यौ, सूत्र ठाणांग लीजो संभाली रे लो ॥ १८ ॥
अष्टबीस मीं ढाल अनोपम, भिक्खु रा दृष्टन्त भाली रे लो।
उत्पत्तिया भेद मति रौ है आछौ, नन्दी में पाठ निहाली रे लो ॥ १९ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यो, संजम लेऊं सार।
मन उठै है मांहरौ, स्वाम कहै सुखकार ॥ १ ॥
घर में पुत्रादिक घणा, रुदन करै घर राग।
तुझ काचौ हियो तेहथी, अति ही कठिन अथाग ॥ २ ॥
न्याती रोता निरखनैं, मोह धरौ मन मांहि।
तूं पिण रुदन करै तदा, कांम कठिन कहिवाय ॥ ३ ॥
तिण कह्यौ स्वामी तहत वच, आंसू तौ आय जाय।
परियण रोता पेखनैं, म्हारै पिण मोह आय ॥ ४ ॥
स्वाम कहै कोइ सासरै, जाय जमाई जांण।
आंणौ ले आतां छतां, त्रिय तौ रोवै तांण ॥ ५ ॥
पिण उणरी देखा देख पिउ, जेह जमाई जोय।
रुदन करै मोह राग सूं, हांसी जग में होय ॥ ६ ॥
त्रिय रोवै पीयर तणौ, वियोग पड़ै विशेष।
वर रोवै किण वासतै, उपनय कहूं अशेष ॥ ७ ॥
ज्यूं संयम लेवै जरै, स्वार्थ रुदन स्वजन।
तत चारित लेवै तिकौ, मोह धरै किम मन ॥ ८ ॥
तिणसूं संयम कठिन तुझ, दियौ इसौ दृष्टान्त।
बलि हेतु आख्या विविध, स्वांम भला शोभंत ॥ ९ ॥

ढाल २६

[भरत नें भूप०—ए देशी]

जगत तौ मोह नें दया जांणैं छै, दया ओलखणी दोहरी।
प्रत्यप राग अठारै पाप मैं, साची श्रद्धा नहीं सोहरीनी।
भविक जन भिक्खु ना दृष्टन्त भारी ॥ १ ॥

पूज मोह ओलखायौ प्रत्यप, दियौ एहवौ दृष्टान्तो।
परण्यां पछै कोई परभव, पौंहतो बाल अवस्थावन्तो ॥ २ ॥
मुंऔ देख हाहाकार माच्यौ, त्रिया रोवै तिण वेला।
प्रत्यप हाय हाय शब्द पुकारै, भय चक्र जन हुवा भेला। भ० ॥ ३ ॥
कहै बापरी छोहरी रौ घाट कांई होसी, इणरी देखौ अवस्था एसी।
बारह वर्ष री विधवा होई सो, किण विध दिन काढंसी। भ० ॥ ४ ॥
एम विलाप करै लोक अधिका, जगत इणनैं दया जांणैं।
करुणा दया एह छोहरी री करै छै, मूरख तौ इम मांणैं ॥ ५ ॥
पण भौला इतरी नहीं पेखै, ऐ बंछै इणरा कांम भोगो।
जांणैं ओ रह्यो हुंतो जीवतौ तौ, सखर मिल्यौ थौ संजोगो। भ० ॥ ६ ॥
दोय चार होता डावरा डावरी, भोग भला भोगवती।
पिण न जांणैं आ कांम भोगां थी, माठी गति माहिं पड़ती ॥ ७ ॥
तिणरी चिन्ता तौ नहीं तिणानैं, तथा पिउ किण गति पांगरियौ।
ते पिण मूल चिन्ता नहिं त्यांनैं, जगत माया मोह जुड़ियौ। भ० ॥ ८ ॥
ज्ञानी पुरुष मरण जीवण सम गिणैं, उलट सोग नहिं आंणैं।
मूढ़ मिथ्याती मोह राग नैं, जीवण नैं दया जांणैं ॥ ९ ॥
अथवा राग द्वेप रै ऊपर, दृष्टान्त दूजौ दीधो।
डावरां रै किणही माथा मैं दीधी, साम्प्रत द्वेप प्रसिद्धौ ॥ १० ॥
उणनैं सहुं कोई देवै ओलूंभा, डावरां रै माथा मैं कांई देवै।
क्रोध करि दियां द्वेप कहै सहु, कोई आछौ नहीं कैहवै ॥ ११ ॥
डावरां नैं किणही लाडू दीधौ, अथवा मूलौ दियौ आणी।
कोई न कहै इणनै कांई डवोवै, प्रत्यप राग पिछांणी ॥ १२ ॥
औ राग ओलखणौ दोहरौ, अति ही इणनैं दया कहै छै अजांणो।
दुर्जय राग दशम तांईं देखौ, बीतां वीतराग कहांणो ॥ १३ ॥
इम राग द्वेप भिक्खु ओलखाया, मोह राग पाखंडी दया मांणै।
स्वाम भिक्खु न्याय सूत्र शोधी, निरवद्य दया आज्ञा मैं जांणैं ॥ १४ ॥

भरत खेत्र में दीपक भिक्खु, दीपा समान दीपायौ।
जिहाज तुल्य भिक्खु यशधारी, प्रत्यष ही पेखायो ॥ १५ ॥
याद आवै भिक्खु मुझ अहनिश, तन मन शरण तुमारौ।
त्यां पुरुषां नी आसता तीखी, जिणरौ है सफल जमारौ ॥ १६ ॥
गुणतीसमीं ढाले ज्ञानी गरु ना, बारु वचन बताया।
कठा तलक भिक्खु गुण कहियै, चिर जश कलश चढायौ ॥ १७ ॥

दुहा

विहरत पूज पधारिया, काफरलै किण बार।
संत गौचरी संचस्था, आज्ञा लेई उदार ॥ १ ॥
एक जाटणी रै उदक, जाच्यौ साधां जाय।
ते धोवण नहिं दै तिका, कहै देवै सो पाय ॥ २ ॥
साधां आय कह्यौ सही, स्वाम पास सुबिहांण
एक जाटणी रै अधिक, पण नहीं देवै पांण ॥ ३ ॥
तब स्वामी आया तिहां, बाई जल बहिराय।
जब ते कहै देवै जिसौ, परभव मैं फल पाय ॥४ ॥
औ धोवण द्यूं आपनैं, परभव धोवण पाय।
जे जल पीधौ जाय नहीं, मुझ सेती मुनिराय ॥ ५ ॥
पूज तास पूछा करी, गाय भणी दै घास।
तिणरौ स्यूं दै ते गऊ, आपै दूध उजास ॥ ६ ॥
इम मुनि नैं जल आपियां, परभव सुख फल पाय।
निर्दोषण ना फल निमल, स्वाम दई समझाय॥ ७ ॥
जद आज्ञा दी जाटणी, बहिरी ते शुद्ध वार।
आप ठिकांणैं आविया, ऐसी बुद्धि उदार ॥ ८ ॥
मति ज्ञान महा निर्मलौ, भिक्खु नौं भरपूर।
नीत चरण पालण निपुण, स्वाम सिंघ सम शूर ॥ ९ ॥

ढाल ३०

[भगवन्त भाख्या०—ए देशी]

आज म्हारा पूज सूं पाखंड थरहड़ै, सुरगिर आप सधीरोजी।
पारश साचो रे भिक्खु प्रगट्यौ, हद स्वाम अमोलक हीरो जी। आ० ॥ १ ॥
पादु शहरै रे पूज पधारिया, उतस्था उपासरै आंणो जी।
शिष्य हेम संघातै रे गौचरी ऊठतां, इतलै कुण अवसांनो जी ॥ २ ॥

आया दोय जणा तिण अवसरै, सांमदासजी रा साथो रे।
खांधै पोथ्यां तणां जोड़ा खरा, मैला वस्त्र मर्य्यादो रे। आ० ॥ ३ ॥
विहार करन्ता उपाश्रै आविया, बोलै मुख सूं बोलो रे।
कठे भीखणजी रे भीखणजी कठै, तब भिक्खु बोल्या तोलो रे। आ० ॥ ४ ॥
भीखण नांम म्हारौ स्वामी भणैं, वलि ते बोल्या विशेषो रे।
थांनैं देखण री मन मैं हुंती, तब स्वाम कहै तुम देखौ रे ॥ ५ ॥
बलि उवे बोल्या थे सगली बारता, आछी कीधी अमांमो जी।
एक बात आछी नहीं आदरी, तब पूज कहै कहो तांमो रे ॥ ६ ॥
बलि ते कहिवा रे लागा बारता, म्हें बावीस टोलां रा साधो रे।
त्यां सगलां नैं असाध कह्यौ तिका, विरुई बात विराधो रे ॥ ७ ॥
मुनि भिक्खु कहै तुझ टोला मझै, लिखत इसौ अवलोयो रे।
इकवीस टोला रौ तुझ गण आवियां, संयम दैणो मोयो रे ॥ ८ ॥
ऐसौ लिखत थांरा गण मैं, अछै जांणौ कै थे न जांणो रे।
जद उवे बोल्या रे म्हे जाणां अछां, छै मुझ लिखत अछांनो जी ॥ ९ ॥
भिक्खु पभणै इक्कीस टोलां भणी, थेइज प्रत्यष उथाप्या रे।
गृही नैं दीख्या देई लौ गण मझै, थे गृही तुल्य त्यांनैंई थाप्या रे ॥ १० ॥
इकवीस टोलां रा तुझ गण आवियां, दीख्या दे लेवौ माह्यों रे।
गृही नैं दीख्या देई लौ गण विषै, गृही तुल्य तास गिणायो रे। आ० ॥ ११ ॥
इकबीस टोला इम थेइज उथापिया, तुझ टोलौ रह्यौ तेहो रे।
तिणरौ लेखौ बताऊं तो भणी, सांभलजो ससनेहो रे। आ० ॥ १२ ॥
डंड बेला रौ आवै जिण भणी, तेलौ देवै तहतीकौ रे।
तेला रौ डंड आवै तिण भणी, श्री जिन वैण सधीको रे ॥ १३ ॥
इकबीस टोला नैं साध श्रद्धौ अछौ, वले नवौ साधपणौ देवौ रे।
तिण लेखै दीख्या रे तुझ आवै नवी, विवेक लोचन सूं बेवौ रे ॥ १४ ॥
थांरौ टोलौ पिण इण लेखा थकी, ऊथप गयौ उबेखौ रे।
इम बावीस टोला ऊथप गया, दम्भ तजीनैं देखौ रे ॥ १५ ॥
एम सुणीनैं ते बोल्या इण विधै, वारु वयण विचारी रे।
सुणौ भीखणजी रे साची बारता, बुद्धि तौ थांरी भारी रे ॥ १६ ॥
इम कहि जावा रे लागा उण समैं, स्वाम कहै सुखकारी रे।
रहौ तौ चर्चा :करां रुड़ी तरै, न्याय तणी निर्धारौ रे ॥ १७ ॥
तब उवे बोल्या रे मुझ रहिवा तणी, हिवडां थिरता न होयो रे।
तत् क्षण एम कही नैं तिहां थकी, रह्या चालंता दोयौ रे ॥ १८ ॥

ऐसी बुद्धि अनोपम आपरी, बुद्धिवन्त पांमैं विनोदो रे।
चिमत्कार अति पांमैं चित्त मझै, प्रगट पणैं प्रमोदो रे॥ १९ ॥
रागी सुणनैं रे चित्त मैं रति लहै, द्वेषी द्वेषज धारै रे।
उल्ट बुद्धि नर अवगुण आदरै, वच सुण मुंह बिगाड़ै रे॥ २० ॥
वर भिक्खु री सुन्दर बारता, सांभलतां सुखकारी रे।
हलुकर्म्मी जन सुण हर्षै घणा, पूज बारता प्यारी रे॥ २१ ॥
तंत तीसमीं ढाल तपास नीं, अति बुद्धि भिक्खु नीं एनौ रे।
अंतर्य्यमी रे याद आयां छतां, चित्त मैं पांमैं चैनो रे॥ २२ ॥

दुहा

विचरत पूज पधारिया, शिरियारी मैं सोय।
प्रश्न वौहरै पूछिया, जाति खींवसरा जोय॥ १ ॥
जीव नरक मैं जाय तसुं, तारण वालौ तांम।
कुंण है कहौ कृपा करी, इम पूछयौ अभिरांम॥ २ ॥
भिक्खु उत्तर इम भणैं, सखर जाब सुखकार।
पथर कुंवा मैं न्हाखियां, कुण तसुं पांचणहार॥ ३ ॥
कठिन पत्थर भारे करी, आफेई तल जाय।
कर्म्म भार सूं कुगति लहै, स्वाम कहै इम वाय॥ ४ ॥
बौंहरौ पूछ्या बलि करी, जीव स्वर्ग किम जाय।
कुंण लेजावणहार तसुं, बारू अर्थ बताय॥ ५ ॥
भिक्खु कहै वौहरा भणी, प्रत्यष पांणी मांय।
काष्ट न्हांखै कर ग्रही, ते किण रीत तिराय॥ ६ ॥
तिण काष्ठ रै तल कहौ, किण मांड्या है हाथ।
हलकापणा स्वभाव सूं, ऊपर तिरनैं आत॥ ७ ॥
हलकौ कर्म्म करी हुवां, जीव स्वर्ग मैं जाय।
सगला कर्म्म रहित सो, परम मोक्ष गति पाय॥ ८ ॥
ऐसा उत्तर आपिया, बारु बुद्धि बिनांण।
बलि उत्पत्तिया बुद्धि थकी, सखर जाब सुबिहांण॥ ९ ॥

ढाल : ३१

[देवै मुनिवर देशना—ए देशी]

पूज भणी किण पूछियौ, हलकौ जीव किम होय। ललना।
दृष्टान्त स्वामी दियौ इसौ, सांभल जो सहु कोय। ललना॥
तंत दृष्टान्त भिक्खु तणा॥ १ ॥

तंत वचन नहतीक ललना, तंत स्वाम नाव तारणी।
न्याय तंत निरभीक ललना, तं० ॥ २ ॥
पइसौ मेहलै पांणी मझै, नतरिण हुवै नेह ल०।
उणहिज पइसा नैं अग्नि मैं, अधिक तात देवै गेह ल०। तं०। ३ ॥
कुटी कुटी बाटकी करी, तिरै उदक मैं ताहि ल०।
वलि उण बाटकी नैं विषै, पइसौ मेल्यां निराय ल०। तं०। ४ ॥
तिम जीव संजम तप करी, करै आतम हलकी कोय ल०।
कर्म भार अलगौ कियां, तिरियै भवदधि तोय ल०। तं०। ५ ॥
किणही स्वाम भणी कह्यौ, दुरंगा पात्रा देख ल०।
काला धौला लाल किण कारणैं, स्वाम कहै सुविशेष ल०। तं०। ६ ॥
विविध रंग कुंथुवा हुवै, इक रंग सूं दूजा पर आय ल०।
साम्प्रत दीसणौ सोहिलौ, कारण एह कहाय ल०। तं०। ७ ॥
अति भार हींगलु एकलौ, कालौ फोडौ कहिवाय ल०।
बलि सोहरौ वासी उतारणौ, इत्यादिक ओलखाय ल०। तं०। ८ ॥
जु जूवा रंग देवै जूदा, निगम मैं बरज्या नांहि ल०।
बर्ज्या ते ममत्व भावे करी, ते ममत री थाप न ताहि ल०। तं०। ९ ॥
बालपणैं स्वामी वैणीरामजी, भिक्खु प्रतै भाषंत ल०।
हींगलू सूं पात्रा रंगणा नहीं, तब कहै भिक्खु तंत ल०। तं०। १० ॥
म्हारै तो पात्रा रंग्या अछै, तुझ मन शंका हुवै तांम ल०।
तौ तुझ पात्रा रंगौ मती, म्हें तौ दोष न जांणां आम ल०। तं०। ११ ॥
तब बोल्या वैणीरांमजी, केलुथी रंगवा रा भाव ल०।
भिक्खु तास भली परै, निर्मल वतावै न्याय ल०। तं०। १२ ॥
जो कैलु लेवा तूं जाय छै, पहिला पीलौ कचा रंग रौ पेख ल०।
पक्का लाल रंग रौ आगै पड्यौ, पहिलौ छोड़णौ नहीं तुझ लेख ल०। तं०। १३ ॥
पहिला देख्यौ कच्चा रंग रौ परिहरि, चोखौ केलु हेरै चित चाहि ल०।
जद तौ ध्यान घणा रंगरौज छै, इम कहिनैं दिया समझाय ल०। तं०। १४ ॥
ऐसी वुद्धि उत्पात्त री, नहीं मान बड़ाई री नीत ल०।
आतम अर्थी ओपता, पूरी ज्यांरी प्रतीत ल०। तं०। १५ ।
आप ववहार मैं ओलखी, दोष जांणी किया दूर ल०।
निरदोष जाण्यौ निर्मलौ, सम आदर्यौ शूर ल०। तं०। १६ ।
प्रथम आचारंग पेखल्यौ, पंचम अध्ययने पिछांण ल०।
पंचम उदेशौ पर्वड़ौ, वीर तणी ए वाण ल०। तं०। १७ ।

शुद्ध व्यवहार आलोचियां, असम्य पिण सम्य थाय ल० ।
ते कांमी नहीं तिण दोष नौं, शुद्ध साधु नीं रीत सुहाय ल० । तं० । १८ ॥
उत्तम ए पाठ ओलखी, कोईबोल रौ भ्रम कर्म्म योग ल० ।
तौ भिक्खु री आसता राखियां, पांमै सुख परलोग ल० । तं० । १९ ॥
आखी ढाल इकतीसमी, भिक्खु बुद्धि भंडार ल० ।
दृष्टान्त दिल में देखतां, चित्त पामैं चिमत्कार ल० । तं० । २० ॥

दुहा

किण ही भिक्खु नैं कह्यौ, जीव छोडावै जांण ।
सूं फल तेहनौं संपजै, वर विक्खु कहै वाण ॥ १ ॥
घट में ज्ञान घाली करी, हिंस्या छोड़ायां धर्म्म ।
जीवण वंछे जेहनौं, कटै नहीं तसुं कर्म्म ॥ २ ॥
ऊंची कर वे आंगुली, आखै भिक्खु आप ।
औ बकरी रजपूत औ, कहौ बांधे कुण पाप ॥ ३ ॥
मरणहार डूबै महा, कै डूबै मारणहार ।
ओ कहै मारणहार सो, जासी नरक मझार ॥ ४ ॥
भिक्खु कहै डुबता भणी, तारै संत तिवार ।
समझावै रजपूत नैं, शिव मार्ग श्रीकार ॥ ५ ॥
जे बकरा रौ जीवणुं, बांछै नहीं लिगार ।
तिण ऊपर दृष्टान्त ते, सांभलजो सुखकार ॥ ६ ॥
साहुकार रै दोय सुत, एक कपूत अवधार ।
ऋण करडी जागां तणुं, माथै करै अपार ॥ ७ ॥
दूजौ सुत जग दीपतौ, यश संसार मझार ।
करड़ी जागां रौ करज, ऊतारै तिण बार ॥ ८ ॥
कहौ केहनैं बरजै पिता, दोय पुत्र में देख ।
बरजै कर्ज करै तसुं, कै ऋण मेटत पेख ॥ ९ ॥

ढाल : ३२

[समता रस बिरला—ए देशी]

कर्ज माथै सुत अधिक करंतो, बार बार पिता वरजंतो रे ।
समझू नर बिरला ।
करडी जागां रा माथै कांय कीजै, प्रत्यष दुख पामीजै रे । सम० ॥ १ ॥

अधिक माया री जे कर्ज उतारै, जनक नाम नहिं धारै रे। सम०।
पिता समांन साधुजी पिछांणौ, बकरौ रजपूत ने सुत मांणौ रे ॥ २ ॥
कर्म्म रूप ऋण माथै कुंण करतौ, आगला कर्म्म कुंण अपहरतौ रे। सम०।
कर्म्म ऋण रजपूत माथै करै छै, बकरा संचित कर्म्म भोगवै छै रे॥ ३ ॥
साधु रजपूत नैं बर्जे सुहाय, कर्म्म करज करै कांय रे। सम०।
कर्म्म बंध्यां घणा गोता खासी, परभव में दुख पासी रे॥ ४ ॥
सखरपणैं तिणनैं समझायौ, तिरणौ तिणरौ बंछ्यौ मुनिरायो रे। सम०।
बकरा जीवावण नहीं दै उपदेश, लही ओलखै बुद्धिवंत रेस रे॥ ५ ॥
इमहिज कसाई सौ बकरा हणंतो, शुद्ध उपदेश दे तार्यौ संतो रे। सम०।
कसाई गुणग्राम साधु रा करन्तौ, मुझ तारक आप महंतो रे॥ ६ ॥
बकरा हण्यां जीव बचिया विशेष, यांनै काज न दियौ उपदेश रे। सम०।
ज्ञानादि चिऊं कसाई घट आया, पिण बकरा तौ मूल न पाया रे॥ ७ ॥
कहै कसाई दोनूं कर जोड़, सौ बकरा करै गोर रे। सम०।
कहौ तौ नीलौ चारौ यांनै चराऊं, पछै काचौ पांणी त्यांनें पाऊं रे॥ ८ ॥
आप कहौ तौ एवर में उछेरूं, कहौ तौ अमरिया करेरूं रे। सम०।
आप कहौ तौ सूंपूं आपनैं आंणी, पाइजो धोवण उन्हौ पांणी रे॥ ९ ॥
तुम सूझौ चारौ निरजो बहुतेरौ, एवर साधां री उछेरौ रे। सम०।
साधु कहै सूंस सखरा पालीजे, जावता सूंसां री कीजै रे ॥ १० ॥
सूंसां री एम भलावण देवै, बकारां री मूल न बेवै रे। सम०।
उपदेश देवै जो बकरा बचावण, तौ बकरां री दैत भलावण रे॥ ११ ॥
समझ्यौ कसाई सखर शिव साई, इणरी मुनि नैं दलाली आई रे। सम०।
तेहिज धर्म्म साधु नैं जोय, पिण बकरां रौ धर्म्म न कोय रे॥ १२ ॥
कसाई अज्ञानी रौ ज्ञानी कहायौ, पिण बकरां तौ ज्ञान न पायौ रे। सम०।
कसाई मिथ्याती रौ समकती कहियै, शुद्ध तत्व बकरा न सदहियै रे॥ १३ ॥
हिंसक रौ दयावांन हुवौ कसाई, दिल बकरां रै दया न आई रे। सम०।
तिरियौ कसाई बकरा नहीं तिरिया, दुर्गति सूं नहिं डरिया रे॥ १४ ॥
कसाई तिरियौ ते धर्म्म इण काज, तारक महामुनि राज रे। सम०।
तिरण तारण कसाई रा तपासो, बारू हिया मैं बिमासौ रे॥ १५ ॥
तस्कर नौ दूजी दृष्टन्त तेह, सांभलजो ससनेह रे। सम०।
किण ही सेठ री नीं हाटे किण बार, उतरिया अणगार रे॥ १६ ॥
तस्कर रात्रि समैं तिणवार, खोल्या है आय किमाड़ रे। सम०।
तब मुनिवर कहै जागीनैं ताम, कुण हौ आया किण कांम रे॥ १७॥

कहै तस्कर म्हे तौ चोर कहाया, इहां चोरी करणनैं आया रे। सम०।
सहंस रुपयां री थेली मेहली सेठ, निडर लेजावसां नेठ रे॥ १८॥
तब साधु उपदेश देवै तिण बार, कह्या चोरी रा फल दुःखकार रे। सम०।
आगै नरक निगोद ना दुःख अधिकाया, भिन्न २ भेद बताया रे॥ १९॥
धन तौ न्यातीला सहू मिल खासी, परभव दुःख तूं पासी रे। सम०।
रूड़ौ उपदेश देई मुनिराया, त्याग चोरी ना कराया रे॥ २०॥
तस्कर कहै मुझ डुबतां ने तास्यौ, विषम कर्म्म सूं बास्यौ रे। सम०।
वारु विविध गुण करत विख्यातं, प्रगट थयौ प्रभातं रे॥ २१॥
इतलै दूकांन तणौ धणी आयौ, ज्ञान नहीं घट माह्यो रे। सम०।
पेड़ी नैं नमस्कार करि प्रसिद्धो, कांयक लटकौ साधू नैं ही कीधौ रे॥ २२॥
तस्कर नैं पूछा करी तिवार, कुंण हौ खोल्या किण दुवार रे। सम०।
तस्कर बोल्या म्हें चोर छां तांम, अब तौ त्यागे दीधी आंम रे॥ २३॥
हुण्डी बटायनैं रुपया हजार, थेली मांहै मेहली थे तिवार रे। सम०।
सो म्हे सांझे देखता था सोय, आया लेवण अवलोय रे॥ २४॥
साधां उपदेश देई समझाया, चोरी ना लखण छोड़ाया रे। सम०।
साधां रौ भलो होयजो कारज सास्या, तुरत डूबतां नैं तास्या रे॥ २५॥
मेसरी सुणनैं हर्ष्यौ मन माह्यो, पड़ियौ साधां रै पायो रे। सम०।
आप म्हारी हाटे भलांई ऊतरिया, सकल मनोरथ सरिया रे॥ २६॥
थेली म्हारी आप राखी थिर थापी, प्रत्यप लेजावता चोर पापी रे। सम०।
हिवड़ा लेजावता रुपया हजार, निपट हुंतौ निराधार रे॥ २७॥
चार पुत्र मुझ चतुर विचारा, कर्म्म वश रहिता कुंवारा रे। सम०।
सुत चारूंई परणाव सूं सार, औ आप तणौ उपगार रे॥ २८॥
इम कहै मेसरी वयण अथागो, ऋषजी तणौ तौ रागो रे। सम०।
धन राखण उपदेश म धार, तेतौ तस्कर तारणहार रे॥ २९॥
कसाई समझ्यां बकरा कुशले कह्या जी, तस्कर समझ्यां धन रौ धनी राजी रे।सम०।
कसाई चोर तारण रिष कांमी, धन बकरा राखण नहीं धांमी रे॥ ३०॥
तीजो दृष्टन्त कहूं तंत सार, एक पुरुष लंपट अधिकार रे। सम०।
सो पुरुष परनारी नौं सेवणहार, अति ही बंधांणी पीत अपार रे॥ ३१॥
ते लंपट आयौ मुनि तणैं पाय, साधां दियौ समझाय रे। सम०।
पर स्त्री नौं पाप सुणी भय पायौ, अधिक वैरागज आयौ रे॥ ३२॥
ते त्याग जाव जीव कीधा ते ठाम, गावै मुनि ना गुणग्राम रे। सम०।
आप मोनैं डूबता नैं उबास्यौ, निकुच बिसन थी निवास्यौ रे॥ ३३॥

शील आदरियौ सुण्यौ तिण नार, ऊपनौं द्वेष अपार रे। सम०।
उणनैं कहै म्हैं धारयौ इकनार, धुर ही थी थां पर धार रे ॥ ३४ ॥
कांम औरां सूं नहीं मुझ कोय, इमड़ी धारी अवलोय रे। सम०।
कैह तौ म्हारौ कह्यौ मांनलै ताम, म्हासूं करौ गृहवास रे ॥ ३५ ॥
कह्यौ न मांन्यौ तौ कूवै पड़ सूं, मोन कुमोते मरसूं रे। सम०।
जब ते कहे मोनैं मिलिया जिहाज, प्रत्यष भव-दधि पाज रे ॥ ३६ ॥
त्यां परनारी नौं पाप बतायौ, म्हैं त्याग किया मन लायो रे। सम०।
तिणसूं म्हारै थांसूं मूल न तार, करै अनेक प्रकार रे ॥ ३७ ॥
इम सुण स्त्री कुवै पड़ी आय, तिणरौ पाप साधु नैं न थाय रे। सम०।
समझ्यौं कसाई बकरा बच्या सोय, तस्कर समझ्यां रह्यौ धन जोय रे ॥ ३८ ॥
नर लंपट समझ्यां कूवै पड़ी नारो, चतुर हिया में विचारो रे। सम०।
तस्कर कसाई लंपट नैं तारण, साधां उपदेश दियो सुधारण रे ॥ ३९ ॥
ऐ तीनूं तिरिया साधु तारणहार, त्यांरौं धर्म्म साधां नै उदार रे। सम०।
मुक्ति मारग यां तीनां रै बधाया, घणा जनम मरण मिटाया रे ॥ ४० ॥
बकरा बच्या धणी रै धन रहियौ, तिणरौ धर्म्मसाधु रै न कहियौ रे। सम०।
नार कुवै पड़ी तिणरौ न पापो, अदल विचारौ आपो रे ॥ ४१ ॥
केई अज्ञानी कहै भूला भरमौ, जीव धन रह्यौ तिणरौ है धर्म्मो रे। सम०।
उणरी सरधा रै लेखै इम थापो, प्रत्यष नार मुंआरौ है पापो रे ॥ ४२ ॥
नार मुंआरौ पाप दिल नांणै, जीव बचियां रौ धर्म्म कांय जांणै रे। सम०।
बले धन रह्यां रौ धर्म्म कांय धारो, बुद्धिवन्त न्याय विचारौ रे ॥ ४३ ॥
भिक्खु स्वाम इम भेद बताया, असल न्याय ओलखाया रे। सम०।
कसाई तस्कर लंपट केरौ, भिक्खु दृष्टन्त दियौ भलेरौ रे ॥ ४४ ॥
ऐसा भिक्खु रिष महा अवतारी, त्यां श्रद्धा शोधी तंत सारी रे। सम०।
ज्यां पुरुषां री जे प्रतीत करसी, त्यांरौ जीवतव जन्म सुधरसी रे ॥ ४५ ॥
ऐसा भिक्खु याद आवै मोय, हर्ष हियै अति होय रे। सम०।
स्मरण आप तणौ नित्य साधूं, भिक्खु पारश साचौ म्हैं लाधूं रे ॥ ४६ ॥
सुर गिर सांप्रत आप सधीरा, मोनैं मिलिया अमोलक हीरा रे। सम०।
पंचम आरा में कियौ प्रकाश, सखरी फैली है बास सुवास रे ॥ ४७ ॥
दोय तीसमीं ढाले दृष्टन्त, वर्णन बहु विरतंतो रे। सम०।
स्वाम भिक्खु ओलखायौ विशेष, तिण म्हैं पिण आख्यौ सु अशेष रे ॥ ४८ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, जीव बच्या ते जाण।
दया कहीजै तेहनैं, जीवण दया पिछांण ॥ १ ॥
भिक्खु कहैं कीड़ी भणी, कीड़ी जांणैं कोय।
ज्ञान कहीजै तेहनैं, कै कीड़ी ज्ञानज होय ॥ २ ॥
तब ते कहै कीड़ो भणी, जे कौय कीड़ी जाण।
ज्ञान कहीजै तेहनैं, पिण कीड़ी नहिं ज्ञान ॥ ३ ॥
बलि भिक्खु कहै कीड़ी भणी, कीड़ी सरधै कोय।
समकित कहीजै तेहनैं, कै कीड़ी समकित होय ॥ ४ ॥
तब ते कहै कीड़ी भणी, कीड़ी सरधै तंत।
समकत ते सरधा सही, पिण किड़ी नहिं समकीत ॥ ५ ॥
त्याग कीडी हणवा तणां, दया तेह दीपाय।
कै कीडी रही तिका दया, भिक्खु पूछी बाय ॥ ६ ॥
तब ते कहै कीडी रही, तिका दया कहिवाय।
खोटी सरधा थापवा, बोल्यौ झूठ बणाय ॥ ७ ॥
भिक्खु कहै पवने करी, कीडी उड़ गई ताहि।
तुझ लेखैं दया उड़ गई, निरमल निरखौ न्याय ॥ ८ ॥
जद उ कहै विचारनैं, कीडी हणवा रा त्याग कियाह।
दया तेहिज दीसै खरी, पिण कीडी रही न दयाह ॥ ९ ॥

ढाल : ३३

[कर्म्म भुगत्यांईज छुटिये—ए देशी]

बलता भिक्खु बोलिया, कीडी मारण रा पचखांण लाल रे।
तेहिज दया साची कही, वारु सुणौ इक वांग रे लाल रे।
जोयजो रे बुद्धि भिक्खु तणी ॥ १ ॥
रूडी दया निज घट मैं रही, कै कीड़ी पास कहाय लाल रे।
तब ते कहै पोता कनैं, कीड़ी पास न कांय लाल रे ॥ २ ॥
पूज कहै घट मैं दया, कीड़ी पै दया नहिं कांय लाल रे।
किणरा जतन करणा कहौ, साचौ जाब सुहाय लाल रे ॥ ३ ॥
करणां जतन दया तणा, कै कीड़ी रा यत्न कराय लाल रे।
उ कहै यत्न दया तणा, इम साच बोली आयौ ठाय लाल रे ॥ ४ ॥

त्रिविध त्याग हणवा तणा, दया संवर रूप देख लाल रे।
त्याग विना ही हणैं नहीं, सखर निर्जरा संपेख लाल रे॥ ५ ॥
इमज छकाय हणैं नहीं, दया तेहिज दीपाय लाल रे।
जगत हणैं जीवां भणी, निज पोता री दया न जाय लाल रे॥ ६ ॥
भारी बुद्धि भिक्खु तणी, सखरी सिद्धंत संभाल लाल रे।
न्याय मिलाया निरमला, भांज्या भ्रम भयाल लाल रे॥ ७ ॥
किणहिक इम पूछा करी, महा मोटौ मुनिराय लाल रे।
अति ही थाकौ उजाड़ मैं, चालण शक्ति न कांय लाल रे॥ ८ ॥
सैहजेई गाड़ौ आंवतौ, तिण गाड़ा ऊपर वैसांण लाल रे।
गाम मांहैं आण्यौ सही, तेहनैं कांई थयौ जांण लाल रे॥ ९ ॥
भिक्खु कहै गाड़ौ नहीं, पूंणिया आवत पेख लाल रे।
गधै चढ़ाय आंण्यौ गांम मैं, तिण मैं स्यूं थयौ तुझ लेख लाल रे॥ १० ॥
तब ऊ बोल्यौ तड़क नैं, गधा री क्यूं करौ बात लाल रे।
स्वाम कहै साधु भणी, दोनूं अकल्प देखात लाल रे॥ ११ ॥
गाडै वैसांणे आण्यौ गाम मैं, थे धर्म तणी करौ थाप लाल रे।
तौ गधै वैसांण्यां ही धर्म है, पाप छै तौ दोयां मैं ही पाप लाल रे॥ १२ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि आपरी, निरमल चारित नीत लाल रे।
सरधा शुद्ध शोधी सही, बारु स्वाम बदीत लाल रे॥ १३ ॥
पांणी अणगल पावियां, केई पाखण्डी कहै पुन्य लाल रे।
केयक मिश्र कहै तिहां, ते दोनूं ई सरधा जबून लाल रे॥ १४ ॥
पुण्यवाला कहै पूज नैं, सुणौ भीखणजी बात लाल रे।
महा खोटी सरधा मिश्र री, किहांई मेल न खात लाल रे॥ १५ ॥
भिक्खु स्वामी इम भणैं, किणरी फूटी एक लाल रे।
किणरी दोय फूटी सही, बारु करलौ विवेक लाल रे॥ १६ ॥
मिश्र कहै छै मांनवी, त्यांरी फूटी एक लाल रे।
पुन परूपै पाधरौ, दोनूं फूटी देख लाल रे॥ १७ ॥
जाब दियौ इम जुगत सूं, अहो अहो बुद्धि अनूंप लाल रे।
अहो अहो खिम्या आपरी, चित्त चरचा हद चूंप लाल रे॥ १८ ॥
तुम चिन्तामणि सुरतरु, पंचमैं कियौ प्रकाश लाल रे।
आशा पूरण आप छौ, बारु तुझ विश्वास लाल रे॥ १९ ॥
तंत ढाल तेतीसमी, भिक्खु गुण भंडार लाल रे।
अंतर्य्यामी मांहरा, सुख संपति दातार लाल रे॥ २० ॥

दुहा

पचावनैं वर्ष पूज जी, शहर कांकरोली सार।
सैंहलोतां री पौल में, ऊतरिया तिण बार ॥ १ ॥
प्रत्यष बारी पौलरी, जड़ी हुंती जिण वार।
ऋष भिक्खु रहितां थकां, एक दिवस अवधार॥ २ ॥
बारी खोली बारणैं, दिशा जायवा देख।
निसरिया भिक्खु निशा, पूछै हेम संपेख ॥ ३ ॥
स्वामी बारी खोलण तणौ, नहीं कांई अटकाव।
तब भिक्खु बोल्या तुरत, प्रत्यष ते प्रस्ताव ॥ ४ ॥
पाली शहर तणो प्रत्यष, नांम चौथजी न्हाल।
दर्शण करवा आवियौ, ए देखै इण काल ॥ ५ ॥
अति शंकिलो एह छै, पिण इण बात री तांम।
शंका इणरै नां पड़ी, केम पड़ी तुझ आंम ॥ ६ ॥
हेम कहै म्हारै हियै, कांई शंका रौ कांम।
पूछण रूप म्हैं पूछियौ, नहिं शंका रौ नांम ॥ ७ ॥
पूज कहै पूछै इसी, इणरौ नहिं अटकाव।
अटकाव हुवौ जो एहनौं, म्हैं खोलां किण न्याव ॥ ८ ॥
हेम सुणी जांण्यौ हियै, किवाड़ियौ खोलाय।
आहार लियां मैं दोष नहीं, खोल्यां दोष किम थाय ॥ ९ ॥

ढाल : ३४

[सुणजो नरनाथ—ए देशी]

स्वाम भिक्खु रा दृष्टन्त सुहाया, भव्य उत्तम जीवां मन भाया।
सुणजो चित्त शांति, भिक्खु ना भारी दृष्टन्त ॥ १ ॥
वचन सुधा बागरै स्वामी बारु, शुद्ध भविजन तारण सारु।
सुणजो सुखदाया, स्वामी ना दृष्टन्त सुहाया ॥ २ ॥
असल न्याय भिन्न २ ओलखाया, प्रभु पंथ भिक्खु हद पाया ॥ ३ ॥
भेषधारी सरधाहीन भयाला, दियो दृष्टन्त पूज दयाला ॥ ४ ॥
समकत हीण जे अधिक असार, यांरो असल नहीं आचार ॥ ५ ॥
थोथा चणां री भखारी थी एक, साबतौ चणो मूल म पेख ॥ ६ ॥
ऊंदरा रड़बड़ कीधी आखी रात, एक कण पिण नायो हाथ ॥ ७ ॥
सांग धार्‌यां माहैं समकत नांहिं, पड़े ऊंदर सम नर पाय ॥ ८ ॥

कहौ साध श्रावक त्यांनैं केम कहाय, ए तो दोनूं सरीखा देखाय ॥ ९ ॥
समकित रहित दोनूंई तेन, दियो स्वाम भिक्खू दृष्टन्त ॥ १० ॥
कोयलां री नें रात्र अति काली, काला वासण में रांधी कराली ॥ ११ ॥
अमावस नीं रात्रि आंधा जीमण वाला, परुसण वालाई आंधा पयाला ॥ १२ ॥
जीमनां बोलै खुंखारा करंता, कालो कुंखौ टालजो मतिवंता ॥ १३ ॥
कहै खबरदार होय जीमजो सोय, रखे आय जायला कालो कोय ॥ १४ ॥
मूढ इनरो नहीं जांणै ममेलौ, कालोहिज कालो हुवो भेलौ ॥ १५ ॥
ज्यूं सरधा आचार रो नहीं ठिकाण, सगलौ मिलियो सरीखौ घांण ॥ १६ ॥
साध श्रावकपणा रो अंग नहीं सारो, संवर लेवै दोयां रै अंधारो ॥ १७ ॥
न्याय री बात नहीं शुद्ध नीति, वले बोलै वचन विपरीत ॥ १८ ॥
वस्त्र पात्रा अधिका राखै विशेष, आधाकर्म्मादि दोष अनेक ॥ १९ ॥
वले कहै भीखणजी काढ़ो इणरौ तार, शुद्ध स्वाम बोल्या मुखकार ॥ २० ॥
तब पूज कहै काढ़ै तार कांई, थानैं डांडा ही सूझै नाहीं ॥ २१ ॥
सबल आधाकर्म्मी आदि न सूझै, कहौ नांन्हा दोष किम बूझै ॥ २२ ॥
दोष री थाप थांरै दिन रैणौ, कठिन कांम सरधा रौ तौ कैहणौं ॥ २३ ॥
बाय रै वंग घरटी मांडी बाई, पीसती जावै ज्यूं उड्यौ जाई ॥ २४ ॥
आखी रात्रि पीसी ढाकणी मैं उसार्‌यौ, ऐहवौ दृष्टन्त भिक्खु उतार्‌यौ ॥ २५ ॥
ज्यूं दोष लगाय नैं डंड न लेवै, कुमति दोष री थाप करेवैं ॥ २६ ॥
क्यांरे क्यांरे क्यूंही नहीं रहै कांई, देश सर्व दृष्टन्त देखाई ॥ २७ ॥
ऐसा भिक्खु ऋष आप उजागर, शरणागत महा बुद्धि सागर ॥ २८ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि अधिक अमांमी, धुर जिन आज्ञा परमति धांमी ॥ २९ ॥
जिन आगन्या माहैं धर्म्म जतायौ, आज्ञा बारै अशुभ सहु आयौ ॥ ३० ॥
सगला न्याय मेल्या सूत्र देख, वाह वाह भिक्खु बुद्धि विशेष ॥ ३१ ॥
याद आयां तन मन हुलसाय, रस कुंपिका तूं ऋषराय ॥ ३२ ॥
स्यूं उपमा तुझनैं कहूं सार, अजिणा जिण सरिसा उदार ॥ ३३ ॥
उववाई मैं उपम एह अनूंप, सखर थिवरां नैं दीधी सद्रूप ॥ ३४ ॥
आदिनाथ ज्यूं काढी धर्म्म आदि, सखरी उपजाई आप समाधि ॥ ३५ ॥
बारु शरण आपरो सुविशाल, म्हारै तूं हिज दीन दयाल ॥ ३६ ॥
स्वाम भिक्खु गुण गावन समरियौ, म्हारौ हिवड़ौ हरष सूं भरियौ।
चौतीसमी ढाले भिक्खु चित्त चाह्या, बारु परमानन्द वरताया ॥ ३७ ॥

दुहा

कालवादि करलौ घणौ, नहिं समकित शुद्ध नींव।
सिद्धां मैं पावै नहीं, आखै तास अजीव॥ १॥
बखतरांमजी नांम तसु, पुर माहैं पहिछांण।
कुकला कुबुद्धिज केलवी, बिहार करि गया जांण॥ २॥
इतलै भिक्खु आविया, चरचा करत पिछांण।
मेघ भाट मुनि नैं कहै, बगताजी री वांण॥ ३॥
कालवादि इसड़ी कहै, अति घन बात अतीव।
भीखणजी गाथा मझै, कहै एकलड़ौ जीव॥ ४॥

ते गाथा

एकलड़ौ जीव खासी गोता, जद आड़ा नहीं आवै बेटा पोता।
नरक माहैं खातां मारौ, पायौ मनुष जमारौ मत हारौ॥

दुहा

इण विध भीखणजी कहै, गाथा मैं इक जीव।
बलि नव तत्व में पांच कहै, विरुई बात अतीव॥ ५॥
जो पांच जीव नव तत्व मैं, तौ कहिणौ पांचलड़ौ जीव।
एकलड़ौ ते किम कहै, इम पूछा तिण कीव॥ ६॥
पूज कहै तसु पूछणौ, सिद्धां मैं सुखकार।
कहौ आत्मा केतली, तब कालवादि कहै चार॥ ७॥
फिर त्यानैं इम पूछणौ, ते च्यारूं जीव कै नाहिं।
जब कहै च्यारूं जीव है, चार जीव तसु न्याय॥ ८॥
चौलड़ौ जीव त्यांहि कह्यौ, मुझ लड़ अधिकी एक।
सांभलनैं ते समझियौ, मेघौ भाट विशेष॥ ९॥

ढाल : ३५

[राजा दशरथ दीपतौ रे—ए देशी]

पूज भीक्खण जी पधारिया रे, देश ढूंढार दीपायो रे।
अति घणा श्रावगी आविया रे, चरचा करण चित्त चाह्यो रे।
भारी बुद्धि भिक्खु तणी रे॥ १॥
स्वाम भणी कहै श्रावगी रे, नग्न मुद्रा मुनि नागा रे।
तार मात्र वस्त्र न राखणौ रे, राखै ते परीषह थी भागा रे।
तंत दृष्टन्त भिक्खु तणा रे॥ २॥

वस्त्र राखौ शीत टालवा रे, तौ भागा शीत परीषह थी नाह्यो रे।
तिणसूं वस्त्र नहि राखणां रे, जद पूज बनावें न्यायो रे ॥ ३ ॥
स्वाम कहै कितरा सही रे, परीपह भेद प्रकासो रे।
ते कहै परीपह बावीस छै रे, वलि पूछै पूज विमासो रे । ४ ॥
कहो प्रथम परीपहो किसो रे, ते कहै क्षुध्या रो नाह्यो रे।
पूज कहै थांरा मुनि रे, आहार करै कै नाह्यो रे ॥ ५ ॥
श्रावगी कहै करै सही रे, इकटंक आहार ने जागां रे।
पूज कहै तुझ लेखैं मुनि रे, प्रथम परीपह थी भागा रे ॥ ६ ॥
ते कहै क्षुध्या लागां छतां रे, आहार करै अणगारो रे।
स्वाम कहै सी लागां सही रे, वस्त्र म्हे राखां विचारो रे ॥ ७ ॥
पूज बलि पूछा करी रे, प्रगट तुझ मुनि पहिछांणी रे।
पांणी पीवै कै पीवै नहीं रे, उत्तर आपो सुजांणी रे ॥ ८ ।
श्रावगी कहै पीवै सही रे, इकटंक उदक ने जांगा रे।
स्वाम कहै तुझ लेखै तिकै रे, दूजा परीपह थी भागा रे ॥ ६ ॥
ते कहै तृपा लागां छतां रे, उदक पियै अणगारो रे।
स्वाम कहै सी टालिवा रे, वस्त्र ओढां म्हे विचारो रे ॥ १० ॥
भूख लागां अन्न भोगवै रे, प्यास लागां पियै पाणी रे।
इम निर्दोपण आचर्यां रे, न भागै परीपह थी नांणी रे ॥ ११ ॥
तिम शीत मसादिक टालवा रे, मूर्च्छा रहित मुनिरायो रे।
वस्त्र मोनोपेत बावरै रे, ते परीपह थी भागै किण न्यायो रे॥ १२ ॥
इत्यादिक उत्पात्त सूं रे, उत्तर दीधा अमांमो रे।
स्वाम गुणां रा सागरू रे, ऊंडी वृद्धि अभिरांमो रे ॥ १३ ॥
एक दिवस बहु आविया रे, श्रावगी स्वामी पासो रे।
कहै वस्त्र न राखौ तौ तुम तणी रे, बारु करणी विमासो रे ॥ १४ ॥
स्वाम कहै श्वेताम्बर शास्त्र थी रे, घर छोड़ थया अणगारो रे।
तिण माहैं तीन पछेवड़ी रे, चोल पटादि कह्या सुविचारो रे ॥ १५ ॥
तिण कारण राखां तिके रे, आसता तुझ शास्त्र नीं आयां रे।
नग्न होय जासां वस्त्र नैं न्हांखनैं रे, प्रतीत दिगम्बर नीं पायां रे ॥ १६ ॥
जाब दिया अति जुगत सूं रे, बुद्धिवंत हर्षै विशेषो रे।
न्याय नीत यांरै निरमली रे, पक्ष रहित संपेखौ रे ॥ १७ ॥
वाह वाह भिक्खु मुनिवरु रे, अन्तर्य्यामी आपो रे।
दीपक तूं इण काल में रे, जपूं तुमारौ जापो रे ॥ १८ ॥

पैंतीसमी ढाल परवरी रे, चरचा दिगम्बर नीं छांणी रे।
भिक्खु भजन सूं भय मिटै रे, जय जश सुख हद जांणी रे॥ १९॥

दुहा

दया धर्म्म अति दीपतौ, श्री जिन आण सहीत।
भिक्खु स्वाम भली परै, पवर धस्यौ अति पीत॥ १॥
केई हिंस्या धर्म्मी कहै, दया दया पुकारौ कांय।
दया रांड लोटै पड़ी, ऊकरड़ी रै मांहि॥ २॥
भिक्खु ऋष भाखै भली, दया मात दीपाय।
उत्तराध्ययन चौबीस मैं, कहि आठ प्रवचन मांय॥ ३॥
किण सेठ आउ पूरी कियौ, स्त्री रही लारै सोय।
सपूत सुत ह्वै ते सही, यत्न करै ते जोय॥ ४॥
कपूत ह्वै ते मात नैं, बदै वचन विकराल।
रंडकार नीं गाल दै, बोलै आल पंपाल॥ ५॥
धणी दया ना दीपता, महावीर महाराज।
ते तौ मोख सिधाविया, कीधा आत्तम काज॥ ६॥
श्रावक साधां सपूत ते, दया मात इम जांण।
यत्न करै अति जुगत सूं, विरुई न बदै वाण॥ ७॥
प्रगट्या कपूत थां जिसा, बोलावौ कहि रांड।
दया मात नें गाल दे, ते भव भव होवै भांड॥ ८॥
जिन मत एम जमावता, पाखंड मत परिहार।
स्वाम रवि जिहां संचस्या, तिमर हरण इकतार॥ ९॥

ढाल : ३६

[जोगीड़ौ कपट करे छै —ए देशी]

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ रे, थे जावौ जिण गांम रै मांहि।
धसका पड़ै लोकां तणैं, तिणरौ कांई कारण कहिवाय।
भिक्खु भवतारक भारी रे, आप प्रगट्या अवतारी रे।
उत्पत्तिया बुद्धि अधिकारी रे, दृष्टन्त दिया सुविचारी रे॥ १॥
स्वाम कहै तुम्हे सांमलौ रे, गारडु आवै गांम।
डाकणियां नैं काढ़ण भणी, जद कहौ डरै कुंण तांम॥ २॥
प्रभाते नीला कांटां मभै रे, वालस्यां डाकणियां नैं बोलाय।
तौ धसका पड़ै डाकणियां तणैं, तथा न्यातीलां रै पड़ै ताहि॥ ३॥

दूजा तौ लोक राजी हुवैं रे, त्यांरे तौ चिन्त न काय।
जांणैं उपद्रव शहर तणौ मिटै, तिणसूं और तौ हर्षित थाय॥ ४॥
ज्यूं गाम मैं साध आयां छतां रे, भेषधार्‍यां रैं धसका पडंत।
कै त्यांरा श्रावकां रैं धसका पड़ैं, भारीकर्म्मा तौ इम भिड़कन्त॥ ५॥
बारू सरधा आचार बतायनैं रे, देखी म्हांनैं ओलखाय।
त्यांरै धसका पड़ै तिण कारणैं, हलुकर्मी तौ मन हरषाय॥ ६॥
उत्तम मन इम चितवैं रे, सुणसां साधां रा बखांण।
दान सुपात्र देई करी, करस्यां आतम तणा किल्यांण॥ ७॥
कुगुरां रा पखपाती भणी रे, संत मुनि न सुहाय।
दृष्टन्त स्वाम दियौ इसौ, ते तौ सांभलजो सुखदाय॥ ८॥
जुरवालौ गयौ जीमवा रे, जीमणवार मैं जांण।
पकवांन तौ कड़वा घणा, बद बद कहै लोकां नैं वांण॥ ९॥
लोक कहै लागै घणा रे, प्रगट मिठा पकवान।
तुझ शरीर मैं ताव है, जिणसूं कड़ुवा लागै छैं जान॥ १०॥
ज्यूं मिथ्यात रोग जाड़ौ हुवैं रे, संत तास न सुहाय।
हलुकर्मी हियै हर्षता, चित्त मैं मुनि दर्शण चाहि॥ ११॥
भूखां मरता रोटी वासतै रे, सांग साधू नौ धारंत।
त्यांनैं कहै चारित चोखौ पालजो, जद स्वाम दियौ दृष्टन्त॥ १२॥
वलवन्त बालै बांधनै रे, तिणनैं कहै सिर नांम।
सती माता तेजरा तोडजे, ते कांई तोड़ै तेजरा ताम॥ १३॥
ज्यूं भेष पहिरै रोटी कारणैं रे, तेहनैं कहौ चोखौ चारित्र पाल।
ते कठिण चारित्र पालै किण विधै, दुक्कर कह्यौ है दीन दयाल॥ १४॥
चोखा खोटा गुरु उपरैं रे, दियौ नावा नौं दृष्टन्त।
काठ की नाव साजी कही, एक फूटी नावा छिद्रान्त॥ १५॥
तीजी नाव पत्थर तणी रे, उपनय हिये अवधार।
शुद्ध संत साजी नाव सारिखा, तिकै आप तिरैं पर तार॥ १६॥
सांगधारी फूटी नावा सारिखा रे, आप डुबै औरां नैं डबोय।
पत्थर नावा जिसा कह्या पाखंडी, जे तीन सौ तेसठ जोय॥ १७॥
उत्तम तास न आदरै रे, धार्‍या हुवै तौ छोड़णा सुलभ।
सांगधारी फूटी नावा सारिखा, त्यांनैं छोड़णा घणा दुर्ल्लभ॥ १८॥
इम भिक्खु ओलखाविया रे, पाखण्डियां नैं पिछांण।
सूं बुद्धि कहियै स्वाम नी बारु, किहां लग करूं बखांण

ऊंडी तुझ आलोचना रे, तीरथ वच्छल तांम।
शासण नायक स्वाम नैं, करूं बारम्बार सलांम ॥ २० ॥
तंत ढाल षट तीसमी रे, दाख्या स्वाम दृष्टन्त।
भिक्खु भजन थी भय मिटै, अरु जय जश सुख उपजंत ॥ २१ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, टोला वाला ताहि।
शीत उष्ण अति कष्ट सहै, कठिण लोच कराय ॥ १ ॥
तप छठ अठमादिक तपै, सखरी करणी सोय।
यूँही जासी यां तणी, एहना फल अवलोय ॥ २ ॥
स्वाम कहै इक सेठ री, पड्यौ देवालौ पेख।
तुरत लाख रुपयां तणौ, बिगड़ी बात विशेष ॥ ३ ॥
पछै एक पइसा तणौ, आंण्यौ तेल तिवार।
पइसौ तसुं दीधौ परहौ, तौ पइसा रौ साहुकार ॥ ४ ॥
रुपया रा गहुं आंणनैं, रुपीयौ पाछौ दीध।
तौ साहुकार रुपीया तणौ, प्रत्यक्ष ते प्रसिद्ध ॥ ५ ॥
इम पइसा रुपीया तणौ, साहुकार अवधार।
पिण देवालौ लाख नौं, तेह नौं नहीं साहुकार ॥ ६ ॥
ज्यूं पंच महाव्रत पचखनैं, आधाकर्म्मी आदि।
थाप निरन्तर दोष नीं, मेट दीधी मर्य्याद ॥ ७ ॥
औ देवालौ अति घणौ, लोच तपादिक कष्ट।
तेह थी किण विध उतरै, साधपणा रौ भिष्ट ॥ ८ ॥
मास खमणादिक पचखनैं, शुद्ध पाल्यां तसु साहुकार।
पिण महाव्रत भाग्यां तेहनौं, साहुकार मत धार ॥ ९ ॥

ढाल : ३७

[विछिया नीं—ए देशी]

किणहिक स्वाम भणी कह्यौ, सांगधार्यां रै साधू रौ सांग रे।
उन्हौ पाणी धोवण ऐ पिण आचरै, मान मूंकी रोटी खावै मांग रे।
तुम्हें सुणज्यो दृष्टन्त स्वामी तणा ॥ १ ॥
वर्षा वर्षे लोच करावता, शीत तापादि सहे साक्षात रे।
विहार नव कलपी विचरता, तौ ऐ क्यूं नहीं साध कहात रे ॥ २ ॥
स्वाम कहै तुम्हें सांभलौ, थिर चारित्र इम किम थाय रे।
जैहवी बणी बणाई ब्राह्मणी, तिणरा साथी ऐ पिण कहिवाय रे ॥ ३ ॥

कुंण बणी बणाई ब्राह्मणी, तव स्वाम कहै सुविशेष रे।
मेरां री इक गांम घाटा मझै, उठै उत्तम घर नहीं एक रे॥ ४ ॥
महाजन आवै सो दुख पावै घणा, जब कह्यौ मेरां नैं जांम रे।
अठै उत्तम घर नहीं एक ही, तिणसूं दुख पावां छां तांम रे॥ ५ ॥
घणी लागत देवां छां थां भणी, उत्तम घर विण इहां अवधार रे।
पांणी रोटी तणी अबखाई पड़ै, शुद्ध राखौ उत्तम घर सार रे॥ ६ ॥
जद मेरां शहर माहैं जायनैं, महाजनां नैं कह्यौ मन ल्याय रे।
उत्तम बसौ म्हांरौ गांम आयनैं, तिणरौ ऊपर राखसां ताय रे॥ ७॥
इम कह्यौ पिण कोई आयौ नहीं, एक ढेढां रौ गुरु मुऔ आंम रे।
तिणरी स्त्री गुरुड़ी तदा, तिणनैं मेरां आंणी तिण ठांम रे॥ ८ ॥
बणाई मेरां तिणनैं ब्राह्मणी, ब्राह्मणी जिसा वस्त्र पैहराय रे।
जागां कराय धवल राखी जिहां, तुलसी रौ थांणौ रोप्यौ ताहि रे॥ ९ ॥
दोय रुपयां रा गेहुं आणे दिया, अधेली रा मूंग दिया आंण रे।
एक रुपया तणौ घृत आपियौ, बदै मेरा तेहनैं इम वाण रे॥ १० ॥
पइसा लेई महाजन रा पासा थकी, आवै ज्यांनैं रोटी कर आप रे।
वर्ण पूछ्यां बतावजे ब्राह्मणी, थिर जाति फलांणी थाप रे॥ ११ ॥
जाता आता महाजन आवै जिके, उत्तम घर पहिछांण रे।
ब्राह्मणी रौ घर मेरा बतावता, इम काल कितोयक जांण रे॥ १२ ॥
इतरै चार व्यापारी आविया, घणा कोसां रा थाका ते गांम रे।
आय पूछ्यौ मेरां नैं इण तरै, उत्तम घर बतावौ आंम रे॥ १३ ॥
तब मेरा कहै जावौ तुम्हे, तिण ब्राह्मणी रै घर तास रे।
जद आया व्यापारी चारूं जणा, प्रगट वचन कहै तिण पास रे॥ १४ ॥
बाई रोटियां कर रूड़ी रीत सूं, झट घाल थाका आया जांण रे।
जद इण गोहां री रोट्यां जाडी करी, सुरहौ घृत घाल्यौ सुविहांण रे॥ १५ ॥
कीधी दाल तिणमैं घाली काचरयां, जीमवा लागा चारूंई जांण रे।
करड़ी भूख रोट्यां पिण करकड़ी, बणिक जीमता करै वखांण रे॥ १६ ॥
रांधण देखी फलांणा गाम री, अमकड़िया नगर नीं अवलोय रे।
रांधणा देखी बड़ा बड़ा शहर नीं, इसड़ी चतुराई नहिं देखी कोय रे॥ १७ ॥
कहै देखौ रे दाल किसी करी, अति चोखी है स्वाद अत्यन्त रे।
माहैं काचरियां किसी स्वाद है, घणी करै प्रशंसा जीमंत रे॥ १८ ॥
जद आ बोली बीरां बात सांभलौ, तीखण मिली हूंती तौ तांम रे।
खबर पड़ती काचरियां रे स्वाद री, पिण ते मिली नहिं अभिरांम रे॥ १९ ॥

जद यां पूछचौ तीखण कहै केहनैं, तब आ कहै तीखण छूरीतांम रे।
काचरियां बनावा कारणैं, छूरी मिली नहीं अभिरांम रे ॥ २० ॥
तब यां पूछची छूरी तोनैं नां मिली, तौ किणसूं बनारी तेह रे।
आ कहै दांतां सूं बनार २ नैं, इण दाल मांहै न्हांखी एह रे ॥ २१ ॥
तब यै बोल्या तड़कनै हे पापणी, म्हांनैं भिष्ट किया तैं जिमाय रे।
इम कहिनै लागा थाली पटकवा, तब आ बोली उतावली ताय रे ॥ २२ ॥
रे वीरां थाली भांगजो मती, अमकड़िया डूंमरी आंणी मांग रे।
जद ऐ बोल्या हे पापणी, तूं कुंण जात री कुंण तुझ सांग रे ॥ २३ ॥
जद आ बोली वीरां बात सांभलौ, बणी बनाई ब्राह्मणी छूं ताहि रे।
असल जात री तौ गुरुड़ी अछूं, मेरां ब्राह्मणी दीधी बणाय रे ॥ २४ ॥
धुर सूं बात सारी कही मांड़नैं, सांभलनैं च्यारूंई पछतात रे।
भिक्खु कहै साथी ब्राह्मणी तणा, सांगधारी सर्व साक्षात रे ॥ २५ ॥
ऊन्हौं पाणी धोवण नित्य आचरै, पिण समकित चारित्र नहीं काय रे।
तिणसूं बणी बणाई ब्राह्मणी, तिणरा साथी कह्या इण न्याय रे ॥ २६ ॥
दृष्टन्त स्वाम इसौ दियौ, शुद्ध हेतु मिलाया सार रे।
भारीकर्म्मां सुण द्वेष माहैं भरै, चित्त पांमैं उत्तम चिमत्कार रे ॥ २७ ॥
स्वाम सावद्य निर्वद्य शोधिया, व्रत अव्रत जूआ बताय रे।
आज्ञा अण आगन्या ओलखायनैं, दीधी दान दया दीपाय रे ॥ २८ ॥
भिक्खु स्वाम प्रगटिया भरत मैं, आप कीधी अधिक उद्योत रे।
ऐसौ उपगारी कुंण इण काल मैं, जिन ज्यूं घण घट घाली जोत रे ॥ २९ ॥
इसा उपगारी गुण आगला, त्यांरा दृष्टन्त सांभल तंत रे।
हलुकर्म्मी हरष हिवड़ै धरै, बहुलकर्म्मी री मुंह बिगड़ंत रे ॥ ३० ॥
तंत ढाल कही सात तीसमी, स्वामी मेल्या है न्याय साक्षात रे।
रखे शंका कंखा भ्रम राखनैं, मत पडिवजजो मिथ्यात रे ॥ ३१ ॥

दुहा

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, पाखंडी पहिछांण।
सूत्र सार जिन वच सरस, बाचै सखर बखांण ॥ १ ॥
स्वाम कहै तुम्हे सांभलौ, बाचै सूत्र बखांण।
जीव खवायां पुण्य मिश्र, छेहड़ै इम करै छांण ॥ २ ॥
जिम बायां राती जगै, संसार लेखै जान।
गीत भला भला गावती, तीखै मन कर तांन ॥ ३ ॥

गीता छेहड़ै गावती, मोरवी मारु मन्द।
ज्यूं प्रथम सूत्र प्रगमायनैं, छेहड़ै सावद्य फन्द ॥ ४ ॥
दीपावै सावद्य दया, दाखै सावद्य दांन।
मोरवा मारु नीं परे, सर्व बिगाड़ै तान ॥ ५ ॥
किणहिक भिक्खु नें कह्यौ, बुद्धिहीन इक बाल।
भाठा सूं कीड्यां भणी, कचरंतौ तिण काल ॥ ६ ॥
उणरौं पथर लै उरहौ, खोमी करी कषाय।
कहौं तिणनें का सूं थयौं, जद स्वाम कहै सुण वाय ॥ ७ ॥
तसु पासा थी खोसलै, तसु कर मैं स्यूं आत।
तब ओ बोल्यौ उण तणैं, भाठौ आयौ हाथ ॥ ८ ॥
भाखै पूज विचार लौ, धर्म्म जिन आज्ञा मांहि।
जबरी कौ जिण नां कह्यौ, इम सर्व वस्तु गिणाय ॥ ९ ॥

ढाल : ३८

[सत्य कोई मत राखज्यो—ए देशी]

किणहिक भिक्खु नैं कह्यौ, टोला वाला ताह्यो रे।
आप साध न सरधौ यां भणी, तौ साध कहौ किण न्यायो रे।
तंत दृष्टन्त भिक्खु तणा ॥ १ ॥
ऐ साध अमकड़िया टोला तणा, फलांणा टोला रा साधो रे।
इम साध कही बैण उचरयां, सत्य कै मृषावादो रे ॥ २ ॥
स्वाम कहै किणहि शहर मैं, किरियावर किणरै थायो रे।
नैहता फेरें नगर मैं, वदै इसी पर वायो रे ॥ ३ ॥
अमकड़िया रै नैहतौ अछै, षेमा साहरा घर रौ जांणौ रे।
अमकड़ियां रै नैहतौ अछै, षेमा साहरा घर रौ पिछांणौ रे ॥ ४ ॥
देवालौं त्यां काढे दियौ, तौ पिण बाजै साहो रे।
खेमौं देवाल्यौ बाजै नहीं, द्रव्य निक्षेपौ देखायो रे ॥ ५ ॥
ज्यूं संजम नहीं पालै जिके, नांम धरावै साधो रे।
द्रव्य निक्षेपै साधू कह्यां, मूल न मृषावादो रे ॥ ६ ॥
लकड़ी रा घोड़ा भणी, अश्व कह्यां दोष नांह्यो रे।
नाम असद्भाव थापना, कहिण मात्र कहिवायो रे ॥ ७ ॥
किणहि भिक्खु नैं कह्यौ, टोला वाला मैं ताह्यो रे।
कहौ साध यामैं कवण छै, असाधु कुंण यां मांह्यो रे ॥ ८ ॥

स्वाम कहै इक शहर मैं, आंख आखम पूछै वायो रे।
नागा कितरा इण नगर मैं, कितरा ढकिया कहिवायो रे ॥ ६ ॥
वैद विचक्षण इम वदै, औषध तुम आंख्यां माह्यों रे।
घाल सूझतौ तो भणी, हूं कर देसूं ताह्यो रे ॥ १० ॥
नागा ढकिया तूं निरखलै, वैद बोल्यौ इम वायो रे।
स्वाम कहै साध असाध री, ओलखणा देस्यां बतायो रे ॥ ११ ॥
पछै साध असाध तूं परखलै, कहै नाम लेई कोयो रे।
कजियौ पहिली तिणसूं करै, जिणसूं कैहणौ अवसर जोयो रे ॥ १२ ॥
किणहिक बलि इम पूछियौ, कुंण यांमें साध असाधो रे।
स्वाम कहै तुम्हें सांभलौ, त्रिरुओ तज विषवादो रे ॥ १३ ॥
संजम लेई पालै सही, ते साधु सुखदायो रे।
महाव्रत आदरै मूंकदै, असाधु ते असुहायो रे ॥ १४ ॥
दृष्टन्त भिक्खु दियो इसौ, किणहिक पूछ्यौ किवारो रे।
साहुकार कुण शहर मैं, कुण है देवाल्यो विकारो रे ॥ १५ ॥
लेई पाछौ देवै लोक मैं, साहुकार कहै सोयो रे।
दैणो न देवै देवालियौ झगड़ा, उलटा मांड़ै जोयो रे ॥ १६ ॥
ज्यूं संजम लेई पाल्यां साध है, दोष थाप्यां नहीं साधो रे।
अथवा डंड न आदरै, बरतां नैं देवै बिराधो रे ॥ १७ ॥
भिक्खु इसा न्याय भाषिया, स्वाम बिना कुण शोधै रे।
पूज गुणां नौ पिंज्जरौ, पूज भविक प्रतिबोधै रे ॥ १८ ॥
भिक्खु है दीपक भरत मैं, भिक्खु भलौ भव तारण रे।
साहेब भिक्खु साचलौ, भिक्खु है विघ्न विडारण रे ॥ १६ ॥
याद आयां हियौ उलसै, अन्तर्य्यामी आपो रे।
स्मरण सूं सुख संपजै थिर, चित्त म्हैं करी थापो रे ॥ २० ॥
स्वाम जिसौ इण भरत मैं, दीन दयाल न दूजौ रे।
भविक जीवां तुम्हे भाव सूं, पवर भिक्खु गुण पूजौ रे ॥ २१ ॥
तन मन सेती तुझ भणी, हृदय ओलेख हरख्यौ रे।
आशा पूरण आप हौ, म्हैं तौ प्रत्यक्ष भिक्खु परख्यौ रे ॥२२॥
आखी ढाल अड़नीसमी, समरयौ है भिक्खु सनूरौ रे।
जय जश सम्पत्ति मिलै, दालिद्र दुःख गया दूरो रे ॥ २३ ॥

दुहा

उपयोग री खांमी ऊपरै, दियौ स्वाम दृष्टन्त।
निरमल नीकी नीत सूं, शुद्ध जांणौ नमु संत ॥ १ ॥
कुणकौ देखी गुरु कह्यो, ए कुणकौ शिष्य जोय।
ऊपर पग दीजो मति, तहत कियौ शिष्य सोय ॥ २ ॥
थोड़ी वार थी शिष्य तिकौ, फिरतौ फिरतौ आय।
पग दीधौ तिण ऊपरै, तब गुरु बोल्या नाहि ॥ ३ ॥
तुझ म्हैं वरज्यौ थो तदा, मत दीजो पग साक्षात।
शिष्य कहै उपयोग शुद्ध, चूकौ स्वामी नाथ ॥ ४ ॥
बीजी बेलां शिष्य बलि, फिरतां फिरतां फेर।
पग दीधौ कण ऊपरै, गुरु निषेध्यौ घेर ॥ ५ ॥
आगै तुझ वरज्यौ हुंतौ, कहै शिष्य कर जोड़।
महाराज उपयोग मुझ, चूक गयौ इण ठौड़ ॥ ६ ॥
गुरु कहै अबकै चूकियौ, तो काल विगैग त्याग।
फिरता फिरता शिष्य फिरी, बलि चूक्यौ ते जाग ॥ ७ ॥
इम बार बार खांमी पड़ी, ते विगय टालण थी ताहि।
बलि कण ऊपर पग दैण थी, राजी नहिं मन मांहि ॥ ८ ॥
कर्म्म योग उपयोग मैं, खांमी नौ अधिकाय।
पिण नीत शुद्ध अरु थाप नहि, साधपणौ ते न्याय ॥ ९ ॥

ढाल : ३९

[जाणौ छै राव तु बात—ए देशी]

स्वाम भिक्खु नैं सोय ए, किण ही पूछा करी इम जोय ए।
साध साधवियां रै माहि ए, अवगुण दीसै अधिकाय ए ॥ १ ॥
ज्यांरै नहीं इर्या री ठिकांण ए, भाषा सुमति मैं पिण दिसै हांण ए।
केई करै चालंता बात ए, सून्य उपयोग री साक्षात ए ॥ २ ॥
सुमति एषणादिक मैं सोय ए, अधिक फेर दिसै अवलोय ए।
तीन गुप्त कहीं तंतसार ए, अति हि दिसै है फरक अपार ए ॥ ३ ॥
कैकांरी प्रकृति करड़ी धार ए, छेड़वियां सूं करै फूंकार ए।
मान माया लोभ मैं मंत ए, किम कहियै तिणांनै संत ए ॥ ४ ॥
करड़ी प्रकृति देख्यां साध ए, कोई बोल्यौ वचन विराध ए।
यांमैं साधपणा रौ न अंश ए, अवगुण री करां केम प्रशंस ए ॥ ५ ॥

वर बोल्या है भिक्खु वाय ए, सुण दृष्टान्त एक शोभाय ए ।
एक साहुकार अवधार ए, कराई हवेली सुखकार ए ॥ ६ ॥
रुपयां हजारां लगाविया ए, जाली झरोखा अधिक झुकाविया ए ।
ओपै मालिया महिल अनेक ए, शुद्ध शोभता सखर संपेख ए ॥ ७ ॥
चारु रूप विविध चित्रांम ए, अति कोरणियां अभिरांम ए।
सुखदाई रूप सुविहांण ए, पुतलियां मनहरणी पिछांण ए ॥ ८ ॥
आवै लोक अनेक ए, देख देखनैं हरषै विशेष ए ।
नरनारी हजारां आवता ए, घणा देख देख गुण गावता ए ॥ ९ ॥
महिल मालिया महा श्रीकार ए, तिके जू जूआ देखै तिवार ए ।
कहै देखौ कोरणियां तांम ए, चतुर रूप रच्या चित्रांम ए ॥ १० ॥
साहुकारादिक सहु आय ए, ऐतौ सगलाई रह्या सराय ए ।
जठै भंगी देखण आयौ जान ए, धुन सेतखांना सूं ध्यांन ए ॥ ११ ॥
महिल मालिया सांहमी न दिष्ट ए, जाली झरोखा सूं नहीं इष्ट ए ।
तिणरै सेतखांनां सूं काम ए, तिणसूं तेहिज छै परिणांम ए ॥ १२ ॥
कहै सेतखानौं तौ आछौ नहीं ए, सेठ सुणतां अवगुण बोलै सही ए ।
जब सेठ कहै सुण वाय ए, ताड़तखांनौं किण वासतै ताय ए ॥ १३ ॥
सेतखांनौं आछौ किम थाय ए, महा नीच वस्तु इण माहि ए ।
निन्दनीक वस्तु ए निदांन ए, तूं पिण नीच तिण सूं थारौ ध्यान ए ॥ १४ ॥
झरोखा जाल्यां आदि दे जांण ए, प्रगट आछा है अधिक प्रदान ए ।
स्वाम कहै सुविचार ए, कहूं उपनय ए अवधार ए ॥ १५ ॥
संजम तप तौ हवेली समांन ए, सेतखांना ज्यूं अवगुण जान ए।
साहुकारादिक देखणहार ए, ते सम उत्तम जीव उदार ए ॥ १६ ॥
त्यांरी दिष्ट संजम ऊपर तांम ए, पिण अवगुण सूं नहीं काम ए ।
गुणग्राही उत्तम गुणवंत ए, तेतौ संजम तप जांणैं तंत ए ॥ १७ ॥
संजम गुण जांणैं शुद्ध मांन ए, पिण अवगुण सूं नहीं ध्यान ए ।
छिद्रपेही भंगी सम छार ए, संजम नैं नहीं जांणैं लिगार ए ॥ १८ ॥
छट्ठो गुणठांणौ इण विध जाय ए, त्यांनैं ते पिण खबर न काय ए ।
छट्ठौ गुणठांणौ इम ठहराय ए, ते पिण जांणपणौ नहीं ताहि ए ॥ १९ ॥
अवगुण नैं करै अगवांण ए, महानिन्दक मातंग मांण ए ।
कहै. अवगुण आछा नांहि ए, तिणनैं कैहिणौ इणरौ कहिसी कांय ए ॥ २० ॥
अवगुण तौ कदेही आछा न होय ए, ये तौ प्रत्यष ही अवलोय ए ।
ये तौ निंदवां जोग निषेध ए, इणमैं तौ कांई काढ्यौ भेद ए ॥ २१ ॥

पिण संजम गुण इण माहिं ए, तिणसूं वंदवा जोग कहाय ए ।
तू मुंहढै आणै अवगुण बार बार ए, थारै कुमति हिया मैं अपार ए ॥ २२ ॥
दीधौ हवेली री दृष्टन्त ए, भिक्खु भविक नीं भांजण भ्रान्त ए ।
स्वामी सूत्र न्याय श्रीकार ए, त्यांरा जांण भिक्खु तंतसार ए ॥ २३ ॥
औतौ दियो भिक्खु दृष्टन्त ए, त्यांरा हेतु नैं पुष्ट करंत ए ।
सूत्र साख कहै जय सार ए, तिणरौ सांभलजो विस्तार ए ॥ २४ ॥
कह्यौ सूत्र भगवती माहि ए, शतक पचीस मैं सुखदाय ए ।
उत्तर गुण पड़िसेवी पिछांण ए, बुकस नियंठौ श्री जिन वांण ए ॥ २५ ॥
जगन दोय सौ कोड़ ते जांन ए, नहीं विरह कदे नहि हांनि ए ।
पंचम पद छट्ठै गुण ठांण ए, चारित्र रा गुण लेखै पिछांण ए ॥ २६ ॥
मूल गुण नैं उत्तर गुण माहिं ए, दोष लगावै ते दुखदाय ए ।
पड़िसेवण कुशील पिछांण ए, जगन दोय सौ कोड़ ते जांण ए ॥ २७ ॥
नहीं बिरह एह थी ओछा नाहि ए, ये पिण छट्ठै गुणठांणैं कहिवाय ए ।
यांमैं चारित गुण श्रीकार ए, तिणसूं वंदवा योग विचार ए ॥ २८ ॥
पुलाग नेयंट्ठौ पिछांण ए, लब्धि फोड्यां कह्यौ जिन जांण ए ।
थिति अन्तर मुहूर्त्त थाय ए, लब्धि नीं थिति तौ अधिकाय ए ॥ २९ ॥
विरह उत्कृष्ट संखेज वास ए, पछै तौ अवश्य प्रगटै बिमास ए ।
यांमैं चारित्र गुण श्रीकार ए, तिणसूं वंदवा योग विचार ए ॥ ३० ॥
कषय कुशील नेयंठा माहि ए, पांच शरीर छः लेश्या पाय ए ।
षट समुदघात कहिवाय ए, इणरौ पेटौ भारी है अथाय ए ॥ ३१ ॥
बहु फोड़वै लब्धि प्रकाश ए, मोह कर्म्म उदय थी बिमास ए ।
पिण चारित्र गुण श्रीकार ए, तिण सूं वंदवा योग विचार ए ॥ ३२ ॥
पुलाक बुकस पडिसेवेणा पेख ए, दिल सूं कषाय कुशील देख ए ।
यांमैं दोष तणौ डंड जोय ए, बले दोष री थाप न कोय ए ॥ ३३ ॥
तिण कारण चारित्र चीज ए, दोष थाप्यां जावै गुण छीज ए ।
जितरौ डंड तितरौ चर्ण जाय ए, दोष थाप्यां सर्व बिललाय ए ॥ ३४ ॥
हीण वृद्धि पजवां मैं होय ए, प्रगट शतक पचीसमौं जोय ए ।
फेर अनन्त गुणौ पजवां मांहिं ए, तौ पिण चारित्र गुण सुखदाय ए ॥ ३५ ॥
दशमैं ध्ययन ज्ञाता मैं दयाल ए, कह्यौ चन्द दृष्टन्त कृपाल ए ।
एकम आदि पूनम चन्द पेख ए, बलि विद पख चन्द विशेष ए ॥ ३६ ॥
ते सम संत समृद्धि ए, यति धर्म दश मैं हीन वृद्धि ए ।
क्षान्ति आदि ब्रह्मचर्य्य माहि ए, एकम थी पूंनम तांई गिणाय ए ॥ ३७ ॥

इम बिद पख चन्द समांन ए, क्षमादिक गुण मैं फेर जांन ए।
किहां एकम किहां पूंनम चन्द ए, दशूं धर्म एम वृद्धि मंद ए ॥ ३८ ॥
चौथे ठाणैं चौभंगी उपन्न ए, शील सम्पन्न नो चरित्र सम्पन्न ए।
दूजौ शील सम्पन्न न देख ए, चारित सहित कह्यौ विशेष ए ॥ ३९ ॥
तीजौ शील सम्पन्न स्वभाव ए, बिले[1] चारित्र सम्पन्न साव ए[2]।
चौथौ शील चारित नहीं तांम ए, शील शीतल स्वभाव नौं नांम ए ॥ ४० ॥
शीतल प्रकृति तौ नहि कोय ए, दूजै भांगै चारित कह्यौ जोय ए।
वर न्याय हियै सुविचार ए, प्रकृति देखी म भिड़कौ लिगार ए ॥ ४१ ॥
निशीथ बीस मैं न्हाल ए, बार बार रौ डंड विशाल ए।
इम सांभल छांड़ौ अनीत ए, राखौ सूत्र नी प्रतीत ए ॥ ४२ ॥
भारीकर्मा सुणी भिड़काय ए, बोलै ऊंधमति इम वाय ए।
करै ढीली परूपणा काज ए, हिवै दोष तणी कांई लाज ए ॥ ४३ ॥
इम बोलै मूढ़ गिवार ए, ज्यांरा घट मांहैं घोर अन्धार ए।
पिण इतरी न जांणैं साख्यात ए, सर्व कही सूतर नीं बात ए ॥ ४४ ॥
स्थिर राखणा समगत सार ए, अति मेटण भ्रम अन्धार ए।
आगम रहीस बतावै अमांम ए, तेतौ एकन्त तारण कांम ए ॥ ४५ ॥
अति मांनणौ तसु उपगार ए, थिर समगत राखणहार ए।
रह्यौ गुण मांनणौ तौ ज्यांहीज ए, उलटी क्यूं करौ त्यां पर खीज ए ॥ ४६ ॥
परम दुर्ल्लभ समगत पाय ए, रखे शंका राखौ मन माहिं ए।
शंका राख्यां सूं समकित जाय ए, तिणसूं बार बार समझाय ए ॥ ४७ ॥
पज्जवां नैं हिण पाडै कोय ए, बुकस पड़िसेवणादिक जोय ए।
तौ तिणरी तिणनैं मुश्कल ए, पिण पोतै क्यूं घालौ सल ए ॥ ४८ ॥
खोड़ उंठ री ऊंठनैं होय ए, ज्यूं पज्जवा हींण तसु सोच जोय ए।
न फिरै घट्टौ गुणठांण ए, तठा तांई असाध म जांण ए ॥ ४९ ॥
श्रावक कह्या मात तात समांन ए, पवर चौथे ठांणैं पहिछांन ए।
हेत सूं कहै रूड़ी रीत ए, पिण अंतरंग मैं अति प्रीत ए ॥ ५० ॥
स्वाम भिक्खु तणैं प्रसाद ए, पांमी समकित चरण समाधि ए।
दीधौ हवेली रौ तौ दृष्टन्त ए, संपेख थकी चित्त शांत ए ॥ ५१ ॥
त्यांरा प्रसाद थी अनुसार ए, साखां न्याय कह्या जय सार ए।
सूत्र मैं जिम न्याय बताविया ए, लेश मात्र अणहुंता न लाविया ए ॥ ५२ ॥

१—बिले = नाश

२—पिण चारित्र तणो अभाव ए। —ऐसा भी पाठ है।

धिन धिन भिक्खु स्वाम ए, सास्या घणा जणां रा कांम ए।
त्यांरी आमता राखौ तहनीक ए, तिणसूं होवै मोक्ष नजीक ए ॥ ५३ ॥
स्वामी दान दया दीपाय ए, आज्ञा अण आज्ञा ओलखाय ए।
ज्यांरा गुण पुरा कह्या न जाय ए, प्रत्यष पार्ग भिक्खु पाय ए ॥ ५४ ॥
स्वामी याद आवै दिन रैण ए, चित्त में अनि पांमें चैन ए।
ऐसा भिक्खु औजागर आप ए, स्मरण सूं मिटै सोग संताप ए ॥ ५५ ॥
नव तीसमी ढाल निहाल ए, भ्रम भंजण समय संभाल ए।
हवेली रो हेतु कह्यौ स्वाम ए, सूत्र साख जीत कही नांम ए ॥ ५६ ॥

दुहा

विचरत पूज्य पधारिया, पादु शहर मझार।
शिष्य हेम साथै सखर, संत अवर पण सार ॥ १ ॥
ऐक भायौ इह अवसरै, भिक्खु भणी भणेह।
हेम चदर हाथे करी, अधिकी दीसै ऐह ॥ २ ॥
चतुर स्वाम ते चदर ले, माप दिखायौ मांन।
लांबपणैं चौड़ापणैं, अधिक नहीं उनमांन ॥ ३ ॥
पूज कहै देखौ प्रगट, पछैवडी परमांण।
ते कहै अधिकी तौ नहीं, ऐ तौ छै उनमांन ॥ ४ ॥
तूं अधिकी कहींतौ तदा, तद ते वोल्यौ तांम।
मुझ झूठी शंका पड़ी, तब घणौ निषेध्यौ स्वाम ॥ ५ ॥
चार अंगुल रै वासतै, संजम खोवां सार।
मुझ भौला जाण्यां इसा, आंण्यौं भ्रम अपार ॥ ६ ॥
ऐती प्रतीत न तो भणी, तौ मारग रै माहि।
पय काचौ पीवै तदा, तो तोनैं खबर न काय ॥ ७ ॥
इत्यादिक वचने करी, अधिक निषेध्यौ आप।
कर जोडीनैं ते कहे, कुड़ी शंका किलाप ॥ ८ ॥
खरी इण पर सीख दै, खोड मिटावण कांम।
फिर शंका तसु ना पड़ी, पवर स्वाम परिणांम ॥ ९ ॥

ढाल : ४०

[जाणपणं जग दोहेलो—ए देशी]

स्वाम भिक्खु गुण सागरु रे लाल, खरा भिक्खु खिम्यावान सुखकारी रे।
संवली वेवै स्वामजी रे लाल, सुणौ सूरत दे कांन ॥ सु० ॥
सुणजो गुण स्वामी तणा रे लाल ॥ १ ॥

शोभाचंद सेवक हुंतौ रे लाल, नांडोलाइ नौं नेहाल ॥ सु० ।
आयौ पाली में एकदा रे लाल, तिणनैं कहै पाखंडी ते काल । सु० ॥ २ ॥
तूं विश्वर जोड़ भीखणजी तणा रे लाल, तोनैं देसां बहु रुपया तांम । सु० ।
भीखणजी सूं बातां कर जोड़सूं रे लाल, इम कहै शोभाचन्द आंम । सु० ॥ ३ ॥
इम कहि खैरवे आवियौ रे लाल, जिहां पूज विराज्या जांण । सु० ।
ऊभौ भिक्खु रै आगलै रे लाल, वंदणा कीधी आंण । सु० ॥ ४ ॥
पूज कहै वच परवड़ा रे लाल, तुझ नांम शोभाचन्द ताय । सु० ।
शोभाचन्द कहै हां सही रे लाल, एहिज नांम कहाय । सु० ॥ ५ ॥
भिक्खु बलि तसु इम भणै रे लाल, सुत रौडीदास नौं सोय । सु० ।
सेवक कहै स्वामी भणी रे लाल, सत वच तुझ अवलोय । सु० ॥ ६ ॥
बलि शोभाचन्द बोलियौ रे लाल, आप आछी न कीधी एक । सु० ।
उथापौ श्री भगवांन नैं रे लाल, विरुई बात विशेष । सु० ॥ ७ ॥
बलता भिक्खु बोलिया रे लाल, म्हें क्यांनैं उथापां भगवांन । सु० ।
म्हें भगवंत रा वचनां थकी रे लाल, घर छोड़ साधु थया जाण । सु० ॥ ८ ॥
बलि शोभाचन्द बोलियौ रे लाल, आप देवरौ दियौ उथाप । सु० ।
जाब देवै स्वामी जुगत सूं रे लाल, चतुर सुणै चुपचाप । सु० ॥ ९ ॥
हजारां मण पत्थर देवल तणौ रे लाल, कहौ उथापियै केम । सु० ।
म्हेतौ सेर दो सेर प्रयोजन विना रे लाल, आघौ पाछो करां नहीं एम । सु० ॥ १० ॥
फेर शोभाचन्द पूछतो रे लाल, आप जिन प्रतिमा दी उथाप । सु० ।
प्रतिमा नैं कहौ पाषांण छै रे लाल, ए आछी न करी आप । सु० ॥ ११ ॥
स्वाम कहै तूं सांभल रे लाल, म्हे प्रतिमा उथापां किण कांम । सु० ।
म्हारै त्याग है झूठ बोलण तणा रे लाल, इणरौ न्याय कहूं अभिराम । सु० ॥ १२ ॥
सोना री प्रतिमा भणी रे लाल, सोना री प्रतिमा कहंत । सु० ।
रूपा री प्रतमा भणी रे लाल, म्हे रूपा नी कहां धर खंत । सु० ॥ १३ ॥
सर्वधातु नीं प्रतिमा भणी रे लाल, सर्वधातु नीं कहां सोय । सु० ।
पाषांण री प्रतिमा भणी रे लाल, कहां पषांण री जोय । सु० ॥ १४ ॥
पाषांण री प्रतिमा भणी रे लाल, सोना री कह्या लागै झूठ । सु० ।
तिणसूं कहां छां प्रतिमा पाषांण री रे लाल, म्हे तौ दीधी है झूठ नैं पूठ । सु० ॥ १५ ॥
शोभाचन्द इम सांभली रे लाल, हर्ष्यौ घणौ हिया मांय । सु० ।
इसड़ा उत्तम महा पुरुषां तणा रे लाल, किम अवगुण कहिवाय । सु० ॥ १६ ॥
गुण चाहिजै ए पुरुष ना रे लाल, बारु इसड़ी विचार । सु० ।
दोय छन्द जोड्या दीपता रे लाल, सांभलतां सुखकार । सु० ॥ १७ ॥

स्वामी नैं छन्द सुणायनैं रे लाल, पाछौ आयौ पाली मांहि । मु० ।
पाखंडमतियां पूछियौ रे लाल, थैं छन्द बणाया कै नांहि । मु० ॥ १८ ॥
ते कहै छन्द बणाविया रे लाल, पाखण्डमति बोल्या फेर । मु० ।
भीखणजी रा श्रावकां रै आगलै रे लाल, छन्द कहिजे होय सेर । मु० ॥ १६ ॥
स्वामीजी रा श्रावकां कनैं रे लाल, आया सेवक लेई साथ । मु० ।
पाखण्डमति कहै श्रावकां भणी रे लाल, वारु सुणौ सुभ बात । मु० ॥ २० ॥
सेवक औ निरापेखी सही रे लाल, अदल कहिसी अवलोय । मु० ।
थांरे म्हारै श्रद्धा पक्ष नी रे लाल, इणरै तौ पक्ष नहिं कोय । मु० ॥ २१ ॥
शोभाचन्द नैं इम कहे रे लाल, भीखणजी साधु किसाएक । मु० ।
शुद्ध छै किंवा अशुद्ध छै रे लाल, तब सेवक कहै सुविशेष । मु० ॥ २२ ॥
उणरी श्रद्धा उणां केनें रे लाल, आंपांरी आंपां पास । मु० ।
तौ पिण पाखंडमतिया कहै रे लाल, तूं तौ निशंक प्रकाश । मु० ॥ २३ ॥
जब शोभाचन्द कहै सांभलौ रे लाल, गुण अवगुण भीखणजी मैं होय । मु० ।
कहिसूं मोनैं दरसी जिसा रे लाल, तब ऐ कहै दरशै जिसा तोय । मु० ॥ २४ ॥
शोभाचन्द सेवक इम सांभली रे लाल, शुद्ध कह्या त्यां छन्द श्रीकार । मु० ।
ते छन्द दोनूंई गुण तणा रे लाल, सांभलजो सुखकार । मु० ॥ २५ ॥

शोभाचंद सेवक कृत छन्द

अनभय कथणी रहिणी करणी अति, आठूंई कर्म जीपै अधिकाई ।
गुणवंत अनंत सिद्धन्त कला गुण, प्राक्रम पौंच विद्या पुण भारी ।
शास्त्र सार बतीस जांणैं सहु, केवलज्ञानी का गुण उपगारी ।
पंचेन्द्री कूं जीत न मांनत पाखंड, साध मुनिन्द्र बड़ा सतधारी ।
साधु मुक्ति का वास वंदा सहु, भीखम स्वाम सिद्धन्त है भारी ॥ १ ॥
स्वामी परभव कै स्वार्थ साच है, वांचै सूत्र कला विस्तारी ।
तेराहि पंथ साचा तिहूं लोक मैं, नाग सुरेन्द्र नमैं नर नारी ।
सुणियै सत्य बात सिद्धन्त सुज्ञान की, बहुत गुणी करणी बलिहारी ।
पृथ्वी कै तारक पंचम आरा मैं, भीखम स्वाम का मारग भारी ॥ २ ॥

ढाल तेहिज

शोभाचन्द छंद कह्या इसा रे लाल, सांभल ने गया सरक । मु० ।
मन मांहैं मुर्भाणा घणा रे लाल, स्वामीजी रा श्रावक होय गया गरक । मु० ॥ २६ ॥
पूज खिम्या रा प्रताप सूं रे लाल, पाड़ी पाखंडियां री आब । मु० ।
ऐसा भिक्खु गुण आगला रे लाल, सुजश विसतरियौ सताब । मु० ॥ २७ ॥

ऊंडी पूज आलोचना रे लाल, बारु बुद्धि ना जाब। सु०।
धोरी धर्म तणी धूरा रे लाल, दियौ पाखंड मत दाब। सु० ॥ २८ ॥
अवतरिया इण भरत में रे लाल, खरै मारग रह्या खेल। सु०।
सूत्र बुद्धि समसेर सूं रे लाल, पाखण्ड मत दियौ पेल। सु० ॥ २९ ॥
स्मरण तुझ गुण संभरूं रे लाल, आवे निश दिन याद। सु०।
रोम रोम सुख रति लहूं रे लाल, पामूं पर्म समाधि। सु० ॥ ३० ॥
चारु ढाल चालीसमी रे लाल, भय भ्रम भंजन स्वाम। सु०।
जय जश सम्पति दायको रे लाल, आशा पूरण आम। सु० ॥ ३१ ॥

दुहा

बूंदी में बूझा करी, सवाई रांमजी सोय।
बखांण सम्पूर्ण हुवां पछै, आप नैंहत मांगौ अवलोय ॥ १ ॥
नूंहत घाल सौगंध करौ, इसड़ी कहौ छौ आप।
कांई आपरै ई तोटौ अछै, ते तोटौ बूरण थाप ॥ २ ॥
सुता परणाई सेठ किण, न्यात जिमाई न्याल।
तोटौ बूरण नैंहत लै, ज्यूं सूं तोटौ तुम भाल ॥ ३ ॥
स्वाम कहै एक सेठ तिण, सुता परखाई सोय।
बोलाया बहु गांम रा, न्यात मित्र अवलोय ॥ ४ ॥
जीमण कर जीमाविया, सगलां नैं पकवांन।
दिवस घणा राख्यां पछै, सीख दीधी सन्मांन ॥ ५ ॥
एक एक पकवांन री, साथे कोथली दीध।
रसतै भूख भांजन भणी, इम सुखे पूगता कीध ॥ ६ ॥
ज्यूं म्हें पिण बहु दिवस लग, बखांण में विस्तार।
बातां विविध वैराग नी, संभलाई सुखकार ॥ ७ ॥
हलुकर्मी सुण हर्षिया, कर्म काट्या अधिकाय।
छेहड़ै एक पकवांन री, कोथली रूप कहाय ॥ ८ ॥
त्याग करावां तेहनैं, सुखे मोक्ष मैं जाय।
इम तोटौ मेटण अवरनुं, नूंहत मांगां इण न्याय ॥ ९ ॥

ढाल : ४१

[धीज करै सीता सती रे लाल — ए देशी]

स्वाम भिक्खु बुद्धि सागरू रे लाल, निर्मल मेल्या न्याय रे। सुगुण नर।
सुविनीत सुण हर्षे सही रे लाल, अवनीत नैंअ सुहाय रे। सुगुण नर।
सुणजो दृष्टन्त स्वामी तणा रे लाल ॥ १ ॥

अवनीत साधु ऊपरै रे लाल, दीधौ स्वाम दृष्टान्त रे। सु०।
एक साहुकार नीं स्त्री रे लाल, पांणी काजै गई धर [illegible] रे। सु०॥ २ ॥
बेहड़ौ नौ माथै पांणी सूं भर्यौ रे लाल, पोता रे घर आवतां पेख रे। सु०।
मार्ग में निगरी बाहिली मिली रे लाल, बातां करवा लागी विशेष रे। सु०॥ ३ ॥
एक घड़ी तांई तौ ऊभा थकां रे लाल, हिल मिल बातां करी सुधाय रे। सु०।
पछै घर आवी निज पिउ भणी रे लाल, तिण हेलौ पाड्यौ ताहि रे। सु०॥ ४ ॥
तुर्त घड़ौ उतारौ मुझ सिर तणुं रे लाल, तौ किंचित बेलां थी भरतार रे। सु०।
बेहड़ौ उतार्‍यौ तिण बैरनौं रे लाल, तौ क्रोध में आवी अपार रे। सु०॥ ५ ॥
कहै म्हारै माथै नौ बेहड़ौ उदक नौ रे लाल, सो हूं साह्या मुई घणी सोय रे। सु०।
थांनैं तौ मूल सूझै नहीं रे लाल, जिणसूं बेलां इतरी लगाई जोय रे। सु०॥ ६ ॥
संसार तणैं लेखै सही रे लाल, नार इसड़ी अविनीत रे। सु०।
रस्तै एक घड़ी बेहड़ौ छतां रे लाल, पोतैं बांतां करी धर प्रीत रे। सु०॥ ७ ॥
किंचित् जेज पिउ करी रे लाल, तड़का भड़का करवा लागी तांम रे। सु०।
इसड़ी अजोग ते स्त्री रे लाल, अवनीत जग कहै आंम रे। सु०॥ ८ ॥
अविनीत साधु एहवौ रे लाल, [illegible] माहिं रे। सु०।
किणही बाई भाई सूं बातां करै रे लाल, एक घड़ी तांई ऊभा ताहि रे। सु०॥ ९ ॥
अथवा दर्शन देवा कोई भणी रे लाल, झट चलाई नैं परहौ जाय रे। सु०।
तिहां ऊभां घणी बेलां लगै रे लाल, बातां करै बणाय रे। सु०॥ १० ॥
बड़ा थोड़ौ ई कांम भलाइयां रे लाल, करतां कठ मठाठ करै जेह रे। सु०।
तथा पांणी राख्यौ ते लेवा मेलियां रे लाल, टाला टोलौ कर देवै तेह रे। सु०॥ ११ ॥
अथवा जातौ दोहरौ हुवै रे लाल, वले देवै मुंह बिगाड़ रे। सु०।
गुरु सीख दियैं चूक थी पड़्यो रे लाल, तौ करै उलटौ फुंकार रे। सु०॥ १२ ॥
अवनीत साधु नैं दीधी उपमा रे लाल, अवनीत स्त्री री भिक्खु अणसार रे। सु०।
इम सांभल उत्तमां नरां रे लाल, थिर चित्त सुविनय धार रे। सु०॥ १३ ॥
बलि वनीत अवीनीत री चौपई विषै रे लाल, आख्या दृष्टन्त अनेक। सु०।
संक्षेप थकी कहूं छूं सही रे लाल, सांभलजो सुविवेक। सु०॥ १४ ॥
अवनीत नैं थावरिया नीं उपमां रे लाल, गर्भवंती नैं कह्यौ डाकोय रे। सु०।
पुत्र होसी पुन्य आगलौ रे लाल, पाड़ोसण नैं कहै पुत्री होय रे। सु०॥ १५ ॥
गुरु भगता श्रावक श्राविका कनै रे लाल, गावैं गुरु रा गुणग्राम। सु०।
आपरै वश जांणें तिण कनै रे लाल, अवगुण बोलै तांम। सु०॥ १६ ॥
कनै रहै साधु ते थकी रे लाल, बैर वृद्धि ज्यूं जांण। सु०।
और अलगा रहै ते थकी रे लाल, हेत राखै सुविहांण। सु०॥ १७ ॥

कुह्या कांनां री कुती भणी रे लाल, काढ़ै घर सूं सहु कोय*।
ज्यूं अवनीत जिहां जावें तिहां रे लाल, आदर मांन न होय* ॥ १८ ॥
भंडसुरौ कण छांडिनें भीष्टौ भखै रे लाल, हरिया जव छांडी मृग पड़ै पास।
ज्यूं अवनीत विनय छांडी करी रे लाल, अविनय धारै उलास ॥ १९ ॥
गधौ घोडौ गलियार अवनीतडौ रे लाल, कूट्यां बिन आघौ नहीं चालैं कोय रे।
ज्यूं अवनीत नैं कांम भलावियां रे लाल, कह्यां नीठ नीठ पार होय रे ॥ २० ॥
बुटकनै गधै मांमे बलदनैं रे लाल, मरायौ कुबुद्धि सीखाय।
ज्यूं अवनीत री संगत कियां रे लाल, भव भव मैं दुःख पाय ॥ २१ ॥
वेश्या मुतलब थी पुरुषां रिझावती रे लाल, स्वार्थ न पूगां तुरत देवै छेह रे।
ज्यूं अविनीत मुतलब विनय करै घणुं रे लाल, स्वार्थ नहीं सझ्यां तोड़ै सनेह रे ॥ २२ ॥
बांध्यौ काला री पाखती गोरियौ रे लाल, वर्ण नावै तौ पिण लक्षण आय रे।
ज्यूं अवनीत री सङ्गत करै रे लाल, तौ उवे अविनय कुबुद्धि सीखाय रे॥ २३ ॥
सौक रा सौक लोकां कनैं रे लाल, अवगुण बोलैनैं बांछै घात।
ज्यूं अविनीत बरतै गुरु थकी रे लाल, अवगुण ग्राही साख्यात ॥ २४ ॥
कुजाति री त्रिया पिउ सूं लड़ी रे लाल, ताकै कुवै कै उठै और साथ रे।
करै अविनीत क्रोध सूं सलेषणा रे लाल, कै गण छोड जूदौ होय जाय रे ॥ २५ ॥
शोर ठंडौ हुवै मुख मैं घालियां रे लाल, तातौ अग्नि मैं गालियां हुवै ताय।
ज्यूं वस्त्रादिक दियां अवनीत राजी रहै रे लाल, स्वार्थ अण पूगां अवगुण गाय ॥ २६ ॥
शोर शोरीगर रा घर थकी रे लाल, दूरा रहै बुद्धिवांन रे।
ज्यूं अविनीत सूं अलगा रहै रे लाल, ते डाहा चतुर सुजांण रे ॥ २७ ॥
आछी वस्त घालै जो अग्नि मैं रे लाल, ते छिन माहैं होय जावैं छार रे।
ज्यूं अविनय अग्नि सूं गुण बलै रे लाल, अवगुण प्रगटै अपार रे ॥ २८ ॥
नाग खिजावै नांन्हौ जांणनैं रे लाल, तौ ओ घात पांमैं तत्काल रे।
ज्यूं नांन्हा गुरु नीं पिण निंद्या कियां रे लाल, आपदा पांमैं असराल रे ॥ २९ ॥
कालो नाग कोप्यौ करै रे लाल, जीव घात सूं अधिक म जाण रे।
पण गुरु ना अप्रसन्न हुआं रे लाल, अबोद्धि दुर्गत दुख खांण रे ॥ ३० ॥
कदा अग्नि न बालै मंत्र जोग सूं रे लाल, कदा कोप्यौई सर्प न खाय।
कदा तालपुट विष पिण मारै नहीं रे लाल, पिण गुरुहेलणा सूं मुक्ति न जाय ॥ ३१ ॥
कोई वांछे सिर सूं गिरि फोड़वौ रे लाल, सूतौ ही सिंह जगाय।
कोई भाला री अणीनैं मारै टाकरां रे लाल, ज्यूं गुरु नीं असातना थाय ॥ ३२ ॥

---

*प्रत्येक गाथा के द्वितीय और चतुर्थ चरण के बाद 'सुगण नर' पढ़ें।

कदा गिरि सिर फोड़ै कोई मस्तक रे[1], कदा कोप्यौई सिंह न खाय[2]।
कदा भालौ न भेदै टाकर मारियां रे[1], पण गुरु हेलणा सूं शिव नाहि[2] ॥ ३३ ॥
ज्यूं काष्ठ बहो जाय जल मर्फ रे, ज्यूं अवनीत तारीजै संसार।
कुशिष्य क्रोधी अभिमानी आत्मा रे, धर्म मायावियौ धार ॥ ३४ ॥
गुरु सीख दियै अविनीत नैं रे, तौ क्रोध करै तिण वार।
ते डांडे कर ठेलै लिछमी आवती रे, सांची सिख न श्रद्धै लिगार ॥ ३५ ॥
केई हाथी घोड़ा अविनीत छै रे, दीसै प्रत्यक्ष दुःख।
तौ धर्माचार्य ना अविनीत नैं रे, कहौ हुवै किम सुख ॥ ३६ ॥
अविनीत नर नारी इण लोक मैं रे, विकलेन्द्री सरीखा विपरीत।
ते डांडै शस्त्रे करी ताड़ोजता रे, अति दुःख पामैं गुरु नौं अविनीत ॥ ३७ ॥
बले देव दानव अविनीत छै रे, दुखिया तैं पिण देख।
गुरु ना अविनीत नैं दुख अति घणौ रे, काल अनन्त संपेख ॥ ३८ ॥
विनीत अवनीत जातां वाट मैं रे, दोनूं जणां हथिणी नौं पग देख।
अविनीत कहै पग हाथी तणुं, इणनैं ऊंधौ सूझै अलेप ॥ ३९ ॥
विनीत कहै हथिणी पण कांणी डावी आंखरी रे, ऊपर राजा री रांणी सहित।
बले पुत्र रत्न तिणरी कूख मैं रे, विवरा सुध बोल्यौ सुविनीत ॥ ४० ॥
एक बाई प्रश्न आगै पूछियौ रे, ऊभी सरवर पाल।
म्हारौ सुत प्रदेश ते मिलसी कदे रे, कहै अविनीत उण कियौ काल ॥ ४१ ॥
हूं काटूं बाढूं जीभड़ली तांहि री रे, तूं विरुऔ बोल्यौ केम।
धसकौ क्यूं न्हाखै पापी एहवौ रे, जब विनीत कहे छै एम ॥ ४२ ॥
पुत्र थारौ घर आवियौ रे, आज मिलसी तोसूं निशंक।
इणरौ वचन म मांने औ झूठौ घणूं रे, इणरै जीभ वैरण रौ वंक ॥ ४३ ॥
ए दोनूं बोलां मैं अविनीत झूठौ पड्यौ रे, पछै गुरु सूं झगड़्यौ आय।
कहै मोनैं न भणायौ कपटे करी रे, गुरु पूछे निरणुं कियौ ताहि ॥ ४४ ॥
इह लोक मैं गुरु ना अवनीत री रे, अकल बिगड़ गई एम।
तौ धर्म्माचार्य नां अवनीत री रे, ऊंधी अकल रौ कहिवौ केम ॥ ४५ ॥
ज्यूं नकटी छुटी कुल हींणी नार नैं रे, परहरी निज भरतार।
जोगी भखरादिक तिणनैं आदरै रे, उवा पिण जावै उणा लार ॥ ४६ ॥
नकटी सरीषौ अविनीत रौ रे, तिणसूं निज गुरु न धरै प्यार।
तिणनैं आप सरीषौ आवी मिलै रे, तब पांमैं हर्ष अपार ॥ ४७ ॥

१—प्रत्येक गाथा के पहले और तीसरे चरण के अन्त में 'लाल' पढ़ें।
२— " " दूसरे और चौथे चरण के अन्त में 'सुगुण नर' ।

नकटी तौ जोवै भखरादिक भणी रे, अविनीत जोवै अजोग।
जो अशुभ उदै हुवै अविनीत रे, मिल जावै सरीषौ संयोग ॥ ४८ ॥
सौ बार पांणी सूं कांदो धोवियां रे, बिरुई न मिटै बास।
घणूं उपदेश दै गुरु अविनीत नैं रे, पिण मूंल न लागै पास ॥ ४९ ॥
अविनीत उजिया भोगवती जिसौ रे, ऋषिया रोहणी जिसौ सुवनीत।
गुरु गण सूंपै सुविनीत नैं रे, पूरी तिणरी प्रतीत ॥ ५० ॥
किणही गाय दीधी चार.विप्रां भणीं रे, ते वारै बारै दूहै ताहि।
पिण चारो न नींरै लोभ थकी रे, तिण सूं दुःखे २ मूंई गाय ॥ ५१ ॥
गाय सरिषा आचार्य मोटका रे, दूध सरीषौ ज्ञान अमोल।
शिष्य मिला ब्राह्मग सारिषा रे, ते ज्ञान लियौ दिल खोल ॥ ५२ ॥
आहार पांणी आदि व्यावच तणी रे, नकरै सार संभाल।
एहवा अविनीतां रै वश गुरु पड्या रे, त्यां पण दुःखे २ कियौ काल ॥ ५३ ॥
ब्राह्मग तौ एक भव मभै रे, फिट फिट हुवा इहलोक।
गुरु ना अविनीत रौ कहिवौ किसो रे, पीड़ा विविध परलोक ॥ ५४ ॥
गर्ग आचार्य नैं मिल्या रे, पांच सौ शिष्य अविनीत।
तिणरौ विस्तार तौ छै घणूं रे, ऊत्तराध्ययन माहैं संगीत रे ॥ ५५ ॥
एकल थकी पिण बुरौ अवनीतड़ौ रे, साधां रां गण माहैं जाण रे।
सामद्रोही सेवग सारीषौ रे, दुमनुं चाकर दुश्मन समान रे ॥ ५६ ॥
छलबल खेलै चोर ज्यूं रे, छिद्री थकौ रहै टोला माहिं।
चर्चा उपदेश तिगरौ अति बुरौ रे, फाड़ा तोड़ा काजै करै ताहि ॥ ५७ ॥
और साधां रा काढ़ै गृहस्थ खूंचणा रे, तिणसूं बात करै दिल खोल।
अंतरंग मैं जांणैं आपरौ, तिणनैं सिखावै चर्चा बोल ॥ ५८ ॥
गुण ग्राम गावै सुविनीत रा रे, तौ अविनीत सूं सहा नहीं जाय।
निज आपौ प्रगट करै रे, म्हानैं तौ ललपल न सुहाय ॥ ५९ ॥
और सघां री आसता उतारवा रे, आपौ प्रगट करै मूढ़।
गुरु सीख देवै खांमी मेटवा रे, तो सांहमौं मंड जायै करै खोटी रूढ़ ॥ ६० ॥
जिण नैं आप तणुं करै रागियौ रे, शंका औरां री घाल।
अभिमांनी अविनीत नीं रे, एहवी छै ऊंधी चाल ॥ ६१ ॥
सुविनीत रा समभ्काविया रे, साल दाल ज्यूं भेला होय जाय।
अविनीत ना समभ्काविया रे, कोकला ज्यूं कांनी थाय ॥ ६२ ॥
समभ्काया सुविनीत अविनीत रा रे, फेर कितोयक होय।
ज्यूं तावड़ौ ने छांहडी रे, इतरौ अंतर जोय ॥ ६३ ॥

अविनती नैं अविनीत मिलै रे, ते पांमैं घणौ मन हर्ष।
ज्यूं डाकण राजी हुवै रे, चड़तानैं मिलियां जरख ॥ ६४ ॥
डाकण मारै मनुष नैं रे, औ करै समकित नी घात।
डाकण चोर राजा तणी रे, औ तीर्थंकर नौं चौर विख्यात ॥ ६५ ॥
लंपट रूपगृद्धि फिट फिट हुवै रे, जे न गिणैं जाति कुजाति।
ज्यूं अविनीत गृद्धि घणो खाणरौ रे, विकलां नैं मूंडै विख्यात ॥ ६६ ॥
ए अविनीत साधु ओलखावियौ रे, इमहिज साववी जांण।
वले श्रावक नैं श्राविका तणी रे, तिमहिज करजो पिछांण ॥ ६७ ॥
साध सावियां री निन्दा करै रे, अवगुण बोलै विपरीत।
सूंस करावै गृहस्थ भणी रे, त्यांरी भौला मांनैं प्रतीत ॥ ६८ ॥
केई श्रावक खावै घर तणुं रे, केयक मांगे खाय।
पिण अविनीतपणौ छूटै नहीं रे, तौ गरज सरै नहीं काय ॥ ६९ ॥
त्यांनैं दीधां मैं पुन्य परूपियां रे, स्वान ज्यूं पूंछ हिलाय।
साधु पाप परूपै त्यांरा दांन मैं रे, तौ लागै अभ्यंतर लाय ॥ ७० ॥
कोई अविनीत हुवै साध सावधी रे, कदा गुरु दै लोकां नैं जताय।
जो अविनीत श्रावक सांभलै रे, तौ तुर्त कहै तिणनैं जाय ॥ ७१ ॥
साधां नैं आय बंदणा करै रे, सावियां नैं न बांदै रूड़ी रीत।
त्यांनैं श्रावक श्राविका म जांणजो रे, ते तौ मूंढ़ मति छै अविनीत ॥ ७२ ॥
तिण श्री जिन धर्म न ओलख्यौ रे, वले भण भण करै अभिमांन।
आप छांदै माठी मति उपजै रे, तिणनैं लागौ नहीं गुरु कांन ॥ ७३ ॥
मोटौ उपगार मुनि तणुं रे, कृतघ्न कीधौ न गिणंत।
एहवा अविनीत साधु श्रावक ऊपरै रे, भिक्खु आख्यौ एक दृष्टन्त ॥ ७४ ॥
कोई सर्प पड्यौ उजाड़ मैं रे, चैत नहीं सुध कांय रे।
तिण सर्प री अणुकंपा करी रे, दूध मिश्री घाली मुख मांय रे ॥ ७५ ॥
ते सर्प सचेत थयां पछै रे, आडौ फिरियौ आय।
जो ओ लूंठौ हुवै तौ उणनैं दाब दै रे, काचौ हुवै तौ दै डंक लगाय ॥ ७६ ॥
सर्प सरीषा अविनीत मांनवी रे, एकल फिरै ज्यूं ढोर रुलिया रे।
त्यांनैं समकित चारित्र पमायनैं रे, कीधौ मोटौ अणगार रे ॥ ७७ ॥
एहवौ उपगार कियौ तिकौ रे, तत्काल भूलै अविनीत।
उल्टा अवगुण बोलै तेहना रे, उणरै सर्प वाली छै रीत ॥ ७८ ॥
आहार पांणी वस्त्रादि कारणैं रे, ते गिण भूठौ भगड़ौ जोय।
इणनैं ऊपरलो हुवै तौ दाबै डंक दे रे, आघौ काढै तौ उलटौ भांडै सोय ॥ ७९ ॥

सर्प नैं मिश्री दूध पायां पछै रे, डंक दै ते गैरी सर्प देख।
ज्यूं औ समकित चारित्र लियां पछै रे, हुवौ साधां रौ वैरी विशेष ॥ ८० ॥
बले खाणा पीणा रौ हुवौ लोलवी रे, आपरो दोष न सूझै मूल।
छेड़वियां सूं स्हामौ मण्डै रे, बलि क्रोध करै प्रतिकूल ॥ ८१ ॥
तिणनैं दूर करै तौ दुश्मण थकौ रे, बोलै घणुं विपरीत।
असाध परूपै सगला साधनैं रे, तिणरै गैरी सर्प नीं रीत ॥ ८२ ॥
सुगुरा सांप नैं दूध पायां थकां रे, औ करै पाछौ उपगार।
तिणनैं धन देई धनवंत करै रे, बले दीठां हुवै हर्ष अपार।
भाव सुणौ सुविनीत रा रे लाल ॥ ८३ ॥

केई आप छांदै फिरै एकला रे, पिण सरल प्रणांमी शुद्ध रीत रे।
तिणनैं समझाय समकित चारित्र दियौ रे, ते आज्ञा पालै रूड़ी रीत रे ॥ ८४ ॥
तिणरै समकित नैं संजम विहुं रे, रुचिया अभ्यंतर सार।
चलावै ज्यूं चालै छान्दौ रूंधनैं रे, ज्यांसूं करै पाछो उपगार ॥ ८५ ॥
मोटौ उपगार त्यांरौ किम विसरै रे, सूंपै सर्व देही त्यांरै काज।
त्यांरौ दर्शण हर्षंत हुवै रे, सर्व कांम मैं धोरी ज्यूं समाज ॥ ८६ ॥
बले गांमां नगरां फिरतां थकां रे, सदा काल करै गुणग्राम।
ते सुविनीत गुणग्राही आत्मा रे, त्यांनैं वीर बखाण्या तांम ॥ ८७ ॥
शिष्य सुविनीत नैं शोभती रे, उपमा दीधी अनेक रे।
सूत्र न्याय भिक्खु स्वामजी रे, सांभलजो सुविशेष रे ॥ ८८ ॥
भद्र कल्यांणकारी घोड़ै चढ्यां रे, असवार रै हर्ष आणंद।
ज्यूं सीख दियां सुवनीत नैं रे, गुरु पांमैं परमानंद ॥ ८९ ॥
सुविनीत हय देखी चाबषौ रे, असवार रै गमतौ चालंत।
चाबका रूप वचन लागां बिना रे, सुविनीत वर्तै चित शान्ति ॥ ९० ॥
अग्निहोत्री ब्राह्मण सेवै अग्नि नैं रे, ते घृतादिक सींची करै नमस्कार।
सुविनीत सेवै इम गुरु भणी रे, केवली छतौ पिण अधिकार ॥ ९१ ॥
सुविनीत हय गय नर नारी सुखी रे, सुखी देव दांनव सुवितीत।
ते तौ पूर्व पुन्य रा प्रभाव सूं रे, दीसै लोक मैं विनय सुरीत ॥ ९२ ॥
केई पेट भराई शिल्प कारणैं रे, संसार ना गुरु कनैं सोय।
राजादिक ना कुंवर डांडादिक सहै रे, करडा वचन सहै नर्म होय ॥ ९३ ॥
तो सिद्धन्त भणावै ते सत गुरु तणौ रे, किम लोपै विनयवंत कार।
समगत चारित्र पमावियौ रे, औ उत्कृष्टौ उपगार ॥ ९४ ॥

धर्म रूप वृक्ष रौ विनय मूल छै रे, बीजा गुण शाखादिक सम जांण।
तिणसूं शीघ्र वृद्धि कीर्त सूत्र नीं रे, दशवैकालिक नवमा रै दूजै वांण ॥ ९५ ॥
वृक्ष रौ मूल सूकां छतां रे, शाखा पांन फलादि सूक जाय।
ज्यूं विनय मूल धर्म विणसियां रे, सगलाई गुण विललाय ॥ ९६ ॥
एहवौ विनय गुण वर्णव्यौ रे, सांभल नैं नर नार।
अविनय नैं अलगो करी रे, करो विनय धर्म अंगीकार ॥ ९७ ॥
अविनीत रा भाव सांभली रे, अविनीत बहु दुख पाय।
केई कुगुरु सुण बुध बाहिरा रे, ते पिण हर्षंत थाय ॥ ९८ ॥
विनीत रा गुण सांभली रे, विनीत रै आनन्द औछाव।
तौ पिण कुगुरु हर्षंत हुवै रे, विनय करावण चाव ॥ ९९ ॥
ते समझै नहीं जिन धर्म मैं रे, आज्ञा अणआज्ञा ओलखै नांय।
ते व्रत विहूंणा नागड़ा रे, प्रत्यक्ष प्रथम गुणठांणौ देखाय ॥ १०० ॥
हाल देखी हंसली तणी रे, बुगली पिण काढ़ी चाल।
पिण बुगली सूं चाल आवै नहीं रे, ए दृष्टान्त लीजो संभाल ॥ १०१ ॥
कुगुरु साधां नैं देखी करी रे, ते पिण करवा लागा अभिमांन।
आडंबर कर विनय करावता रे, नहिं श्रद्धा आचार नुं ठिकांण ॥ १०२ ॥
कोयल रा टहुका सुणी करी रे, कां कां शब्द करै काग।
शोभाग सुणी सतियां तणा रे, कूडै कुसतियां अथाग ॥ १०३ ॥
सांगधारी कुसतियां काग सारीषा रे, अशुद्ध श्रद्धा आचार रै मांहि।
ठाला बादल ज्यूं थोथा गाजता रे, विनय करावता लाजै नांहि ॥ १०४ ॥
गैंवर नी गति देखनैं रे, भूसै स्वान ऊंचा कर कान।
ज्यूं भेषधारी देखी साध नैं रे, स्वान ज्यूं कर रह्या तांन ॥ १०५ ॥
ते पिण विनय करावणा रा भूखा घणा रे, साथी सीप सिंगोट्यां रा सोय।
मिथ्यादृष्टि ते मूलगा रे, त्यांनैं ओलखै बुद्धिवंत लोय ॥ १०६ ॥
ठमां ठांम २ थांनक बांधिया रे, थापै जीव खवायां पुन्य।
ते पिण नांम धरावै साधरौ रे, सवलौ न सूझै समकित सुन्य ॥ १०७ ॥
पोपां बाई रा राज मैं रे, नव तूंबा नेरै नेगदार।
ज्यूं विकल सेवग स्वामी मिल्या रे, ऐहवौ भेषधारयां रै अंधार ॥ १०८ ॥
वस्त्र पात्र अधिका राखता रे, आडा जड़ै किंमाड़।
मोल लिया थांनक माहैं रहै रे, इसड़ी थाप निरन्तर धार ॥ १०९ ॥
आज्ञा बारै पुन्य श्रद्धता रे, आज्ञा मैं पाप समाज।
काचौ पांणी पायां पुन्य श्रद्धता रे, प्रत्यष पोपां बाई रौ राज ॥ ११० ॥

ते समझ न पड़ै श्रावकां भणी रे, ज्यांरा मत माहैं मोटी पोल।
पिण आंधां नैं मूल सूझै नहीं रे, तांबा ऊपर झोल॥ १११॥
कुगुरु निषेध्यां अविनीतड़ौ रे, ऊंधा अर्थ करै विपरीत।
ते सत गुरु नैं कुगुरु कहै रे, नहिं विनय करण री नीत। ११२॥
उणसूं विनय कियौ जावै नहीं रे, तिणसूं बोलै कपट सहित।
कहै विनय कह्यौ छै शुद्ध साध नौं रे, इणरै भ्यन्तर खौटी नीत॥ ११३॥
साधां नैं असाध सरधायवा रे, बोलै माया सहित।
तिणनैं बुद्धिवंत हुवै ते ओलखै रे, औ पूरै मतै अविनीत॥ ११४॥
कहै आचार में चूकै घणा रे, म्हांसूं विनय कियौ किम जाय।
ते बुद्धिहीण जीव बापड़ा रे, न जांणैं सूत्र न्याय॥ ११५॥
बुकस पड़िसेवण भेला रहै रे, अवधि मनपर्यव केवल अबंक।
ते भेला आहार करता शंकै नहीं रे, इणनैं विनय करतां आवै शंक॥ ११६॥
देखौ अंधारौ अवनीत रै रे, निज अवगुण सूझै नांय।
विनय नौं तौ गुण पोतै नहीं रे, तिणसूं पर तणौ औगुण देखाय॥ ११७॥
दर्शण मोह उदय घणुं रे, पूरौ विनय कियौ नहीं जाय।
ओलखै अवगुण आपरौ रे, ए उत्तमपणौ सुहाय॥ ११८॥
ते कहै केवली बुकस भेला रहै रे, मोह बल्यौ तिणसूं नावै लैहर।
लैहर आवै चित्त थिर नहीं रे, ते जांणैं निज कर्म रौ जहर॥११९॥
बुकस पड़िसेवण कदे नहिं मिटै रे, तीनूं ही काल रै मांय।
दोय सौ क्रोड़ सूं घटै नहीं रे, चित्त अथिर सूं ते न मिटाय॥ १२०॥
ज्यांरै सूत्र तणी नहीं धारणा रे, अति प्रकृति घणी अजोग रे।
ते थोड़ा मैं रंग विरंग हुवै रे, मोटौ दर्शन मोह रोग रे॥ १२१॥
कै कांरै दर्शन मोह तौ दिसै घणौ रे, पिण सैंणा घणा बुद्धिवांन।
ते गुरु नैं सुणाय निशंक हुवै रे, ज्यांरै समकित रौ जोखौ मति जाण॥ १२२॥
दोष री थाप गुरां रै नहीं रे, दोष रा डंड री थाप।
और री कीधी थाप हुवै नहीं रे, इम जांण निशंक रहै आप॥ १२३॥
इम सांभल उत्तम नरां रे, राखौ देव गुरां नी प्रतीत।
आसता राख आगै घणा रे, गया जमारौ जीत॥ १२४॥
वर्ण नाग नतुआ तणौ रे, मित्र तस्यौ प्रतीत सूं पेख।
तै उत्तम पुरुषां री प्रतीत सूं रे, तिस्या तिरैनैं तिरसी अनेक॥ १२५॥
भिक्खु स्वाम कह्या भला रे, दीपता वर दृष्टन्त।
केयक तौ सूत्रे करी रे, केयक बुद्धि उपजंत॥ १२६॥

उत्पत्तिया बुद्धि अति घणी रे, स्वाम भिक्खु नीं सार।
स्वाम गुणां नौ पोरसौ रे, स्वाम सासण सिणगार ॥ १२७ ॥
स्वाम दिसावांन दीपतौ रे, स्वाम तणी वर नीत।
आसता तास न आदरै रे, ते अपछंदा अविनीत ॥ १२८ ॥
भिक्खु दीपक भरत में रे, प्रगट्यौ बहु जन भाग।
स्वाम भिक्खु गुण संभरूं रे, आवै हर्ष अथाग ॥ १२९ ॥
ढाल भली इकचालीसमी रे, आख्या दृष्टन्त अनेक।
भिक्खु स्वाम प्रसाद थी रे, जय जश करण विशेष ॥ १३० ॥

दुहा

इत्यादिक दृष्टान्त अति, सूत्र न्याय वलि सार।
सखरा मेल्या स्वामजी, भिक्खु बुद्धि भण्डार ॥ १ ॥
अणुकम्पा रै ऊपरै, करणी पद्म गुण ठांग।
इन्द्रीवादी ऊपरै, बहु दृष्टान्त वखांण ॥ २ ॥
पोंत्याबंध ऊपर प्रत्यष, प्रज्ञ्यावादि पिछांण।
कालवादी की चौपई, दृष्टान्त त्यां बहु जांण ॥ ३ ॥
व्रत अव्रत री चौपई, अरु श्रद्धा आचार।
जिण आज्ञा पर युक्ति सूं, सखरा हेतू सार ॥ ४ ॥
टीकम डोसी कच्छ नौं, सूक्ष्म पूछा सोय।
जाब दिया अति जुक्ति सूं, ऋष भिक्खु अवलोय ॥ ५ ॥
भिक्खु नांम कह्यौ भलौ, सूत्रां में बहु ठांम।
भेदै कर्म भणी भलौ, गुण निष्पन्न तुझ नांम ॥ ६ ॥
पंच महाव्रत अंक पंच, बार व्रत ना बार।
अव्रत बारै अंक धर, त्रि कर्ण जोग प्रकार ॥ ७ ॥
इण विध मांड बतावतां, हेतु न्याय अनेक।
आप दिखाया अधिक ही, वर्णवै केम विशेष ॥ ८ ॥
दाख्या ते दृष्टान्त नीं, संकलना सुविशाल।
कहूं छूं संक्षेपे करी, शुचा मात्र संभाल ॥ ९ ॥

ढाल : ४२

[डाव मूंजादिक नी [illegible] देशी]

पांच सौ मण चणा पिछांण, पंच सिख्यां हेतू ते जांण[1]।
डोकरा नैं चणा सेर दीधूं, पीस पोय जल सूं तृप्त कीधूं[2] ॥ १ ॥

आखा पजुसणां में नआल, चौड़ै परंपरा थित चालै[3]।
माता वेश्या नैं तें जल पायौ, पाप छै पिण सरीषा न थायौ ॥ २ ॥
तिम श्रावक कसाई न सरिखौ, पाप सुणी कोई मत भिड़कौ[4]।
चदर ले गयौ तसकर एक, एक दीधी प्रायछित किणरौ पेख[5] ॥ ३ ॥
थांरा धणी रौ नांम नाथू होय, कहै क्यांनै नाथू हुवै सोय[6]।
मूला दियां कांई हुवै त्यांनैं, पूछ्यौ अमरसिंघजी रा साधां नैं[7] ॥ ४ ॥
पड़िया तसकर नैं आफू खवायौ, ते तौ सेठ नौं बैरी छैं तायो[8]।
खेत पाकां करसणी रै बालौ, तिणरौ रोग मेट्यां फल न्हालौ[9] ॥ ५ ॥
ममता ऊतरी कहै प्रसिद्धि, दश वीगा खेती किणनैं दीधी[10]।
सावज दांन रा तूं करै त्याग, म्हांनैं भांडवा नैं कै वैराग[11] ॥ ६ ॥
जल लोट्यौ सूंपजो म्हारै हाट, ज्यूं पुन्य कहै सांनी रै वाट[12]।
पड़िमाधारी नैं दियां सूं होय, लैणवाला नैं ते अवलोय[13] ॥ ७ ॥
कोई काचौ पांणी किणनैं पावै, कोई पार की खाई लुंटावै[14]।
धन दियौ अव्रती नैं ताहि, लाय मां सूं न्हाख्यौ लाय माहि[15] ॥ ८ ॥
घृत तम्बाकू भेलां न मेल, ज्यूं व्रत अव्रत मैं नहीं भेल[16]।
आंख जीभ औषध रौ दृष्टन्त, व्रत अव्रत ऊपर उपजंत[17] ॥ ९ ॥
शोर अग्नि न्यारा सूं न नाश, ज्यूं व्रत अव्रत जुजूवा तास[18]।
सोमल मिश्री पसारी रे न्यार, व्रत अव्रत जुवा विचार[19] ॥ १० ॥
कहै गृहस्थ रौ है छंद, छांदा मैं तौ धूल है मंद[20]।
खांड घृत मैदौ खरा होय, ज्यूं चित्त वित पात्र सुजोय[21] ॥ ११ ॥
थानैं असाध जांणेने दियौ दान, उत्तर खाधी मिश्री विष जांन[22]।
आक थोर रौ दूध अशुद्ध, सावज दया अनुकंपा न शुद्ध[23] ॥ १२ ॥
लाय बुझायां मिश्र थापंत, तो नाहर मार्‍यां न पाप एकंत[24]।
बले करुणा घणां री आण, कसाई नैं मार्‍यां मिश्र जांण[25] ॥ १३ ॥
बले उरपुर नैं मारै विशेष, तिणमैं पिण मिश्र छै त्यांरै लेख[26]।
बले अटवी बालतौ जाणै, तिणनैं मार्‍यां मिश्र क्यं न माणैं[27] ॥ १४ ॥
कतल करतौ तुर्कादिक ताय, तिणनैं मार्‍यां मिश्र त्यांरै न्याय[28]।
गायांदिक हिंसक जीव संघारै, त्यांनैं मार्‍यां मिश्र क्यूं नहिं धारे[29] ॥ १५ ॥
फांसी काढ़ै ते धर्मी कहिवायो, तौ थारा गुरु न काढ़ै किण न्यायो[30]।
चोर ग्यारह मैं एक छुड़ायौ, तिणरौ सेठ प्रत्यक्ष फल पायौ[31] ॥ १६ ॥
उरपुर खाधौ उजाड़ रै मांयो, मंत्रवादि झाड़ौ दे बचायौ[32]।
साधां सुणायौ श्री नवकार, आज्ञा मैं किसौ छै उपगार[33] ॥ १७ ॥

साहुकार नीं स्त्रियां दोय, एक रोवै न रोवै ते जोय।
कहौ साधुजी किणनैं मरावै, संसारी रै मन कुंण भावै[३४] ॥ १८ ॥
मौहकमसिंहजी पूछ्यौ महाराज, आप गमना लागौ किण काज।
नारी हर्ष कासीद नैं निरख, तिम शिव मग नीं थारै हर्ष[३५] ॥ १९ ॥
तुझ अवगुण काढ़ै है ताय[३६], थांरौ मुंहड़ौ देख्यां नर्क जाय[३७]।
ताकड़ी डांडी रौ दृष्टान्त[३८], कहै उधा भगी वादंत[३९] ॥ २० ॥
गुण गोली सीरा सूं सोभाय[४०], एक भांगां पांचूं किम जाय[४१]।
करौ थांनक मैं कद आख्यौ, सीरौ करी जमाई न दाख्यौ[४२] ॥ २१ ॥
सखरी मुझ करौ सगाई, डावरै कद कह्यौ छै ताहि[४३]।
जति रौ उपासरौ कहाय, मथेण रै पोशाल है ताय[४४] ॥ २२ ॥
झालर सुण स्वान रुदन करंत, विहाव री मुंवा री न जांणंत[४५]।
दुःख नीं रात्रि मोटी दिखाय, सुख नी रात्रि छोटी दीसै ताय[४६] ॥ २३ ॥
गांम रै गोरवैं खेती वाही, गया न पड्यां है तौ ठैहराई[४७]।
करड़ा दृष्टान्त कह्यौ किण न्याय, करड़ौ रोग फूंजाल्यां न जाय[४८] ॥ २४ ॥
गोहां री तौ दाल हुवै नांहिं, अल्प बुद्धि न समझै ताहि[४९]।
आपरी भाषा नहिं ओलखाय, पोतै लिख्यौ बाच्यौ नहिं जाय[५०] ॥ २५ ॥
गौ पगडांडी पाखंड मग ताहि, जिण माग रस्तौ पातशाही[५१]।
पाग चौरी मुदौ न पौंचाय, झूठो ठांम ठांम अटक जाय[५२] ॥ २६ ॥
साधां सूंस करायौ सोय, भाग्यां साध नैं पाप न होय।
कपड़ां बेच नफौ लियौ सार[५३], साधु नैं घृत दियौ उदार[५४] ॥ २७ ॥
वैरागी वैराग चढ़ावै, कसूंबौ गलियां रंग पमावै[५५]।
कहै म्हे जीव बचावां ऐ ठागौ, चौकी छोड़ चोख्यां करवा लागौ[५६] ॥ २८ ॥
ऋषपाल जिम छै तिम राखै[५७], पूरौ न पलै पंचम काल भाषै।
तेलौ तीन दिनां रौ ते काल, हिवड़ां पिण तीन दिवस नौं न्हाल[५८] ॥ २९ ॥
दीख्या लेऊं पिण आंसूं तौ आय, जमाई रोयां शोभ न पाय[५९]।
बाल विधवा देखी लोक रोय, तिणरा कांम भोग बांछै सोय[६०] ॥ ३० ॥
डावरा रै माथै दियां द्वेष, लाडू दियौ ते राग संपेख[६१]।
जाटणी रौ उदक जाच्यौ जाय, चारौ निरख्यां दूध दै गाय[६२] ॥ ३१ ॥
और गण रौ थांरै मांय आय, तिणनैं दीख्या देई लेवौ मांय[६३]।
नरक मैं जाय कुंण तसु ताणैं, पथर नैं कुवै तलि कुंण आंणै[६४] ॥ ३२ ॥
कुण स्वर्ग ले जावै ताय, काष्ठ जल पर कुंण ठहराय[६५]।
पइसौ डूबै बाटकी तिराय, संजम तप सूं हल्कौ थाय[६६] ॥ ३३ ॥

पात्रां रै रंग कुंथवा दोहरा, काला लाल सूं देखणा सोहरा[६७]।
म्हारै केलु सूं रङ्गवा रा भाव, कच्चौ कैलु छोड़ै किण न्याव[६८] ॥ ३४ ॥
कुजागां रा करै ऐक माथै, एक कर्ज मेटै निज हाथै[६९]।
चोर हिंसक कुशीलिया तीन, त्यांरा तीन दृष्टान्त सुचीन[७२] ॥ ३५ ॥
कीड़ी नैं कीड़ी जांणैं ते नाण, पिण कीड़ी ज्ञान मति जांण[७३]।
साधु थाका नैं गाडै बैसाण, किणही गधै बैसाण्यो जांण[७४] ॥ ३६ ॥
पुन्य मिश्र ऊपर अवलोय, किणरी एक फूटी किणरी दोय[७५]।
पौल बारी खोली दीसां बार, देखी हेम नैं उत्तर उदार[७६] ॥ ३७ ॥
थोथा चणां री भखारी विख्यात, ऊंदरा रड़बड़ की सारी रात[७७]।
कोयलां री राब बासण काला, बलि आंबा जीमन परुसण वाला[७८] ॥ ३८ ॥
तार काढौ काढ़ै तार कांइ, थांनैं डांडा ही सूझै नांहीं[७९]।
वाय बंग घरटी उडै जाय, दोष थाप्यां संजम किम ठहराय[८०] ॥ ३९ ॥
एकलड़ौ जीव कहौ किण लेख, त्यांरै लेखै ही चौलड़ो देख[८१]।
वस्त्र राख्यां सी परसीह थी भांजै, तौ अन्न सूं प्रथम रहै किण लाजै[८२] ॥ ४० ॥
श्वेताम्बरी शास्त्र थी घर छंड, तिणसूं राखां छां तीन सुडण्ड[८३]।
अनार्य कहै दया नैं रांड, करै कपूत माता नैं भांड[८४] ॥ ४१ ॥
डाकनियां डरै गारडू आयां, साधु आयां पाखण्डी भय पाया[८५]।
कड़वा पकवांन जुर सूं कहाय, मिथ्या जुर सूं साधु न सुहाय[८६] ॥ ४२ ॥
बांधी बाल्यां किम तेजरा तोड़ै, चारित्र बैराग विण किम जोड़ै[८७]।
दियौ तीन नावा रौ दृष्टान्त, सुगुरु कुगुरु ऊपर शोभन्त[८८] ॥ ४३ ॥
भेषधारी पिण तप करै ताय, मोटौ देवालौ केम मिटाय[८९]।
बणी बणाई ब्राह्मणी री बात, साम्प्रत तिणरा साथी साख्यात[९०] ॥ ४४ ॥
सूत्र बाचै छेहड़ै हिंस्या थापै, छेहड़ै मोस्या मारू ज्यूं किलाप[९१]।
पत्थर खोस्यो तिणनैं कांई होय, तिणरै हाथ आयो ते तूं जौय[९२] ॥ ४५ ॥
खेमा साहरा घर रौ नैंहतौ होय, द्रव्य साध यांनैं कहां सोय[९३]।
साध असाध कुंण कहौ वाय, नागा ढकिया कितरा गांम मांय[९४] ॥ ४६ ॥
बले कुण देवाल्यौ साहुकार, लखण बतावूं करलौ विचार[९५]।
दियौ कुणकां पर पग तीन चार, खांमी छै पिण तिणसूं न प्यार[९६] ॥ ४७ ॥
दियौ सेतखांना रो दृष्टान्त, छिद्र पेही ऊपर दाखन्त[९७]।
हेम पछेवड़ी कहि अधिकाय, तिण नैं कठिन सीख समझाय[९८] ॥ ४८ ॥
शोभाचन्द नैं कह्या शुद्ध न्याय, पाषांण नैं सोनूं न कहाय[९९]।
नैहत मांगौ आप किण न्याय, सुता व्याव मैं मित्र बोलाय[१००] ॥ ४९ ॥

अविनीत त्रिया नौं पिछांण, अविनीत साधु ऊपर जाण[१११]।
कह्या संपेख थी अल्प मान, पाछै वर्णवी सगली वात ।। ५० ।।
चौथी विनीत अवनीत री नाम, आसरै तिणसूं हेतु पचास[११२]।
ते इकतालीसी ढाल में आख्या, तिण कारण इहां न भाख्या ।। ५१ ।।
इत्यादिक कह्या हेतु अनेक, पुरा कह्या न जाय विशेष ।
हुवा भिक्खु उजागर ऐसा, साम्प्रत काल में श्रीजिन जैसा ।। ५२ ।।
तसुं भजन चिंतामण सरखौ, प्रत्यक्ष पारश भिक्खु नैं परखौ ।
म्हारै प्रबल भाग्य प्रमांण, इणकाल अवतरियां आंण ।। ५३ ।।
नित्य स्मरण कर नर नार, सुख सम्पति कारण सार ।
दुःख दोहग टालणहार, इह भव परभव सुखकार ।। ५४ ।।
निर्मल ज्ञान नेत्रे करी निरखौ, पूज भिक्खु विविध कर परखौ ।
वर पूरौ है तसु विश्वास, अति वंछत पूरण आश ।। ५५ ।।
बयालीससीं ढाल विमास, शुद्ध दूजौ खण्ड सुप्रकाश ।
स्वामी जय जश करण सुहाया, प्रबल भाग बले भिक्खु पाया ।। ५६ ।।

कलश

दृष्टन्त वारु अधिक चारु, स्वामनाज सुहांमणा ।
भव उदधि तारण जग उद्धारण, ऋष भिक्खु रलियामणा ।। १ ।।
सुख वृद्धि सम्पति दमन दम्पति, भ्रम भंजन अति भलौ ।
हद बुद्धि हिमागर सुमति सागर, नमो भिक्खु गुण निलौ ।। २ ।।

तृतीय खण्ड

सोरठा

आख्यौ द्वितीय खण्ड रे, असि आउ सा नैं प्रणम।
मुनि वर्णन महिमण्ड रे, तीजौ खण्ड निसुणौ तुम्हें ॥ १ ॥

वैणीरामजी स्वामी कृत

दुहा

चारित्र लीधौ चूंप सूं, पाखण्ड पन्थ निवार।
भवियण रै मन भांवता, हुवा मोटा अणगार ॥ १ ॥
उदै उदै पूजा कही, समण निर्ग्रन्थ नीं जाण।
तिणसूं पूज प्रगट थया, ए जिन वचन प्रमांण ॥ २ ॥
उपम तो आछी कही, समण निर्ग्रन्थ नैं श्रीकार।
चौरासी अति दीपती कही, सूत्र अनुयोग द्वार मझार ॥ ३ ॥
बले दशमा अंग अधिकार मैं, कही तीस उपमा तंत।
समण भिक्खु नैं शोभती, भाख गया भगवंत ॥ ४ ॥
वले षटदश उपमा, बहुश्रुति नैं श्रीकार।
उत्तराध्ययन इग्यार मैं, श्री वीर कह्यौ विस्तार ॥ ५ ॥
इण अनुसारै ओलखो, भिक्खु नैं भली भंत।
उपम गुण आछा घणा, त्यांरौ पार न कोई पामंत ॥ ६ ॥
गुणवन्त गुरु ना गुण गांवतां, तीर्थंकर नाम गौत बन्धाय।
हिवै ओपम सहित गुण वर्णवूं, ते सुणज्यो चित्त लाय ॥ ७ ॥

ढाल : ४३

[[illegible]]

आदिनाथ आदेश्वरजी, जिनेश्वर जग तारण गुरु।
धर्म आदि काढी अरिहन्त।
इण दुषम आरै कर्म काटिया जी, प्रगटिया आदि जिणन्द ज्यूं।
ए इचरज अधिक आवन्त।
श्याम वरण अति मोहै जी, मन मोहै नेम जिणन्द ज्यूं।
ज्यांरी वांणी अमीय समांन।
भवियण रै मन भाया जी, चित्त चाह्या तीरथ चारमां।
मुनि गुण रत्ना री खाण।
साध भिक्खु सुखदाया जी, मन भाया भवियण जीवा नैं॥ १॥
कालवादि आदि जांणी जी, मन आंणी मार्ग उथापवा।
कुवद्यां केलविया कूड़।
अै पाखण्ड घोचा पोचा जी कांई, ज्ञान करी गिरवा मुनि।
चरचा कर किया चकचूर। साध०॥ २॥
शंख उज्वल श्रीकारी जी, पयधारी दोनूं दीपता।
नहीं बिगड़ै दूध लिगार।
ज्यूं थे तप जप क्रिया कीधी जी, कर लीधी आतम उजली।
पय दश यति धर्म धार॥ ३॥
कंबोज देश नौं घोड़ौ जी, अति सोरो करै सिरदार नैं।
नहीं आंणै अड़िल लिगार।
ज्यूं भवियण नैं थे तारया जी, उतारया पार संसार थी।
सुखे जासी मोख मझार॥ ४॥
शूर शिरोमण साचो जी, नहीं काचौ लड़तां कटक मैं।
सुवनीत अश्व असवार।
ज्यूं कर्म कटक दल दीधौ जी, जश लीधौ जाझो जगत् मैं।
चढ़ सूत्र अश्व असवार॥ ५॥
हाथी हथण्यां परवारै जी, बल धारै दिन २ दीपतो।
वधै साठ वर्ष शुद्ध मांन।
ज्यूं थे तयाली वर्ष लग जाझा जी, तप ताजा तेज तीखा रह्या।
प्राक्रम पिण परधांन॥ ६॥

वृषभ सिंह खंध भारी जी, सिरदारी गायां गण मझै।
थेट भार बहै भली भंत।
ज्यूं थे गण भार थेट निभाया जी, चलाया तीरथ चूंप सूं।
सहु सघां मैं शोभंत ॥ ७ ॥

सिंह मृगादिक नौं राजा जी, तप ताजा डाढ़ा तेज सूं।
जीव न जीपै जोय।
ज्यूं आप केशरी नी परै गुंज्या जी, धूज्या पाखण्डी धाक सूं।
थाने गंज सकै नहीं कोय ॥ ८ ॥

वासुदेव बल जांणो जी, बखाण्यौ वीर सिद्धांत मैं।
शंख चक्र गदा धरणहार।
ज्यूं थांरा ज्ञान दर्शण चारित्र तीखा जी, नहीं फीका त्यांकर तेज सूं।
पूज पाखण्ड दियौ निवार ॥९॥

आखा भरत नौं राजा जी, अति ताजा सेन्या सझ करी।
आंणै बैर्‌यां नौं अन्त।
थ पाखण्ड सहु ओलखाया जी, हटाया बुद्ध उत्पात सूं।
तत्व बताया तंत ॥ १० ॥

शकेन्द्र सिरदारी जी, बज्रधारी सुर मैं शोभतो।
जक्षादिक ने जीपै जाण।
जिम सूत्र बज्र श्रीकारी जी, बलधारी बुद्ध उत्पात्त सूं।
पूज पाड़ी पाखण्ड री हांण ॥ ११ ॥

आइच्च उग्यो आकाशै जी, विणाशै तिमिर तेज सूं।
अधिकौ करै उद्योत।
ज्यूं थे अज्ञान अंधारो मिटायौ जी, बतायो मारग मुगत रो।
घण घट घाली जोत ॥ १२ ॥

चंद सदा सुखकारी जी, परिवारी ग्रह ना गण मझे।
सोमकारी शोभंत।
ज्यूं चार तीरथ सुखदाया जी, मन भाया भवियण जीव रै।
भिक्खु भला जशवन्त ॥ १३ ॥

लोक घणा आधारी जी, अति भारी धानाकर भर्‌यो।
ते कोठागार कहाय।
ज्यूं ज्ञानादिक गुण भरिया जी, परवरिया पूज्य प्रगट थया।
आधारभूत अथाय ॥ १४ ॥

सर्व वृक्षा में अति सोहै जी, मन मोहै दीसं दीपती।
जम्बू सुदर्शन जांण।
ज्यूं संता में सिरदारी जी, मनभारी भिक्खु भरत में।
उपना इचरजकारी आंण॥१५॥
सीता नंदी सिरै जांणी जी, वखांणी वीर सिद्धान्त में।
पांच सै जोजन प्रवाह।
ज्यूं तप तेज अति तीखा जी, नहीं फीका रह्याज फाबता।
सदाकाल सुखदाय॥१६॥
मेरु नीं ओपमा आछी जी, नहीं काची कही कृपाल जी।
ते ऊंचौ घणु अत्यन्त।
औषध अनेक छाजै जी, विराजै गुण त्यांमै घणा।
ज्यूं अै वहुश्रुति बुद्धवन्त॥१७॥
स्वयंभूरमण समुद्र रूड़ो जी, पूरो पाव राज पहुलो पछ्यौ।
प्रभूत रतन भरपूर।
सागर जेम गम्भीरा जी, शूरा वीरा गुण कर गाजता।
सूत्र चरचा मैं शूर॥१८॥
ऐ षटदश ओपम आछी जी, कांई साची सूत्र मै कही।
वहुश्रुति नैं श्रीकार।
इण अनुसारै जांणो जी, पिछांणौ कर ल्यौ पारीखा।
भिक्खु गुण भण्डार॥१९॥
उपमा अनेक गुण छाज्या जी, बिराज्या गादी वीर नीं।
पूज्य पाट लायक गुण पाय।
समुद्र जेम अथागा जी, जल थागा जिन कह्यौ नहीं।
ज्यूं गुण पूरा केम कहाय॥२०॥
पाट लायक शिष्य भाली जी, सुंहाली प्रकृति सुन्दरु।
भारमलजी गैहर गम्भीर।
पदवी थिर कर थापी जी, आ आपी आचरज तणी।
जांणे सुविनीत सधीर॥२१॥

दुहा

भाग बली भिक्खु तणैं, संत हुवा गण मांहि।
वर्णन संक्षेपे पवर, आखं धर उछाहि॥१॥

केयक पण्डित मरण कर, कीधौ जन्म कल्यांण।
कर्म जोग केइयक टल्या, सुणज्यो चतुर सुजांण॥ २॥
वड़ा संत भिक्खु थकी, जनक सुतन वर जोड।
पिता स्वाम थिरपाल जी, फतैचन्द सुत मोड़॥ ३॥
बड़ा टोला मैं था विहुं, राख्या बड़ा सुरीत।
सरल भद्र विहुं श्रमण शुद्ध, पूरी तसु प्रतीत॥ ४॥
तपसी तप करता विहुं, शीत उष्ण वरसाल।
वड़ वयरागी विनय वर, रूड़ा मुनि ऋषपाल॥ ५॥
निर अहंकारी निर्मला निरलोभी निकलङ्क।
हलुआकर्मी उपधि करे, आर्जव उभय अबङ्क॥ ६॥
सीतकाल अति सीत सहै, पछेवड़ी परिहार।
जन निशि देखी जांणियौ, ऐ तपसी अणगार॥ ७॥
कोटै आप पधारिया, महिपति आवणहार।
साम्भल नैं ते संत विहुं, तत्क्षण कियौ विहार॥ ८॥
निज आतम तारण निपुण, बारु वेपरवाह।
तप मुद्रा तीखी घणी, चित्त इक शिवपद चाह॥ ९॥

ढाल : ४४

[राणी भाखै हो दासी सांभल बात०—ए देशी]

संत दोनूं हो शोभै गुणवन्त नीत २, त्यांसूं प्रीत पूर्ण भिक्खु तणी।
भिक्खु सेती हो ज्यांरै पूर्ण प्रीत २, गुणग्राही आत्म घणी॥ १॥
पद आचार्य हो भिक्खु बुद्धि नां भण्डार २, जन वहु देखतां युक्ति सूं।
आप मूंकी हो पद नौं अहंकार २, करजोरी वन्दना करै भक्ति सूं॥ २॥
किण टोला ना हो तुम्हें संत कहिवाय २, इण विध लोक पूछै घणा।
मांन मूकी हो बोलै विहुं मुनिराय २, म्हे भीखणजी रा टोला तणा॥ ३॥
प्रश्न चरचा हो त्यांनैं कोई पूछन्त २, तौ संत दोनूं इम भाखता।
भिक्खु भाखै हो तेहिज जांणज्यो तंत २, रूड़ी आसता भिक्खु नीं राखता॥ ४॥
म्हांनैं तो हो पूरी खबर न कांय २, भीखणजी नैं पूछी निर्णय करौ।
शुद्ध जांणौ हो तेहिज सत्यवाय २, प्रगट कहै इम पाधरौ॥ ५॥
त्यांरा तप नौं हो अधिकौ विस्तार २, कायर सुण कम्पै घणा।
अति पांमैं हो शूरा हर्ष अपार २, संत दोनूं ई सुहांमणा॥ ६॥
संजम पाल्यौ हो बहु वर्ष श्रीकार २, विचरत बरलू आविया।
धर्म मूर्त्ति हो ज्ञानी महा गुणधार २, हलुकर्मी हर्षाविया॥ ७॥

शुद्ध तपस्या हो फतैचन्दजी मैनीम २, अधिक कियाँ तप आकरौ।
बारु करणी हो ज्यांरी विस्वावीस २. क्षान्ति गुणे मुनिवर खरौ ॥ ८ ॥
पिता दीधौ हो तसु पारणौ आंण २, ठण्डी घाट बाज री नरी।
फता करलै हो पारणौ पहिछांण २. मरल पणै कहै मुन भणी ॥ ६ ॥
निरममती हो मुन सन्त निहाल २, प्रगट अपथ्य कियौ पारणौ।
कर गयौ हो तिण जोग सूं काल २, सुमति जन्म सुधारणौ ॥ १० ।
एकतीसैं वर्ष हो सम्वत अठार २, फतैचन्द फतै कर गया।
निरमोही हो तात निमल निहार २, थिर चित संजम अति थया ॥ ११ ॥
मुनि आयौ हो खैरवा शहर माहिं २, संलेखणा मण्डिया सही।
चिहुं मासे हो पारणा चित्त चाहि २, आमरै चवदे किया वही ॥ १२ ॥
थिर चित्त सूं हो मुनिवर थिरपाल २, वर्ष बतीसैं विचारियौ।
कर तपस्या हो मुनि कर गयौ काल २, जीतब जन्म सुधारियौ ॥ १३ ॥
जोड़ी जुगती हो तात सुतन जिहाज २, स्वाम भिक्खु रा प्रसाद थी।
पण्डित मरणौ हो ओ तौ भवदधि पाज २, पाम्या है पर्म समाध थी ॥ १४ ॥
सखरी भाषी हो चौमालीसमीं ढाल २, स्वाम भिक्खु गुण सागरु।
बारु करवै हो जय जश सुविशाल २, अधिक गुणां रा आगरु ॥ १५ ॥

दुहा

समत अठारह बतीस मैं, भिक्खु बुद्धि भण्डार।
प्रकृति देख साधु तणी, लिखत कियौ तिणवार ॥ १ ॥
सहु साधां नैं पूछनैं, बांधी इम मर्याद।
सुखे संजम पालण भणी, टालण क्लेश उपाधि ॥ २ ॥
पद युवराज समापियौ, भारीमाल नैं जाण।
सर्व साध नैं साववी, पालज्यो यांरी आंण ॥ ३ ॥
भारमलजी री आज्ञा थकी, विचरवौ शेपै काल।
चौमासौ करिवौ तिकौ, आज्ञा ले सुविशाल ॥ ४ ॥
दीक्षा दैणी अवर नैं, भारीमाल रै नांम।
पिण आज्ञा लीधां बिना, शिष्य न करणौ तांम ॥ ५ ॥
इच्छा हुवै भारीमाल री, शिष्य गुरु भाई सोय।
पदवी देवैं तेहनैं, तसु आज्ञा अवलोय ॥ ६ ॥
एक तणी आज्ञा मझै, रहिवौ रूड़ी रीत।
एहवी रीत परम्परा, बांधी स्वाम बदीत ॥ ७ ॥

टोलामां सूं कोई टलै, एक दोय दे आदि।
धूर्त्त बगुल ध्यानी हुवै, तिणनैं न गिणवौ साध॥ ८ ॥
तीर्थ मैं गिणवौ न तसुं, चिउं संघ नौ निन्दक जांण।
एहवा नैं बान्दै तिके, आज्ञा बार पिछांण॥ ६ ॥

ढाल : ४५

[पाड़वा बोलै म बोल—ए देशी]

एहवौ लिखत अमांम, सखर मर्यादा हो बांधी स्वामजी।
नीचै सावां रा नांम, कठिन संजम नैं पालण कांम जी॥ १ ॥
मेटण क्लेश मिथ्यात, थिर चित्त थापण हो मर्यादा थुणी।
बारु बुद्धि विख्यात, सुगुण सुबुद्धि हो हर्ष पांमैं सुणी॥ २ ॥
अपछन्दा अवनीत, दोषण काढ़ै हो इण मर्याद मैं।
कुबुद्धि कहै कुरीत, अवगुण ग्राही हो आत्म असमाधि मैं॥ ३ ॥
बिगड़्यौ पछै वीरभांण, आज्ञा लोप्यां सूं स्वामी अलगौ कियौ।
पाछै कह्यौ प्रबन्ध पहिछांण, दर्शण मोह पिण तिणनैं दबावियौ॥ ४ ॥
टोकरजी तंतसार, हाजर रहिंता हो स्वामी हरनाथ जी।
संत दोनूं सुखकार, वर जश बारु हो तासू विख्यात जी॥ ५ ॥
भारीमाल नैं भाल, पद युवराज हो पूज समापियौ।
संत बड़ा सुविशाल, दम्भ मेटीनैं हो थिर चित्त थापियौ॥ ६ ॥
सोम्य मूर्त्ति सुखकार, स्वाम प्रशंस्या हो अंत्य समय सही।
साझ थी संजम सार, कीर्ति भिक्खू हो आप मुखे कही॥ ७ ॥
बगड़ी शहर विशेष, स्वाम टोकरजी हो संथारो लियौ।
देश ढुंढार मैं देख रे, हद संथारौ हरनाथजी कियौ॥ ८ ॥
स्वाम भिक्खु रे प्रसाद, संत दोनूं हो जन्म सुधारियौ।
उपजै मन अहिलाद, स्मरण साचौ अति सुखकारियौ॥ ६ ॥
भारीमाल युवराज, सेवा स्वामी नी अन्त तांई शिरै।
पदवीधर भव पाज, अणशण आछौ वर्ष अठन्तरै॥ १० ॥
लिखमैंजी संजम लीध, कर्म प्रभावै गण सूं न्यारौ थयौ।
पड़िवाई कहौ कद सिद्ध, देसुंण अध पुदगल हो उत्कृष्ट जिन कह्यौ॥ ११ ॥
अखैरांमजी सु मण्ड, स्वाम भिक्खु पैहौ संजम आदर्‍यौ।
भेषधार्‍यां नैं छंड, शुद्ध मन सेती हो पवर चरण धर्‍यौ॥ १२ ॥
पारख जाति पिछांण, पारख साची हो थे पूर्ण करी।
लोहावट ना सुजाण, चरण अराध्यौ हो थिर चित्त आदरी॥ १३ ॥

घर तप छेहड़ै थित, छतीस नेला हो चौला में चलता रह्या।
अवै दिवाली दिन, वर्ष इकसठै परभव मैं गया॥ १४॥
अमरौजी छुटक धार, पंच काया थी अभवी अनन्त गुणा।
अभवी थी अधिकार, ज्ञानी देवां भाख्या पड़िवाई अनन्त गुणा॥ १५॥
संत बड़ा सुखरांम, वासी लोहावट नां हो पोत्याबंध सही।
समझाया भिक्खु स्वाम, सुर तरु सरीखो हौ चरण लियौ सही॥ १६॥
देव मूर्त्ति मम देव, धुनि इर्या नीं हो निर्मल धारणा।
वारु चर्ण विशेष, सोम्य सुप्रकृति महासुख कारणा॥ १७॥
आसरै बयालीस वास, निर्मल चारित्र हो स्वामी गुण निलो।
बासठै वर्ष विमास, दिवस पचीसे अणशन अति भलौ॥ १८॥
स्वाम भिक्खु साख्यात, तत्व ओलखाई बहुजन तारिया।
वर्णवियै स्यूं बात, स्वाम सौभागी हौ महा सुखकारिया॥ १९॥
समरूं हूं दिन रैंण, याद आयां सूं हो हिवड़ौ उलसै।
चित्त माहिं पांमूं चैन, बंछित पूर्ण तूं मुझ मन बसै॥ २०॥
पांच चालीसमीं ढाल, श्रमण शोभाया हो भजन बंछित फलै।
जय जश करण विशाल, स्मरण सम्पति हो मन चिन्तत मिलै॥ २१॥

सोरठा

छुटक तिलोकचन्द रे, वासी चेलावास रा।
चन्द्रभांण कर फन्द रे, जिलौ बांध नै फटाविया॥ १॥
मौजीरांम गण माहिं रे, शुद्ध मन सूं संजम लियौ।
कर्मा दियौ धकाय रे, ते पिण छुटक जांगज्यौ॥ २॥

दुहा

शिवजी स्वामी शोभता, स्वाम तणा सुवनीत।
पण्डित मरण कियौ पवर, गया जमारौ जीत॥

सोरठा

जाति चौरड़िया जांण रे, पुर ना वासी पिछांगज्यो।
चारित्र चन्द्रभांण रे, शुद्ध मन सूं संजम लियौ॥ १॥
भण्या बुद्धि भरपूर रे, पिण प्रकृति अहंकार नी।
अविनय अवगुण भूर रे, आज्ञा कठिन आराधवी॥ २॥
जिलौ बांधियौ जांण रे, तिलोकचन्द सूं तुरत ही।
मन में अधिकौ मान रे, साध फंटाया अवर ही॥ ३॥

संत अवर समझाय रे, स्वाम भिक्खु सिंह सारिषा।
एक एक नै ताहि रे, छोड्या बिहुं नैं जु जुआ ॥ ४ ॥
अवगुण अधिक अजौर रे, त्यां बोल्या भिक्खु तणा।
प्रत्यक्ष कषाय प्रयोग रे, असाध प्ररूप्या स्वाम नैं ॥ ५ ॥
भिक्खु बुद्धि भण्डार रे, शुद्ध मन सूं समझाविया।
प्राश्चित कर अङ्गीकार रे, पाछा आया गण मझे ॥ ६ ॥
सहु नैं किया निशङ्क रे, आया डंड अंगीकरी।
विरुऔ यामें बंक रे, प्रत्यक्ष लोकां पेखिऔ ॥ ७ ॥
श्रमणी संत समाधि रे, किणनैं डंड न ठहरावियौ।
सहु नै कह्या असाध रे, त्यांराहिज पग वांदिया ॥ ८ ॥
मांन घणौ घट माहिं रे, बिगड़ी तिणसूं बातड़ी।
प्राश्चित गहीं लैं ताहि रे, बिहुं नैं साथे छोड़िया ॥ ९ ॥
वर्णन बहु विस्तार रे, रास माहिं भिक्खु रच्यौ।
अल्प इहां अधिकार रे, दाख्यौ मैं प्रस्ताव थी ॥ १० ॥
अणन्दै बिना विचार रे, संथारौ कीधौ सही।
चौविहार चित्त धार रे, गाम बिठौरै पूज्य गण ॥ ११ ॥
उपनीं तृषा अपार रे, सतरै दिन सूं निसर्यौ।
सेणा करै संथार रे, तिणसूं पहिलां तोल नैं ॥ १२ ॥
पनजी छुटक पेख रे, संतोकचन्द शिवरांम नैं।
चन्द्रभांणजी देख रे, दोनूं भणी फंटाविया ॥ १३ ॥
केई पोतै हुवा न्यार रे, केइकां नैं दूरा किया।
अपछन्दां अवधार रे, त्यांनैं चारित्र दोहिलौ ॥ १४ ॥

ढाल : ४६

[करकसा नार मिली०—ए देशी]

नीत निपुण नगजी नीं निर्मल, कुंड्यां ना बसवांन।
संथारौ कर कारज सार्यो, कियौ जनम किल्याण।
सुवनीत शिष्य आय मिल्या, धन्य धन्य हो भिक्खु थांरा भाग्य।
सुखदाई शिष्य आय मिल्या ॥ १ ॥
स्वाम रांम बुन्दी ना वासी, जाति श्रावकी जांण।
जुगल जोडलै दोनूं जाया, सोम्य भद्र सुविहाण। सु० ॥ २ ॥
करि मनसोबौ आया कैलवै, पूज भिक्खु पै तांम।
आज्ञा रांम भणी आपीनैं, संजम दिरायो स्वाम। सु० ॥ ३ ॥

इह अवसर में श्रीजी द्वारै, साह भोपौ सुत सार।
नांम खेतसी निर्मल नीकौ, थयौ संजम नैं त्यार। सु० ॥ ४॥
दोय व्याह पहिली कर दीधा, तीजो करता त्यार।
उत्तम जीव खेतसी अखिरौ, उलटै बंछ्या न लिगार। सु० ॥ ५॥
बहिन दोय रावलियां त्याही, जाय तिहां किण वार।
वेन बैंनोई त्यातीलां नैं, समझावें सुखकार। सु० ॥ ६॥
विणज करत सुख जयणा विध सूं, वर वैराग वधाय।
चित्त चारित्र लेवा सूं चढ़तौ, आज्ञा मांगी नहीं जाय। सु० ॥ ७॥
इसा विनीत तात ना अखिरा, इतलै तिण पुर माहीं।
संजम ले रंगुजी सती, सांभल्या भोपै साह। सु० ॥ ८॥
भोपौ साह कहै खेतसी भणी रे, चित तुझ लैंण चरित्र।
कहै खेतसी बेकर जोड़ी, मुझ मन अधिक पवित्र। सु० ॥ ९॥
आज्ञा हर्ष धरी नैं आपी, वदै भोपौ साह वाय।
रंगुजी भेला करौ रे, इणरा महोछव अधिकाय। सु० ॥ १०॥
अड़तीसै संजम आदरियौ, भिक्खु ऋष रै हाथ।
विहार करी कोठारयै आया, लारै तौ चल गयौ तात। सु० ॥ ११॥
भिक्खु पूछयां सत जोगी भाखै, मन चिन्ता किम मोय।
पहिली उवे अबै आप मिलिया, पिय विरह पड़यौ नहीं कोय। सु०॥१२॥
परम विनीत खेतसी प्रगट्या, स्वाम भणी सुखकार।
कार्य भलायां बेकर जोड़ी, तुर्त करण नैं त्यार। सु० ॥ १३॥
कोमल कठिन वचन करि भिक्खु, सीख दियैं सुखकार।
क्षान्ति हर्ष कर वरै खेतसी, तहत वचन तंतसार। सु० ॥ १४॥
हर्ष धरी रहै भिक्खु हाजर, अन्तरंग प्रीत अपार।
सेवकरी रिझाया स्वामी, सो जांण लिया तंतसार। सु० ॥। १५॥
सतजुग सरिषा प्रकृत विनय सूं, निर्मल सतजोगी नाम।
गण आधार खेतसी गिरवौ, सरायौ भिक्खु स्वाम। सु० ॥ १६॥
सतजुगी चरित्र माहीं छै सगलौ, विवरासुध विस्तार।
इहां संक्षेप करी नैं आख्यौ, संत वर्णन मांहैं सार। सु० ॥ १७॥
पांच पांच ना पवर थोकड़ा, वर किया बोहली बार।
उत्कृष्टो तप दिवस अठारह, एकटंक उदक आगार। सु० ॥ १८॥
ऊभा रहिवारी तपस्या अति, एक पहोर उन्मान।
जे बहु वर्ष लग जाणज्यौ रे, खेतसी जी गुणखांन। सु० ॥ १९॥

सीत उष्ण मुनि सह्यौ अधिकौ, सकल संघ सुखकार।
स्वाम सतजुगी संभरूयां रे, आवै हर्ष अपार। सु० ॥ २० ॥
सतजुगी तणा प्रसंग थी रे, अधिक हुवौ उपगार।
बे बहिन भांणेजे चारित्र लीधौ, ते आगै चलसी विस्तार। सु० ॥ २१ ॥
वर्ष बावीस स्वांम नीं सेवा, छेहड़ा लग सुविचार।
भारीमाल नीं छेह लग भक्ती, आसरै वर्ष अठार। सु० ॥ २२ ॥
संलेखणा छेहड़ै करी सखरी, सखरोई संथार।
भिक्खु भारीमाल पाछै परभव मैं, असीयै वर्ष उदार। सु० ॥ २३ ॥
भिक्खु स्वाम प्रसाद थी रे, सतजुगी संजम भार।
पछै स्वामजी संजम पचख्यौ, औ भिक्खु तणौ उपगार। सु० ॥ २४ ॥
भिक्खु भांज्या भ्रम घणारा, भिक्खु भव-दधि पाज।
भिक्खु दीपक भरत क्षेत्र मैं, जगत उद्धारण जिहाज। सु० ॥ २५ ॥
भाग बले भिक्खु ऋष भारी, शिष्य मिलिया सुविनीत।
भिक्खु याद आवै निशदिन मुझ, पर्म भिक्खु सूं प्रीत। सु० ॥ २६ ॥
पवर ढाल कही छयालीसमीं, सतजुगी नौं विस्तार।
सेव करै स्वामी नीं सखरी, जय जश करण उदार। सु० ॥ २७ ॥

दुहा

सांम रांम साधु सरल, संतां नैं सुखदाय।
भद्र प्रकृति भारी घणी, नीत निपुण नरमाय ॥ १ ॥
वर्ष पैंसठै उपवास मैं, भिक्खु पाछै भाल।
पाली मैं परभव गया, निर्मल सांम निहाल ॥ २ ॥
रांम ऋषि रलियांमणा, इन्दुगढ़ मैं आय।
चौला मैं चलता रह्या, सितरै वर्षे ताय ॥ ३ ॥
देवगढ़ दीख्या ग्रही, संभुजी सुविचार।
बार बार शंका पड़ी, छोड़ दियौ तिण बार ॥ ४ ॥
तौ पिण गण बारै छतौ, करै साधां नीं सेव।
साध आहार आंण्यां पछै, आप ल्यावै नित्यमेव ॥ ५ ॥
पीत मुनि थी अति पवर, मुनि जिण गांम मझार।
आवै दर्शण करण कुं, पिण शंका थी हुवौ खुवार ॥ ६ ॥
संघजी थौ गुजरात रौ, चर्ण लियौ चित्त चाहय।
शिरियारी मैं निकल्यौ, दुघर व्रत दिखाय ॥ ७ ॥

तदनन्तर संजम लियौ, वरल्या बौहरा जोय।
एकचालीसें आसरें, नांम नांनजी सोय ॥ ८ ॥
स्वाम भिक्खु पाछैं सही, एकोनेंरे अवलोय।
तेला में चलता रह्या, धर्म ध्यान में जोय ॥ ९ ॥

ढाल : ४७

[परम गुरु पूज्य जी तुम प्यारा रे—ए देशी]

नांनजी पछै चरण निहालौ रे, मुनि नेम मोटो गुण मालौ रे।
वासी रोयट नौं सुविशालौ।
हर्ष ऋषराय नैं नित्य वन्दौ रे॥ १ ॥

पवर चर्ण भिक्खु पासें पायौ रे, संजम बहु वर्ष शोभायौ रे।
मुनि जिन शासन दीपायौ।
भिक्खु शिष्य शोभता नित्य वन्दौ रे ॥ २ ॥

शहर नैंणवै कियौ संथारौ रे, पाम्यौ भवसायर नौं पारौ रे।
औ तौ भिक्खु तणौ उपगारौ ॥ ३ ॥

तदनन्तर वर्ष चौमालौ रे, वैणीरांमजी अधिक विशालो रे।
निकलंक चरण चित्त निहालौ ॥ ४ ॥

दीख्या भीखण जी स्वामी दीधी रे, बसवांन बगड़ी रा प्रसिद्धि रे।
मुनि गण माहिं शोभा लीधी ॥ ५ ॥

हुवौ वैणीराम ऋषि नीको रे, प्रबल पण्डित चरचावादी तीखौ रे।
मुनि लियो सुजश नौं टीकौ ॥ ६ ॥

बारु बाचत सखर बखांणौ रे, सखर हेतु दृष्टान्त सुजांणौ रे।
भर्त में प्रगट्यौ जिम भांणौ ॥ ७ ॥

हद देशना में हुशियारौ रे, श्रोता नैं लागै अधिक सुप्यारौ रे।
चित्त माहैं पांमैं चमत्कारौ ॥ ८ ॥

जाय मालव देश जमायौ रे, खण्डीसूं चरचा कर तायौ रे।
बहु जन नैं लिया समझायौ ॥ ९ ॥

त्यांरी धाक सूं पाखण्ड धूजै रे, वैणीराम केशरी जिम गूंजै रे।
प्रगट हलुकर्मी प्रतिबूजै ॥१०॥

उत्पत्तिया है बुद्धि उदारौ रे, समझाया घणा नरनारी रे।
हुवौ जिण शासण शिणगारौ ॥११॥

घणां नैं दियौ संजम भारो रे, धर्म वृद्धि-मूर्त्त सुखकारौ रे। •
ऐ तौ भिक्खु तणौ उपगारो ॥१२॥

कीयौ स्वाम भिक्खु पछैं कालौ रे, शहर चासटू मैं सुविशालौ रे।
सवत् अठारह सितरैं निहालौ ॥ १३ ॥

भिक्खु तार्‍या घणा नर नारो रे, भवितारक भिक्खु विचारौ रे।
स्वामी जय जश कर्ण श्रीकारो ॥१४॥
सैंतालीसमीं ढाल सुहायो रे, भिक्खु शिष्य मोटा मुनिरायो रे।
स्वाम संग पर्म सुख पायो ॥१५॥

दुहा

तिण अवसर कोटा तणा, दौलतरामजी देख।
आया तसु टोला थकी, सन्त च्यार सुविशेष ॥ १ ॥

सोरठा

दोय रूपचन्द देख रे, वारु ऋष वर्द्धमांनजी।
सूरतौजी संपेख रे स्वाम गणे संजम लियौ ॥ १ ॥
रूपचन्द वद्धमांन रे, छूटौ तेह प्रयोग थी।
प्रकृति अजोग पिछांण रे, सूरतो पिण छूटक थयौ ॥ २ ॥

दुहा

बड़ा संत वर्द्धमांनजी, संजम सरल सुधार।
विचरत विचरत आविया, देश ढूंढाड़ मझार ॥ २ ॥
लू रा कारण थी लियौ, मारग मैं संथार।
सम्बत् अठारह पचावनैं, लीधौ संजम भार ॥ ३ ॥
लघु रूपचन्द स्वामगण, माधौपुर रै माहिं।
अणशण रौ बंधौ कियौ, वैणीरांमजी पाहि ॥ ४ ॥
पछै परिणाम कचा पड़्या, बोल्यौ एहवी वाय।
हूं थांरै नहीं काम कौ, रत्न कांकरौ थाय ॥ ५ ॥
इम कहीनैं अलगौ थयौ, काल कितौ इम थाय।
एक चेलौ कीधां पछै, आयौ इन्द्रगढ़ मांय ॥ ६ ॥
शिष्य तज कहै गृहस्थां भणी, तंत सूत्र मुझ तांम।
भिक्खु नैं वहिरावज्यो, मुझ गुरु भिक्खु स्वाम ॥ ७ ॥
इम कही साधपणौ पचख, दियौ संथारौ ठाय।
पांच दिवस रै आसरै, परभव पहोंतौ जाय ॥ ८ ॥

सोरठा

जति भेष नैं जांण रे, मयारांमजी मूकियौ।
प्रत्यक्ष ही पहिछांण रे, भेषधार्‍यां मैं आवियौ ॥ ३ ॥

भेषधारी नें छंड रे, संजम लीधौ स्वाम पै।
बहु वर्ष चरण सुमण्ड रे, निकल कालवादी थयौ ॥ ४ ॥
विगतौ नांम विचार रे, वासी बोरावड़ तणौ।
संजम ले सुखकार रे, कर्म प्रभावे निकल्यौ ॥ ५ ॥

ढाल : ४८

[बाजटो पर नहीं बेसणो मुनि पग ऊपर पग मेल०—ए देशी]

तदन्तर टूंगचना वासी, सुखजी नांम सुखकार।
स्वाम भिक्खु पें संजम लीधौ, आंणी हर्ष अपार ग ॥
भिक्खु स्वाम उजागर आपरा।
सुविनीत भला शिष्य, जिन मार्ग जमायौ रे।
सुगुणा परम पूज रे, प्रसंग सुज्ञानी जय जश छायौ रे ।भि०।१॥
स्वाम भिक्खु पछै चौसठे, कांई शहर देवगढ़ सार।
अणशण कर आतम उजवालियौ, तौ शुद्ध दश दिन संथार। भि०। २ ॥
वर्ष तेपनें गिरियारी वासी, हेम आछा हद जाति।
संजम स्वाम समाप्यो सुवर्णन, हेम नवरसै विख्यात। भि०। ३ ॥
उत्पत्तिया बुद्धि आगला, स्वामी हेम सखर सुविनीत।
प्रबल बुद्धि पुन्य पोरसा, कांई पूर्ण पूज्य सूं प्रीत। भि०। ४ ॥
परम विनयवन्त परखिया, वारु बुद्धि भारी सुविचार।
हद कियौ सिंघाड़ौ हेम नौं, भारी ज्ञानी गुणां रा भण्डार ।भि०। ५ ॥
हेम सुनिर्मल हीया तणा, अरु हेम स्वामी हितकार।
हेम सुमति ना सागरु, अरु हेम गुप्ति गुणकार। भि०। ६ ॥
हेम दिसावांन दीपतौ, मुनि हेम मोटौ महाभाग।
हेम उजागर ओपतौ, वर हेम हीयै वैराग। भि०। ७ ॥
हेम इर्या धुनि ओपती, गति जांणें चाल्यौ गजराज।
हेम गम्भीर गैहरौ घणौ, औ तौ हेम गरीब निवाज। भि०। ८ ॥
हेम दया दिल में घणी, शुद्ध सत दत हेम सधीर।
हेम शील माहीं रम रह्यौ, वारु कर्म काटण वड़ वीर ।भि०। ९ ॥
हेम संग रहित सुरतरु, कांई हेम मेरू जिम धीर।
हेम चिन्तामणि सारीषौ, औ तौ हेम जांणें पर पीर। भि०। १० ॥
सुन्दर मुद्रा हेम नीं, अरु अतिशय कारी ऐन।
पेखत चित्त प्रसन्न हुवै, चित्त माहैं पांमै चैन। भि०। ११ ॥
सम्बत् अठारहसै तेपनें पाछै, धर्म वृद्धि अधिकाय।
बंक चूलिया में वार्ता, आ तौ प्रत्यक्ष मिली [illegible] आय ।भि०।१२॥

बारह संत तौ आगै हुंता, कांई स्वाम भिक्खु पै सोय।
हेम हुवा संत तेरमा, त्यां पछै न घटियौ कोय। भि०। १३ ॥
भागबली भिक्खु तणौं, शिष्य हेम हुवा वृद्धिकार।
पाखण्डी पग माण्डै नहीं, पड़ै हेम नीं धाक अपार। भि०। १४ ॥
चौथे आरै सांभल्या, एतो क्षमा शूरा अरिहंत।
प्रत्यक्ष आरै पंचमैं, ऐतौ हेम सरीषा सन्त। भि० ॥ १५ ॥
भिक्खु भारीमाल ऋषराय रै, बर्तारा मैं हेम बदीत।
चर्चावादी शूरमां, लिया घणा पाखड्यां नैं जीत। भि० ॥ १६ ।
घणां जणां नैं संजम दियौ, देश व्रत घणां नैं सुलभ्भ।
बहु भणाय पंडित किया, हेम जिन शासन रौ थम्भ। भि० ॥ १७ ॥
हेम नवरसा मैं कह्यौ, वर हेम तणुं विस्तार।
ग्रन्थ बधतौ जांणनैं, इहां संक्षेप्यौ अधिकार। भि० ॥ १८ ॥
भिक्खु भारीमाल चलियां पछै, ऋषराय तणैं वर्तार।
उगणीसै चौके समैं, शिरियारी मैं हेम सन्थार। भि० ॥ १९ ॥
भाग प्रबल भिक्खु तणा, हुवा सन्त शासण शिणगार।
हेम गजेन्द्र समो गुणी, बलि आखूं अवर अणगार। भि० ॥ २० ॥
आठ चालीसमीं शोभती, आखी ढाल रसाल अपार।
स्वाम भिक्खु गण सुर तरु, ओ तौ जय जश करण उदार। भि० ॥ २१ ॥

दुहा

तदनन्तर तपसी भलौ, वर चपलोत विचार।
वासी कैलवा नौं पवर, उदैराम अधिकार ॥ १ ॥
पचावनैं पाली मझै, पूज भीखणजी पास।
श्रावण मैं संजम लियौ, अधिकौ धर्म उजास ॥ २ ॥
अति उमंग तप आदर्‍यो, वर आंबल बर्द्धमांन।
बयालीस ओली लगै, चढ्यौज चढ़तै ध्यांन ॥ ३ ॥
अवर तप कीधौ अधिक, छठ छठ आदि विचार।
आठ सौ इकतालीस आसरै, आंबिल किया उदार ॥ ४ ॥
साठै स्वाम पछै सही, सखरो कर संथार।
चेलावास चलतौ रह्यौ, भारीमाल उतार्‍यौ पार ॥ ५ ॥

सोरठा

तदनन्तर तिणवार रे, खुशालजी संजम लियौ।
प्रकृति कठिण अपार रे, कर्म जोग थी निकल्यौ॥ १ ॥
ओटौ जाति सोनार रे, वासी खारचियां तणौ।
स्वाम कनैं समाचार रे, आय कहै इह रीत सूं॥ २ ॥
अति कायौ हुवौ बाप रे, आज्ञा दी मुझ इण परै।
तूं मुझ क्यूं दै ताप रे, कर तुझ दाय आवै जिसौ॥ ३ ॥
म्हारी कांनी सूं जाण रे, जोगी जति व्है ढूंढियौ।
इक नर सुणतां कहि बांण रे, स्वामी तब संजम दियौ॥ ४ ॥
प्रकृति तणैं प्रताप रे, संजम पाळणौ दोहिलौ।
कठिण परीषा ताप रे, छूटौ ते तब छिनक में॥ ५ ॥
नाथो जी पोरवाल रे, वासी देसुरी तणौ।
सुत गृह छांडी सार रे, संजम सतरै स्वाम पै॥ ६ ॥
जीभा लोलपी जांण रे, मुनि बांधी मर्याद नैं।
छूटौ तेह पिछांण रे, पिण श्रद्धा सनमुख रह्यौ॥ ७ ॥

ढाल : ४६

[जै जै जै गणपति रे नमूं—ए देशी]

समत अठारै वर्ष सतावनैं, गांम रावळियां गुणियै
लघु वेस ऋष राय दीख्या ली, थिर चित्त सेती थुणियै।
जै जै जै गणपति रे नमुं॥ १ ॥
बंब जाति चतुरौ साह सुतवर, नाम रायचन्द नीकौ।
वर्ष इग्यारह आसरै वय मैं, संजम सखर सधीकौ। जै० ॥ २ ॥
हथिणी होदै हर्ष हुऔ अति, मातु कुशालां बारु।
साथै संजम पूज समाप्यौ, चैत्री पुनम चारु। जै० ॥ ३ ॥
प्रबळ बुद्धि गुण पुन्य पेखनैं, पर्म पूज फरमायो।
पद लायक ए पुन्य पोरसौ, वचनामृत बरसायो। जै० ॥ ४ ॥
दिशावांन ऋषराय दीपतौ, भाग्य बली वृद्धि भारी।
हस्तमुखी मूर्त्ति हद हर्षत, पेखत मुद्रा प्यारी। जै० ॥ ५ ॥
पाट तीजै आगुंच परूप्यां, स्वाम वचन सुखदाया।
जम्बू स्वाम • जैसा जैवन्ता, जाभा ठाठ जमाया। जै० ॥ ६ ॥

अन्तकाल भिक्खु नैं अधिकौ, साझ सखर सुखदाया।
भारीमाल रै पास भुजागल, रायचन्द ऋष राया। जै० ॥ ७ ॥
गुणंतरै वर्ष भारीमाल नीं, आज्ञा ले अगवांणी।
प्रथम शिष्य ऋष जीत कियौ, निजपाट लायक सुविहांणी। जै० ॥ ८ ॥
भारीमाल नैं साझ दियौ अति, अन्त समय अधिकायौ।
आप ओजागर अधिक अनोपम, दीन दयाल दीपायौ। जै० ॥ ९ ॥
तस उपगार तणौ वर्णन, करतां अति ग्रन्थ बधियौ।
भिक्खु तणौ सम्बन्ध इहां, तिण कारण संखेपियौ। जै० ॥१०॥
संसारी लेखै मामा सतजुगी, महा मतिवन्ता।
भल भाणेज रायचन्द भणियै, जशधारी जैवंता। जै० ॥११॥
भिक्खु ऋष अति भाग बली, शिष्य मिलिया रायचन्द नीका।
गिरवा गैहर गंभीर गुणागर, पूज्य प्रथम ही परीखा। जै० ॥१२॥
बहु वर्षा लग मार्ग नीं वृद्धि, जिनजी आगुं जांणी।
भिक्खु रै अति भागबली, ऋषराय मिल्या शिष्य आंणी। जै० ॥१३॥
ऐसा भिक्खु आप उजागर, शिष्य पिण मिल्या सरीखा।
तस पग छेहड़ै सन्त हुवा ते, सांभलियै सुवृद्धिका। जै० ॥१४॥
ए गुणपचासमीं ढाल अनुपम, मिल्यौ संत मन मान्यौ।
कहियै धर्म वृद्धि नौं कारण, जय जश कर्ण सुजांण्यौ। जै० ॥१५॥

दुहा

समत अठारै सतावनैं, जेठ मास मैं जोय।
पिता पुत्र घर चरण पद, हर्ष घणौ अति होय ॥ १ ॥
ताराचन्दजी तात सुत, डूंगरसी महा मण्ड।
पिता भार्या परहरी, सुतन सगाई छण्ड ॥ ३ ॥
बड वैरागी संत बिहुं, सखरौ कर संथार।
भिक्खु स्वाम पछै उभय, समचित जन्म सुधार ॥ २ ॥
अणशण इकतालीस दिन, ताराचन्द उवेख।
दश दिन अणशण दीपतौ, डूंगरसी नैं देख ॥ ४ ॥
तदनंतर संजम लियौ, वरल्या बौहरा ताहि।
जीवौ मुनि तासोल नौं, महा मोटौ मुनिराय ॥ ५ ॥
सरल भद्र प्रकृति सखर, तीन पाट नीं ताम।
सेव करी साचै मनैं, धुन सुविनय मैं श्याम ॥ ६ ॥

भिक्खु भारीमाल पाछै भली, नेऊंए वर्ष निहाल।
गोधुंदै अणगण गुणी, महा मुनि गुणमाल॥ ७॥

ढाल ५०

[चेत चतुर नर कहै तनै सत गुरु—ए देशी]

जोगीदासजी स्वामी जोगवर, तदनन्तर त्रिया त्यागी।
स्वाम भीखणजी संजम दीधौ, बालपणं वड वैरागी।
भ्रम छांड भिक्खु शिष्य भजलै, तज मिथ्या मति नालंदा।
कर्म जाल काटौ करणी कर, पर्म ज्ञान पर्मानन्दा॥ १॥
शहर कैलवा रा वासी शुद्ध, जोगीदास साचौ जोगी।
सखर सौभागी ममता त्यागी, भल सुमति पिण नहीं भोगी॥ २॥
अल्प काल में अचांणचकरौ, शहर पीसांगण में मुणियौ।
चौविहार संथारौ चोखौ, थिर चित्त सूं मुनिवर थुणियौ॥ ३॥
गुणसठै वर्ष मुनि गुणवंतौ, पूज्य छतां परभव पहुंतौ।
आतम तारयौ जन्म सुधारयौ, हियै निर्मल ऋषराज हुंतौ॥ ४॥
तदनन्तर जोधौ मारु ते, गांम केरड़ा नौं गुणियौ।
स्वाम भिक्खु स्वहथ संजम शुद्ध, भारी तपसी तप भणियौ॥ ५॥
अढ़ी मास तप आछ आगारै, तप उत्कृष्टपणैं तपियौ।
सरल भद्र मुनिवर सौभागी, जाप विविध तन मन जपियौ॥ ६॥
दिन अड़तीस कोचलै दीप्यौ, संथारौ सखरौ सुणियौ।
स्वाम पछै परभव सुमति शुद्ध, जोधौ धिन माता जणियौ॥ ७॥
शहर खैरवा रा भगजी शुद्ध, वर आज्ञा दी बहिन बड़ी।
संजम भिक्खु स्वाम समाप्यौ, सखर विनय थी शोभ चढ़ी॥ ८॥
जाति वैद मूंहता जश धारी, भगजी भक्ति करी भारी।
भिक्खु भारीमाल ऋषराय तणी भल, पेखत ही मुद्रा प्यारी॥ ९॥
ऋषराय तणैं वरतारै रूड़ौ, पंडित मरण मुनि पायौ।
निनांणुवैं आत्म नैं निन्दी, शुद्ध परिणामे शोभायौ॥१०॥

सोरठा

जोगड़ जाति सुजांण रे, वासी बीदासर तणुं।
पूज समीप पिछांण रे, भागचन्द आवी करी॥ १॥
वारु गुणसठै वासरे, चारित्र धारयौ चूंप सूं।
वर्ष कितैक विमास रे, कर्म जोग थी निकल्यौ॥ २॥

चन्द्रभाणजी माहिं रे, रह्यौ पंच मास आसरै।
भारीमाल पै आय रे, कहै मुझनैं ल्यो गण मझै॥ ३ ॥
हूं रह्यौ चन्द्रभाण माहिं रे त्यांनैं साध न श्रद्धियौ।
थे मोटा मुनिराय रे, साधु श्रद्धतौ स्वाम गण॥ ४ ॥
भारीमाल ऋषराय रे, छेद दियौ षटमास रौ।
लियौ तास गण माहिं रे, अवलोकी भिक्खु लिखत॥ ५ ॥
आपां मांहिलौ जांण रे, जाय चन्द्रभांणजी मझै।
अल्पकाल पहिछांण रे, आहार पांणी भेली करै॥ ६ ॥
पिण आपांनैं साध रे, श्रद्धै शुद्ध मन सूं सही।
श्रद्धै तास असाध रे, नवी दीख्या दैणी न तसु॥ ७ ॥
जथा जोग दण्ड जांण रे, दे लैणुं तस गण मझै।
वर्ष सैंतीसै बांण रे, लिखत भिक्खु ऋष नौं कियौ॥ ८ ॥
एहवौ लिखत अवलोक रे, नवी दीख्या दीधौ न तसु।
छेद दे मेट्यौ दोष रे, भारीमाल व्यवहार थी॥ ९ ॥
पासत्था पास पिछांण रे, आहार आद लेवै देवै तसुं।
निशीथ बीस मैं जांण रे, डंड चौमासी दाखियौ॥ १० ॥
चौमासी डंड स्थान रे, वार वार सेव्यां छतां।
व्यवहार प्रथम कही बांन रे, चौमासी प्राछित तसु॥ ११ ॥
इम बहु न्याय विचार रे, वलि मर्याद विमास ने।
बारु देख व्यवहार रे, छेद देई माहैं लियौ॥ १२ ॥
बीत्यौ कितोयक काल रे, फिर छूटक थयी एकलौ।
इक शिष्य कीधौ न्हाल रे, नांम भवांनजी तेहनौं॥ १३ ॥
डंड ले आया माहिं रे, तपनौं अभिग्रह आदर्यौ।
नायौ पालणी ताहि रे, तिण कारण थयौ एकलौ॥ १४ ॥
काल कितोक बदीत रे, फिर आयौ भारीमाल पै।
सन्त सत्यां नैं सुरीत रे, कर जोड़ी वंदना करी॥ १५ ॥
वोलै बे कर जोड़ रे, मुझनैं लेवौ गण मझे।
अढ़ी द्वीप ना चौर रे, त्यांसूं हूं अधिकौ घणौ॥ १६ ॥
छठ छठ तप पहिछांन रे, जावजीव अदराय दौ।
कहो तौ करूं संथार रे, पिण मुझनैं ल्यौ गण मझे॥ १७ ॥
भारीमाल बहु जांण रे, दीख्या दे माहिं लियौ।
संबत अठारै पिछांण रे, एकोतरै चर्ण आदर्यौ॥ १८ ॥

मास खमण बहु बार रे, विकट तप मुनिवर कियो।
सताणवें सुखकार रे, जन्म सुधारी जश लियो ॥ १६ ॥

ढाल तेंहिज

भारी तपसी भोप हुवो भल, कोसीथल वासी कहियो।
जाति तणो चपलोत जांणिजे, लाभ स्वाम हाथे लहियो ॥ ११ ॥
पाली में संजम ले प्रत्यक्ष, मुनि नगसा करवा मंडियो।
कवहिक छासठ कवहिक अड़सठ, चड़त चड़त अधिको चढ़ियो ॥ १२ ॥
कदहिक चार मास में कीधा, सतर पारणा सुमति सहू।
ग्रन्थ बहुल भय तप वर्णन गुण, तिण कारण सहु ते न कहूं ॥ १३ ॥
साड़ी चार पहोर संथारो, स्वाम पछे शुद्ध गति सारू।
पाली धर्म उद्योत प्रगट हद, वर्ष छासठें मुनि बारू ॥ १४ ॥
मुनि महिमागर अधिक उजागर, गुण सागर नागर ज्ञानी।
वचन सुधा वागर धर्म जागर, धर्म धुनि वर महा ध्यानी ॥ १५ ॥
अञ्जन मञ्जन चन्दन अङ्गन, शिव गञ्जन रञ्जन साधी।
भ्रम भञ्जन भिक्खु गुरु भेटी, अरि गञ्जन मनि आराधी ॥ १६ ॥
स्वाम शरण मुख करण तरण शुद्ध, तम भ्रम हरण स्वाम तरणी।
शिव वधू वरण धरण दुधर सम, कहा कहूं मुनि नीं करणी ॥ १७ ॥
सुर गिर धीर गंभीर समीर, सदा सुख सीर सुतार सजे।
तोड़ जंजीर वीर बड़ तुम हो, रूप भिक्खु गुण हीर रजे ॥ १८ ॥
पर्म प्रतीत रीत प्रभु वच से, लोक वदीत अनीत लजे।
ज्ञान संगीत नीत हद गुणियण, भल भिक्खु रूप जीत भजे ॥ १६ ॥
वांण विमल अति निमल कमल वर, जमल अमल शिव मग जांणी।
समल तमल मिथ्या मति सोषी, आप सुर्ति अघदल हांणी ॥ २० ॥
आप तणें प्रसाद अनोपम, नंत मुनीश्वर बहु तरिया।
आप सुरतरु आप गुणोदधि, आप घणा ना अघ हरिया ॥ २१ ॥
स्मरण स्वांम तणों नित साधूं, स्वाम तणों मुझ नित शरणों।
आशा पूरण स्वाम अनोपम, निर्मल चित्त कीधों निरणों ॥ २२ ॥
सखरा स्वाम मुनि गुण साचा, म्हे संक्षेप थकी गुणिया।
जल सागर किम भालें गागर, गुण अनन्त अथग अल्प थुणिया ॥ २३ ॥
निमल पचासमी ढाल निहाली, भल भिक्खु गुण सूं भरिया।
जय जश सम्पत्ति करण जांणजो, रण खण्ड भिक्खु अवतरिया ॥ २४ ॥

दूहा

अड़तालीस मुनि अख्या, पूज छतां पहिछान।
चारित्र लीधौ चित्त धरी, उज्झम अधिकौ आंण॥ १ ॥
अष्टवीस गण में सही, सखर रह्या सुजगीस।
गुरु छंदै गिरवा गुणी, अलग रह्या छै बीस॥ २ ॥
बीसा मांहै एक वर, रूपचन्द शुद्ध रीत।
छेहड़ै अणशण चर्ण लिये, पूज आण प्रतीत॥ ३ ॥
पूज थकां चारित्र प्रगट, अब सतियां अधिकार।
कैईक बारै नीकली, पहोंती कैईक पार॥ ४ ॥
एक साथ व्रत आदर्या, तीन जण्यां तिण वार।
कुशलां जी बड़ी करी, कुशल क्षेम अवतार॥ ५ ॥

ढाल : ५१

[खम्यावंत जोय भगवन्त रौ ज्ञान—ए देशी]

पवर चरण शुद्ध पालताजी, कुशलांजी नैं विचार।
दीर्घ पृष्ठ गुंदोच मैं जी, ते डंसियौ तिण वार।
खिम्यावंत धिन सतियां अवतार॥ १ ॥
जंत्र मंत्र झाड़ा भणी जी, बंछ्यौ नहीं तिण वार।
शुद्ध परिणामे महासती जी, पोंहती परलोक मझार॥ २ ॥
मटूजी मोटी सती जी, स्वाम आण शिर धार।
पद आराधक पामियौ जी, औ भिक्खु नौं उपगार॥ ३ ॥

सोरठा

अजबू प्रकृति अजोग रे, कर्म जोग सूं नीकली।
प्रकृति कठिण प्रयोग रे, चारित्र खोवै छिनक मैं॥ १ ॥

ढाल तेहिज

नांम सुजांणा निरमली जी, देऊ जी दीपाय।
स्वाम तणैं गण मैं सही जी, परभव पोंहती जाय॥ ४ ॥

सोरठा

तदनन्तर तिण वार रे, साधुपणौ लीधौ सही।
नेउ नांम निहाल रे, कर्म प्रयोगे नींकली॥ २ ॥

ढाल तेहिज

सती गुमांना शोभती जी, संजम वर संथार।
इमज कसूंबांजी अखी जी, अणशण अधिक उदार ॥ ५ ॥
जीऊजी वले जांणियै जी, स्वाम तणैं गण सार।
पोतै बहु सुत परहरी जी, वासी रीयां रा विचार ॥ ६ ॥
काल कितैक पछै कियौ जी, शहर पीपांड संथार।
इगताली खंडी ओपती जी, मांडी करी निवार ॥ ७ ॥

सोरठा

फतू अखूजी न्हाल रे, अजबू चंदूजी अजा।
भेषधारयां में भाल रे, पछै चर्ण लियौ पूज पैं ॥ ३ ॥
समत अठारै सोय रे, वर्ष नेंतीसैं वारता।
लिखत करी अवलोय रे, मुनि लीधौ टोला मझै ॥ ४ ॥
आप मतै अवधार रे, मन छंदै रही मोकली।
अति तसु कठिण अपार रे, छांदै गुरां रै चालणौ ॥ ५ ॥
अशुद्ध प्रकृति अविनीत रे, सुमते जांणौ स्वामजी।
शिष्य भिक्खु शुद्ध रीत रे, तंतु थाप्यौ तेहनैं ॥ ६ ॥
तुझनैं कल्पै तेह रे, ते तंतु लेवौ तुम्हे।
इम कही कपड़ौ देह रे, फतु आदि पांचां भणी ॥ ७ ॥
पूछ्यौ तास प्रमांण रे, कहै मुझ अधिकौ को नहीं।
पूज करै पहिछांन रे, निसुणौ निरणय निर्मलो ॥ ८ ॥
अखैराम अणगार रे, मेल्यौ कपड़ौ मापवा।
तस थांनक तिणवार रे, माप्यां अधिकौ निकल्यौ ॥ ९ ॥
इम तंतु अति राख रे, झूठ बोली बले जांणनैं।
शुद्ध नहीं संजम साख रे, नीत चरण पालण तणी ॥ १० ॥
च्यारूं ते पहिछांन रे, चैनां भेली पंचमी।
झट पांचूं नैं जांण रे, छोड़ी चंडावल मझै ॥ ११ ॥

ढाल तेहिज

मैंणाजी मोटी सती जी, वासी पुरना विचार।
स्वाम कनैं संजम लियौ जी, छांडी निज भरतार ॥ ८ ॥
पढ़ो भणी पंडित थई जी, बहु सूत्रां नीं रे जाण।
साठै संथारौ करै जी, कीधौ जन्म किल्याण ॥ ९ ॥

सोरठा

धनू केलीजी धार रे, रत्तू नन्दूजी बलि।
मांढा गांम मझार रे, छोडी यां च्यारां भणी॥ १२॥

ढाल तेहिज

रंगूजी रलियामणा जी, श्रीजीद्वारा ना सार।
पोरवाल प्रगट पणैं जी, संजम लियौ सुखकार॥ १०॥
अड़तीसै व्रत आदर्‌यौ जी, स्वाम खेतसी रै साथ।
शिरियारी चलता रह्या जी, बारु भणी विख्यात॥ ११॥
सदांजी मोटी सती जी, तलेसरा तंत सार।
श्रीजी द्वारा ना सही जी, सखर कियौ संथार॥ १२॥
सुत बहु तज संजम लियौ जी, कंटाल्या ना कहिवाय।
अणशण लोढोती मझै जी, फूलां जी सुखदाय॥ १३॥
उत्तम अमरां आर्यां जी, स्वाम तणैं उपगार।
जीतब जन्म सुधारियौ जी, सखरौ कर संथार॥ १४॥
ढाल एक पचासमीं जी, भिक्खु नैं गण भाल।
बड़ी बड़ी सतियां हुई जी, बारु गण सुविशाल॥ १५॥

सोरठा

रत्तू ले चारित्र रे, छूटी खोयौ चर्ण नैं।
पाली माहिं पवित्र रे, पछै संथारौ पचखियौ॥ १॥
उपाय किया अनेक रे, भेषधार्‌यां लेवा भणी।
तौ पिण राखी टेक रे, त्यां माहैं तौ नां गई॥ २॥

दुहा

शुद्ध चित्त सूं तेजु सती, पोरवाल पहिछांण।
वासी ढोल कंबोल रा, संजम लियौ सुजांण॥ ३॥
काल कितैक पछैं कियौ, संथारौ सुविहांण।
दिवस बेयांली दीपतौ, कीधौ जन्म किल्याण॥ ४॥

सोरठा

बनांजी सुविचार रे, संजम लीधौ शुद्ध मनैं।
कर्मां करी खुवार रे, टोला सूं न्यारी टली॥ ५॥

दुहा

वगतुजी वगडी तणा, वर कुल जाति संवेत।
हीरां हीर कणी जिसी, भागीमाल ना नेन॥ ६ ॥
नांम नगी गुण निर्मली, वैणीरामजी री बहैन।
एक दीवस तीनूं अजा, चर्ण धार चित चैन॥ ७ ॥
चौमालीसै वर्ष स्वामजी, संजम दे इक साथ।
सूंप्या रंगुजी भणी, बारूं जग विख्यात॥ ८ ॥
ए तीनूं भिक्खु पछै, संथारा कर सार।
महियल मोटी महामती, पांमी भवनौ पार॥ ९ ॥
सरूप भीम ऋष जीत नीं, अजबू भुवा सुजोग।
चौमाले वार्‍यौ चर्ण, अठासीयै परलोग॥ १० ॥
शिरियारी ना महामती, पन्नाजी पहिछांण।
संजम पाल्यौ स्वाम गण, संथारै सुविहांण॥ ११ ॥

सोरठा

कांकरोली री कहाय रे, लालांजी संजम लियौ।
परवस सीत सुपाय रे, इण कारण गृह आविया॥ १२ ॥
बहु वर्षां सुविचार रे, श्रावक धर्मज साधियौ।
तप जप कियौ उदार रे, [illegible]॥ १३ ॥

ढाल ५२

[ज्यारां इन्द्र चन्द्र रखवाला—ए देशी]

गुमांना महा गुणवंती, तासोल तणी चित्त शांती।
जीवा मुनि री बड़ी मा जांणी, सती संजम लियौ सुखदांणी हो लाल।
सतियां नां सज मोटी॥ १ ॥
एक मास कियौ अति भारी, दोय मास छेहड़ै दिल धारी।
शुद्ध राजनगर संथारौ, सती सरल भद्र सुखकारौ हो॥ २ ॥
वर शहर बुंदी रा वासी, वारु श्रावगी कुल सुविमासी।
खेरवै संथारौ खंती, खेमां जी खेम करंती हो॥ ३ ॥

सोरठा

जूं परीषह थी जांण रे, छूटी जसु छिनक मैं।
चौखी टली पिछांण रे, कांकरौली री विहुं कही॥ १ ॥

ढाल तेहिज

सतजुगी री बहिन सुखवासी, ऋष रायचंदजी री मासी।
पिउ पुत्र तज्या पहिछांणी, रूपांजी महा रलियांणी हो ॥ ४ ॥
संजम बावनैं सधीकौ, सतावनैं संथारौ नीकौ।
खुशालांजी री लघु बहिन कहियै, रूपांजी जग जश लहियै हो ॥ ५ ॥
सरूपांजी कंटाल्यै संथारौ, अग्रवाल जाति अवधारौ।
माधोपुर ना बसवांनौ, सुत तीन तज्या व्रत ध्यांनो हो ॥ ६ ॥
बरजूजी बदीत विमासी, रूड़ी शील गुणां री रासी।
तिणरौ भिक्खु तोल बधायौ, सती सुजश शासण मैं पायौ हो ॥ ७ ॥
बीजांजी महा वृद्धकारी, धर चरण शील सुखकारी।
करड़ौ तप छेहड़ैं कीधौ, सती जग मोहैं जश लीधौ हो ॥ ८ ॥
बनांजी सुविनयवंती, शुद्ध चरण पालण चित्त शंती।
सुखदायक गण सुविशाली, सती आतम नैं उजवाली हो ॥ ९ ॥
शुद्ध यां तीनां नैं सिख्या, दीधी भिक्खु एक दिन दीख्या।
सखरौ छेहड़ै संथारौ, समणी हद मुद्रा सारो हौ ॥ १० ॥

सोरठा

बीरां जाति कुंमार रे, संजम लीधौ स्वाम पैं।
प्रकृति अशुद्ध अपार रे, तिण कारण गणसूं टली ॥ २ ॥

ढाल तेहिज

उदांजी उद्यमवंती, सती जाति सोनार सोहंती।
बहु वर्षां चरण सुविचारौ, आंबेट माहैं संथारौ हो ॥ ११ ॥
भुमांजी जाति पोरवाल, श्रीजी द्वारा ना सार।
छपनैं वर्ष संजम लीधौ, स्वाम पछै संथारौ सिद्धौ हो ॥ १२ ॥
वर्ष सतावनैं सुविचारौ, ऋषराय चरण हितकारो।
तिण बहुत हुवौ उपगारौ, तिणरौ सांभलजो विस्तारौ हो ॥ १३ ॥
संसार लेखै शोभाया, लखपती ल्होड़ै सजनाया।
मतिवंत हस्तु महि मंडी, लीधौ चरण पिउ सुत छंडी हो ॥ १४ ॥
दुःख घरकां बहुलौ दीधौ, सती अडिगपणै व्रत लीधौ।
सताणूवै लाहवै संथारौ, हस्तु गुण ज्ञान भंडारौ हो ॥ १५ ॥
कुशलांजी रावलियां रा कहियै, सतजुगी री बहिन व्रत लहियै।
ऋषरायचन्दजी नीं माता, संजम ले पांमी साता।
औ तौ जिनशासन मैं सुखदाता हो ॥ १६ ॥

भल हस्तूजी नीं भमी, सती कस्तूरांजी शुभ लभी।
सुत पिउ छांड व्रत धारे, सतंतरै उजेण संथारे हो ॥ १७ ॥
ल्हावा थी संजम लीधौ, पिउ छांड धर्म रस पीधौ।
घणी वृद्धि अकल गुणवन्ती, जोतांजी महा जसवन्ती हो ॥ १८ ॥
गिरियारी रा समरान मैं, छोड्यौ पिउ सुत निरा छिन मैं।
संथारो बहुतरै सिद्धौ, नोरांजी जस जग लीधौ हो ॥ १९ ॥
शुद्ध एक वर्ष मैं शिक्षा, दुर्मति तज लीधी दीक्षा।
पांचां ही पिउ नैं छंडी, त्यारी प्रीत मुक्ति सूं मंडी हो लाल ॥ २० ॥
गुणसठै वर्ष गुणवंती, बहु चरण धार वृद्धिवंती।
त्यांमैं तीन जण्यां एक साथै, हद दीक्षा भिक्खु नैं हाथै हो ॥ २१ ॥
कुशालांजी नाथांजी बीजांजी, पाली ना तिहूं भ्रम भांजी।
तीनूं शीलामृत कूंपी, दीख्या देईनै व्रजजी नैं सूंपी हो ॥ २२ ॥
सतंतरै कुशालांजी संथारौ, भारीमाल मेरा सुविचारो।
माधोपुर मास कार्तिक मैं, परलोके पोंहता छिनक मै हो ॥ २३ ॥
नाथांजी गांम जसोल न्हाली, वर संथारौ सुविशाली।
संसार लेखैं ऋद्धिवंती, समणी शुद्ध प्रकृति सोभंती हो ॥ २४ ॥
तप दिवस बतीस सु तपियो, जिन जाप बीजांजी जपियो।
तीन दिवस तणौ सन्थारो, वर्ष छियासीयै अवधारौ हो ॥ २५ ॥
सरूप भीम जीत ना ताह्यौ, कल्हुवै कालो कहियायौ।
गुणसठै दीक्षा गुणवंती, गोमांजी नेवुयै पार पहोंती हो ॥ २६ ॥
जशोदा खेरवा निंवासी, डाहीजी नोजांजी विमासी।
संजम भिक्खु छतां सारो, बहु वर्ष पाछै संथारो हो ॥ २७ ॥
ए स्वांम तणौ गण सारु, छपन गण चर्ण प्रकारु।
सतरै छुटक हुई अजा, छोड़ी लौकिक लोकोत्तर लजा हो ॥ २८ ॥
रही गुण चालीस गण राची, पिउ छांड सात व्रत जाची।
दोय बहिन भायां रा जोड़ा, सतजोगी वैणीरांम सु होडा हो ॥ २९ ॥
ऋष रायचन्द मा साथै, संजम लीधौ पूज हाथै
आख्यौ समणी नौं अधिकारौ, औ तौ भिक्खु तणौ उपगारौ हो ॥ ३० ॥
आगै संत कह्या अड़ताली, अजा छपन इहां भाली।
सहु थया एक सौ चार, स्वामी [illegible] सुखकार हो ॥ ३१ ॥
बीस सतरे गण बारी, अठवीस गुण चालीस सुत्रारी।
बीस मैं रूपचन्द शुद्ध रीतं, राखी स्वाम तणी प्रतीत हो ॥ ३२ ॥

छन्द भुजंगी

थया संत मोटा बड़ा सु थिरपालं[१], भलूं नंद नीकौ फतैचन्द[२] भालं।
विनयवंत वारु सु टोकर[३] विशालं, निजानन्दकारी हरुनाथ[४] न्हालं॥ १ ॥
भला धर्म धोरी मुनी भारमालं[५], चल्या आप चारू बड़ां नी सुचालं।
अखै स्थान काजै अखैरांम[६] आछा, सदानंदकारी सुखारांम[७] साचा॥ २ ॥
शिवानन्द सारू शिवौ[८] स्वाम शीशं, नगौ[९] स्वाम नीकौ नगेन्द्र नंमीशं।
भला स्वामजी[१०] संत हुवा सुभारी, सही खेतसीजी[११] सदा शांतिकारी॥ ३ ॥
ऋषिरांम[१२] रूड़ौ भिक्खु शीश राजै, बलि नांनजी[१३] स्वामी स्वामी निवाजै॥ ४ ॥
निभै नेम जाचा मुनि नेम[१४] नामं, बड़ौ संत ज्ञानी भलो वैणीरामं[१५]॥ ५ ॥
वलि संत मोटौ बड़ौ वर्द्धमानं[१६], सुखौ[१७] स्वाम साचौ शुभ ध्यानं सुज्ञानं॥ ६ ॥
हदां हेम जैसा सु हेमं[१८] हजारी, उदैरांम[१९] आछौ तपेस्वी उदारी॥ ७ ॥
ऋषि पाट थाप्यौ मुनि रायचन्दं[२०], दीपै तेज तीखौ सुमेरु दिनन्दं॥ ८ ॥
भलौ संत तारा सुचन्द्र[२१] भणीजै, गिरेन्द्र समौं संत डूंगर[२२] गिणीजै॥ ९ ॥
जयौ जीवराजं[२३], अरु जोगीदासं[२४], दमीश्वर जोधौ[२५] तपे देह त्रासं॥ १० ॥
भगो नाम[२६] नीकों भिक्खु शीश भारी, सही भागचन्द[२७] पछैहि सुधारी॥ ११ ॥
थयौ भोप[२८] भारी तपे ध्यान थापी, पका संत शूरा भिक्खु नैं प्रतापी॥ १२ ॥
रह्या स्वाम आग धुरां छेह रूड़ा, सही केटली नैं थया फेर शूरा॥ १३ ॥
आंख्या संत नांम अठावीस आछा, जिकै जीव तास्या भिक्खु स्वाम जाचा॥ १४ ॥

छप्पय

इसा भिक्खु अणगार, सार जिण मार्ग शोधी।
अधिक कियौ उपगार, बहु भवि नैं प्रतिबोधी।
श्रमणी संत सुजांण, सखर कीधा सुखकारी।
पर्म धर्म पहिछांण, धुरा जिन आणा धारी।
अरु देश व्रत धारक अधिक, नित्य कृत्य भजन तूं नांमको।
सुख करण शरण हद जग सुजश, सखर भीखणजी स्वाम कौ॥ १ ॥

दुहा

अष्टवीस मुनिवर अख्या, सखरा गण शिणगार।
बीस थया गण बाहिरै, तास नांम अवधार॥ १ ॥
वीरभांण[१] लिखमो[२] बलि, अमरोजी[३] अभिधांन।
तिलोक[४] मौजीरांमजी[५], चन्द्रभाणजी[६] जांन॥ २ ॥

अणंदांजी पनजी अख्या, सन्तोष [illegible] ।
गंभु संघजी [illegible], [illegible] [illegible] नांम ॥ ३ ॥
मुन्नीजी मंत्र मुं [illegible], मयागांम पहिछांण ।
वीगतो कुशालजी वलि, अंदो नाथु जांण ॥ ४ ॥
केईकां नें न्यारा किया, [illegible] टलिया आर ।
अब कहिये छै आरजिका, [illegible] सुणो [illegible] ॥ ५ ॥

छप्पय

कुशालां[१] मट्टु[२] कहाय, सुजांणां[३] कहियै साची ।
देउ[४] गुमानां[५] देख, रूपांजी[६] नहि काची ।
जीऊ[७] मैणा[८] जिहाज, रंग नंदां[१०] फूलां[११] सुखकारी ।
अमरां[१२] तेजु[१३] आग, वलि कस्तु[१४] बुद्धकारी ।
हीरां[१५] हीर कणी जिसी, सती सिरोमणि सोभती ।
निकलंक नगां[१६] अजूब[१७] निमल, महियल ए मोटी सती ॥ १ ॥
पन्ना[१८] सती पिछांण, गुमांना[१९] खेमां[२०] गुणियै ।
रूपांजी[२१] वर रीत, सरूपां[२२] समणी सुणियै ।
बरजु[२३] बीजां[२४] विशाल, बनां[२५] ऊदां[२६] हद वाम ।
झूमां[२७] हस्तु[२८] जिहाज, कुशालां[२९] गण सुखकार ।
कस्तुरां[३०] जोतांजी[३१] कही, शुद्ध संजम नोरां[३२] सजी ।
इक वर्ष माहिं व्रत आदर्‌या, पांचूं यां प्रीतम तजी ॥ २ ॥
सखर खुशालां[३३] सती, पवर नाथां[३४] पुनवंती ।
विनय बीजां[३५] सुविनीत, घणूं गोमां[३६] गुणवंती ।
चर्ण यशोदां[३७] चित्त, हियै डाही[३८] हरषंती ।
नौजां[३९] निमल निहाल, स्वाम आणा समरंती ।
ए गुण चालीस अजा गण मैं अखी, एक सोनार सुजांणियै ।
कुलवंत इतरी सतियां कही, बड़ी वैराग बखाणियै ॥ ३ ॥

दुहा

सतरै छुटक नांम तसु, अजबू[१] नेतू[२] ताय ।
वलि फतू[३] नैं अखू[४], फिर अजबू[५] कहिवाय ॥ १ ॥
चन्दूजी[६] चैनां[७] छूटक, धनुं[८] केली[९] वार ।
रत्तू[१०] नंदू[११] फिर रतु[१२], बनां[१३] थई गण वार ॥ २ ॥
लालां[१४] परवस नींकली, जसु[१५] चोखी[१६] बीरां[१७] जांन ।
सतरै छुटक सांभली, गण गुण्याली सुज्ञान ॥ ३ ॥

ढाल : तेहिज

भिक्खु हुवा उजागर भारी, हद करणी री बलिहारी।
नित याद आवै मुझ मन, तन मन अति होय प्रसन्न हो ॥ ३३ ॥
सुमतागर शासण स्वांमी, जशधर अन्तरजामी।
सखरौ कुंण स्वामी सरषौ, पूज गुण सुखम दग परखौ हो ॥ ३४ ॥
आशा पूरण आपौ, जपूं आप तणौ नित जापौ।
पूर्ण मुझ आपसूं प्रीतं, निरमल शुद्ध आपरी नीतं हो ॥ ३५ ॥
कही ए बावनमीं ढालं, वर जय जश कर्ण विशालं।
मोनै भाग प्रमांणैं मिलिया, मननाज मनोर्थ फलिया हो।
मुंह मांग्या पासा ढलिया ॥ ३६ ॥
तीजौ खण्ड कह्यौ तहतीकौ, निर्मल भिक्खु गण नीकौ।
शासण सुखदाय सधीकौ, जय जश वृद्धि शिव नौं टीकौ हो लाल ॥ ३७ ॥

कलश

मुनि सुगुण माला वर विशाला, सुमति पाल सुजांणियै।
तम कुगति ताला भ्रम ज्वाला, परम दयाल पिछांणियै ॥ १ ॥
सुख सद्म संत महंत सुन्दर, भ्रान्त भंजन अति भलौ।
सुमति सुसागर अमल आगर, निमल मुनि गण गुण निलौ ॥ २ ॥

चतुर्थ खण्ड

सोरठा

समरूं गोयम स्वाम रे, सुधर्म जम्बू आद मुनि।
बले भिक्खु गुरु नांम रे, चौथौ खण्ड कहूं चूंप सूं॥ १ ॥
मुरधर देश मेवाड रे, हाडोती ढूंढाड़ में।
चावा देशज चार रे, समचित विचरया स्वांमजी॥ २ ॥
गेरुलालजी व्यास रे, श्रावक तेरां मांहिलो।
ते कच्छ देशे गयो तास रे, टीकम नें समझावियो॥ ३ ॥
टीकम डोसी आम रे, देश कच्छ में दीपतो।
तेपनैं गुणसठै तांम रे, पूज्य कनैं आयो प्रगट॥ ४ ॥
प्रगट तेह प्रयोग रे, कछ देशे धर्म बाधियो।
स्वाम तणैं संजोग रे, जीव हजारां उद्धरया॥ ५ ॥
धर्म कल्याण पिछांण रे, इण भव आश्री जांणजो।
सुणजो चतुर सुजांण रे, पूज भिक्खु नो प्रगट हिव॥ ६ ॥

दुहा

पांचूं इन्द्रयां परवरी, न पड़ी कांई हींण।
वृद्ध पणं पिण पूज नीं, शीघ्र चाल शुभ चीन॥ १ ॥
थाणं कठेई नां थया, उद्यमी अधिक अपार।
चारु चरचा करण चित्त, पूज तणैं अति प्यार॥ २ ॥
उठैं गोचरी आप नित, अतिशय कारी ऐन।
पूज्य सुमुद्रा पेखतां, चित्त में पामैं चैन॥ ३ ॥
छेहला छेहला गांम फर्शता, छेहलाई करत विहार।
चांणोद सूं पीपाड लग, विचरया स्वाम उदार॥ ४ ॥

ढाल : ५३

[सल्हा मारुनां गीत नी—ए देशी]

भ्रम भय भंजन हो जन रंजन गुण जिहाज, सुमति सुमंडन स्वाम शोभाविया।
कुमति विहंडन हो मिथ्या खण्डन काज, विचरत विचरत सोजत आविया ॥ १ ॥
चौहटै चारु हो छत्री छै सुविचार, आज्ञा लेईनैं स्वाम तिहां उतर्‍या।
जन मन हर्ष हो निरख्यौ पूज्य दिदार, जाणै के श्रीजिन आप समवसर्‍या ॥ २ ॥
दर्शण कारण हो धारण चर्चा बोल, संत सती बहु स्वाम पै आविया।
आज्ञा लेवा हो चौमासा री अमोल, पर्म पूज्य पै आवी सुख पाविया ॥ ३ ॥
दम सम सागर हो स्वामी पर्म दयाल, भलाया चौमासा संत सत्यां भणी।
एटलै आयौ हो हुकमचन्द आछौ न्हाल, पूज दर्शण कर प्रीत पांमी घणी ॥ ४ ॥
बेकर जोड़ी हो मांन मरोड़ी बोलंत, विविध विनय करि कर रह्यौ विनती।
स्वामी चौमासौ शिरियारी करौ संत, सुजती छै पकी हाट मुझ शोभती ॥ ५ ॥
गुण निधि ज्ञानी हो गिरवा आप गम्भीर, ऋषपति अर्ज करूं हूं रीत सूं।
बारु वचने हो विनती कीधी वजीर, सुगुरु प्रसन्न हुवै शिष्य सुविनीत सूं ॥ ६ ॥
स्वामी मांनी हो विनती तसु सार, विहार करी नैं बगड़ी आविया।
निर्मल चित्त सूं हो अर्ज करै नर नार, शहर कंटाल्ये बगड़ी सुशोभाविया ॥ ७ ॥
गति गयवर-सी हो इर्या धुन गुण जिहाज, प्रवर संतां कर मुनिवर प्रवर्‍या।
प्रत्यक्ष कहियै हो ऋषि भव दधि नीं पाज, शहर शरियारी मैं स्वाम समवसर्‍या ॥ ८ ॥
शहर शरियारी हो शोभै कांठा नीं कोर, दोलो मगरौ गढ़ कोट ज्यूं दीपतौ।
जन बहु बस्ती हो महाजनां री जोर, जूना जूना केई पुर भणी जीपतौ ॥ ९ ॥
निर्भय नगरी हो ऋद्धि समृद्धि निहोर, ज्यां धर्म ध्यान घणौ तप जापनौं।
राज करै छै हो दौलतसिंह राठोड़, कूंपावत कहियै करड़ी छापनौं ॥ १० ॥
तिहां मुनि आया हो सप्त ऋषि तंत सार, जय जश धर्ण कर्ण मन जीपता।
स्वामी शोभै हो गण नायक सिरदार, दमीश्वर पूज्य भीखणजी दीपता ॥ ११ ॥
भरत क्षेत्र मैं हो भिक्खु साम्प्रत भांण, आज्ञा लेईनैं पकी हाट उतर्‍या।
जन बहु हर्ष्या हो पूज पधार्‍या जांण, धर्मानुराग करि तन मन भर्‍या ॥ १२ ॥
बखाण बांणी मैं हो आगैवांण विशाल, थिर पद पूज भीखण जी थापियौ।
भार लायक हो शोभे मुनि भारीमाल, पद युवराज पहिला ही समापियौ ॥ १३ ॥
सखर सेवा मैं हो खेतसीजी सुवनीत, सतजुगी नांम अपर शोभावियौ।
पूर्ण -त्यांरै हो पूजजी री प्रतीत, चार तीर्थ मांहि जश तसुं छावियौ ॥ १४ ॥
उदैरांम जी तपसी अधिक उदार, ऋष रायचन्दजी बालक वय राजता।
जीवौ मुनि हो भगजी गुण नां भण्डार, स्वाम तणी हद सेवा सुसाझता ॥ १५ ॥

ए तो आखी हो तीन पचाससी ढाल, [illegible]।
रूड़ी निसुणी हो आणन्द थान रसाल, जय जश करण भिक्खु जन तारणा॥ १६ ॥

दुहा

श्रावण मासे स्वांमजी, पनम स्यूं पिछांण।
सखरी गोचरी शहर मैं, आप करी अगवाण॥ १ ॥
आवसग अर्थ अनोपम, लिख लिखनैं अवलोय।
शिष्य नैं आप सिखावता, जश धारी मुनि जोय॥ २ ॥
श्रावण सुद छेहड़ै सही, मुनि तणौ तन माहीं।
कांईक कारण ऊपनौ, फेर तणौज नाहीं॥ ३ ॥
तो पिण उठै गोचरी, गांम माहिं मुनिराय।
दिसां बाहिर जावै सही, लांबी गिणती न काय॥ ४ ॥
औषध लियौ अणायनैं, कारण मेटण कांम।
पिण कारण मिटियौ नहीं, पूज समा परिणाम॥ ५ ॥

ढाल : ५४

[केने पूजी गोरज्या केने ईस — ए देशी]

चर्म कल्यांण चतुर सुणौ, मास भाद्रवा मांयो ए। सुखदायो ए।
धर्म वृद्धि अति धर्म नीं क भवियण ए॥ १ ॥
पजुसणां मैं परवड़ा वारु हुवै, वखाणो ए। सुविहांणो ए।
दरसे तीन टंक देशना क मुनिवर ए॥ २ ॥
सुन्दर वांण सुहांमणी, निसुणैं बहु नर नारो ए। सुखकारो ए।
चौथज आई चांदणी क। मु० ॥ ३ ॥
पिंजर तन हीणौ पड्यौ, पर्म पूज्य पहिछांण्यौ ए। मन जाण्यौ हे।
आउ नेंड़ौ उनमांनथी क। मु० ॥ ४ ॥
स्वाम कहै सतजुगी भणी, थे नाकर शिष्य सुविनीतो ए। धर प्रीतो ए।
साझ दियौ संजम तणौ क। मु० ॥ ५ ॥
टोकरजी तीखा हुन्ता, विनय वंत सुविचारी ए। हितकारी ए।
भक्ति करी भारी घणी क। मु० । ६ ॥
भारमलजी सूं भेलप भली, रहीज रूड़ी रीतो ए। अति प्रीतो ए।
जांण के पाछल भव तणी क। मु० ॥ ७ ॥
सखर तीनां रा साझ सूं, वर संजम उजवाल्यौ ए। रूड़ै पाल्यौ ए।
क्ष हो शूरापणैं क। मु० ॥ ८ ॥

चित्त समाधि रही घणी, म्हारा मन मझारो ए। हुंशियारो ए।
यां तीनां रा साझ थी क। मु० ॥ ९ ॥
शिष्य सुविनीत हुवै सही, गुरु रै रहै आणंदो ए। चित्त चंदो ए।
देव जिनेंद्र दाखियौ क। मु० ॥ १० ॥
गुणग्राही एहवा गुणी, पूज्य भीखणजी पेखौ ए। दिल देखौ ए।
स्वाम गुणज्ञ सुहांमणा क। मु० ॥ ११ ॥
ऐसी कीजै प्रीतड़ी, जैसी भिक्खु भारीमालो ए। सुविशालो ए।
सतजुगी टोकरजी सारिषी क। मु० ॥ १२ ॥
जोड़ी वीर गोयम जिसी, पवर स्वाम शिष्य प्रीतौ ए। हद रीतो ए।
चाल सखर चौथा तणी क। मु० ॥ १३ ॥
ए चौपनमीं ढाल मैं, सखरौ कह्यौ संबंधो। ए प्रबंधों ए।
स्वाम भिक्खु नौं शोभतौ क। मु० ॥ १४ ॥

दुहा

साध श्रावक नैं श्राविका, बहु सुणतां तिणवार।
सीखामण दै स्वामजी, हद सखरी हितकार ॥ १ ॥
वीर जी मोक्ष विराजतां, बारु कियौ वखांण।
सोल्ह पहौर रे आसरै, सीख दीधी सुविहांण ॥ २ ॥
इण दुखम आरा मझै, स्वाम भीखणजी सार।
प्रत्यक्ष श्री जिन नीं परै, आखी सीख उदार ॥ ३ ॥
सखर बुद्धि बांणी सखर, सखर कला सुखकार।
नीत सखर चित निरमलै, वचन बदै सुविचार ॥ ४ ॥

ढाल : ५५

[आगे जातां अटवी आवै—ए देशी]

जिम मुझनैं जांणता, म्हांरी प्रतीतो रे।
तिमहिज राखज्यो, भारमालजी री रीतो रे।
सीख स्वामी तणी ॥ १ ॥
सहु सन्त सत्यां रा, भारीमालजी नाथो रे।
आज्ञा आराधज्यो, मत लोपज्यो बातो रे ॥ २ ॥
यांरी आण लोपी नैं, निकलै गण बारौ रे।
तसु गिणज्यो मति, चिहुं तीर्थ मझारो रे ॥ ३ ॥
यांरी आण अराधै, सदा रहै सुविनीतो रे।
तसु सेवा करौ, ए जिन मत रीतो रे ॥ ४ ॥

मैं पदवी आपी, [illegible] जांणी रे।
भारमल्ल जी भणी, शुद्ध प्रकृति सुहांणी रे ॥ ५ ॥
तीन चर्ण पालण री, भल ऋद्ध भागीमालो रे।
शंका म राखज्यो, शुद्ध साधु नीं चालो रे ॥ ६ ॥
शुद्ध श्रमण सेवजो, अणाचारयां सूं दूरा रे।
सीख दोनूं धरयां, हुवै मुनि हजूरा रे ॥ ७ ॥
अरिहन्त गुरु आज्ञा, लोपै कर्म जोगो रे।
अपछन्दा निके, नहीं वंदण जोगो रे ॥ ८ ॥
उसन्ना नैं पासत्था, कुशील्या प्रमादी रे।
अपछंदा इणां, जिण आण विराधी रे ॥ ९ ॥
यां नैं वीर निषेध्या, ज्ञाता मैं विशालो रे।
संग करणौ नहीं, वांची जिनपालो रे ॥ १० ॥
आणंद लियौ अभिग्रहौ, जिण गण थी न्यारुं रे।
तसु वांदूं नहीं, पहली वचन उचारूं रे ॥ ११ ॥
अन्यमति ना देव गुरु, अथवा जमाली रे।
तास नमूं नहीं, नहिं वंदू न्हाली रे ॥ १२ ॥
वलि बिगर बोलायां, बोलण रौ नेमो रे।
आहार आपूं नहीं, अभिग्रह लियौ एमो रे ॥ १३ ॥
अभिग्रह जिन आगल, आणंद ए लीधौ रे।
सप्तम अंग में, शुद्ध पाठ प्रसिद्धो रे ॥ १४ ॥
रीत एहिज राखणी, चिउं संग नें चारु रे।
टालोकड़ तणी, संग दूर निवारु रे ॥ १५ ॥
ए रीत आराध्यां, पांमौ भव पारो रे।
श्रीजिन सीखड़ी, मरध्यां सुख सारो रे ॥ १६ ॥
सहु साध साधवी, वर हेत विशेषो रे।
रूड़ी राखजो, धरणुं नहीं द्वेषो रे ॥ १७ ॥
वलि जिलौ न बांधणौ, गुरु आण सुगांमी रे।
सीख प्रथम सही, दी भिक्खु स्वामी रे ॥ १८ ॥
गुरु आज्ञा लोपी, बांधै जे जिल्लौ रे।
अति अविनीत ते, दियौ कर्मां ढिल्लौ रे ॥ १९ ॥
एकल सूंई खोटौ, इसड़ौ अविनीतो रे।
तसु • समझायनैं, राखणी शुद्ध रीतो रे ॥ २० ॥

दिल देख देखनैं, दीख्या शुद्ध दीजो रे।
बलि जिण तिण भणी, गण मैं म मुंडीजो रे॥ २१॥
श्रद्धा आचार रौ, कल्पसूत्र नो बोलो रे।
गुरु बुद्धिवंत री, राखौ प्रतीत अमोलो रे॥ २२॥
कोई बोल न वैसै, केवलियां नैं भलावी रे।
तांण कीजो मती, मन नैं समभावी रे॥ २३॥
अपछंदे विण आज्ञा, नहिं थापणौ बोलो रे।
गुरु आज्ञा थकी, तीखौ गण तोलो रे॥ २४॥
एक दो तीन आदि, निकलै गण बारो रे।
साध म सरधजो, शुद्ध सीख श्रीकारो रे॥ २५॥
इक आज्ञा मैं रहिजो, ए रीत परंपर रे।
लिखत आगै कियौ, सहु धरजो खरा खर रे॥ २६॥
कोई दोष लगावी, बलि बोलै कूड़ौ रे।
प्राछित नां लियै, तिणनैं कर दीज्यौ दूरो रे॥ २७॥
शासण प्रवर्तावण, सिख दीधी स्वामी रे।
और कारण नहीं, भल अन्तर जांमी रे॥ २८॥
सुणतां सुखदाई, स्वामी ना बोलो रे।
बहु सुणतां कह्या, आछा नैं अमोलो रे॥ २९॥
ऐसा स्वाम अनोपम, गण तारक ज्ञानी रे।
कहा कहियै, तसु बतका सुविहांनी रे॥ ३०॥
पचावनमी बारू, कहि ढाल रसालो रे।
बात सुणौ वलि, जय जश सुविशालो रे॥ ३१॥

दुहा

सीखावण दी स्वामजी, आछी अधिक अनुप।
हलुकर्मी धारै हिये, सखरी सीख सद्रुप॥ १॥
नीर गंगा ज्यूं निर्मला, पूज तणा परिणांम।
निर्मल ध्यान निकलंक चित, समता रमता स्वांम॥ २॥
पद युवराज सु आदि मुनि, पूछा करै सुजोय।
अछै खेद सूं आपरै, स्वाम कहे नहिं कोय॥ ३॥
निर्मल चर्ण वर कर्ण निज, विमल सुधा सम बांण।
अमल दियै उपदेश अरु, सुणजो चतुर सुजाण॥ ४॥

ढाल : ५६

[[illegible]]

भारीमाल शिष्य भारी जी, आदि साधां भणी।
स्वाम कहै सुविचारी जी, वांण सुहांमणी॥ १ ॥
परभव निकट पिछांणी जी, दीसै मुझ तणुं।
मुझ भय मूल म जाणौ जी, हर्ष हियै घणो॥ २ ॥
घणा जीवां रै घट माह्यौ जी, सम्यक्त रूपियौ।
म्है बीज अमोलक वाह्यौ जी, मग [illegible]॥ ३ ॥
देश व्रत दीपायौ जी, लाभ अधिक लियौ।
सावगणौ सुखदायो जी, बहु जन नै दियौ॥ ४ ॥
म्है जोड़ां करी सूत्र न्यायो जी, शुद्ध जांणै सही।
म्हारे मन रै मांह्यो जी, उणायत नां रही॥ ५ ॥
थे पिण थिर चित्त थांपी जी, प्रभु पंथ पालजो।
कुमति कलेश नै कापी जी, आतम उजवालजो॥ ६ ॥
रायचन्द ब्रह्मचारी नै जांणो जी, सीख दै शोभती।
तूं बालक छै बुद्धिमांनो जी, मोह कीजे मती॥ ७ ॥
ब्रह्मचारी कहै वांणो जी, शुद्ध वच सुंदरू।
आप करौ जन्म रौ किल्याणो जी, हूं मोह किम करूं॥ ८ ॥
वले स्वामी सीख दै सारो जी, सहु संतां भणी।
आराधजो आचारो जी, मत चूकौ अणी॥ ६ ॥
इरिया भाषा उदारौ जी, अधिकी एषणा।
वस्त्रादि लैतां विचारौ जी, परठत पेखणा॥ १० ॥
सखरी पांच सुमति जी, गुप्त गुणी धरौ।
दय सत शील सुदती जी, ममता मत करौ॥ ११ ॥
शिष शिषणी पर सोयो जी, उपग्रण ऊपरै।
मुर्छा म कीजौ कोयो जी, प्रमाद नैं परहरो॥ १२ ॥
पुदगल ममत प्रसंगो जी, तन मन सूं तजी।
संजम सखर सुचंगो जी, भल भावै भली॥ १३ ॥
आछी सीख अनूंपी जी, अति अभिरांम जी।
अमृत रस नीं कूंपी जी, दीधी स्वामजी॥ १४ ॥
आखी ढाल उदारो जी, पट पचासमी।
जय जश करण श्रीकारो जी, स्वामी मनि ससी॥ १५ ॥

दुहा

सीख सखर दै स्वाम जी, हद वांणी हितकार।
स्वाम वचन सुणतां छतां, चित पामैं चिमत्कार ॥ १ ॥
समता खमता सखर चित, दमता रमता देख।
नमता जमता निमल मुनि, बमता बंक विशेष ॥ २ ॥
भव समुद्र तिरवा भणी, भिक्खु भलैज भाव।
वृद्धि भाव हद वीर रस, जांणे तिरण रौ दाव ॥ ३ ॥
वर वायक वांणी विमल, दायक अभय दयाल।
पद लायक भिक्खु प्रगट, नायक स्वाम निहाल ॥ ४ ॥

ढाल : ५७

[धन धन जंबू स्वामी नैं—ए देशी]

शिष भारीमाल सोहांमणा, पर्म भक्ता पहिछांण हो। मुणंद।
पण्डित मर्ण पेखी पूज रौ, बोलै एहवी वांण हो। मुणंद।
धिन धिन भिक्खु स्वाम ने ॥ १ ॥
धन धन निर्मल ध्यान हो मु०, धन धन पवर शूरापणुं।
धन धन स्वामी नौं ज्ञान हो ॥ २ ॥
सखर स्वाम ना संग थी, मन हुंशियारी माहिं हो। मु०।
अबै विरहौ पड़ै आपरौं, जांणैं श्री जिणराय हो ॥ ३ ॥
प्रभु गोयम री प्रीतड़ी, चौथै आरै पिछाण हो। मु०।
प्रत्यक्ष आरे पंचमैं भिक्खु, भारीमाल री जांण हो ॥ ४ ॥
तिण कारण भारीमालजी, आखी अल्प सी बात हो। मु०।
विरह तुमारौ दोहिलौ, जांणैं श्री जगनाथ हो ॥ ५ ॥
भिक्खु बलता इम भणैं, थे संजम पालसौ सार हो।
निर अतिचारे निर्मलौ, होसौ देव उदारो हो ॥ ६ ॥
महा विदेह क्षेत्र मझै, मुझ थकी मोटा अणगार हो।मु०।
अरिहंत गणधर आद दे, देखजो तसु दिदार हो ॥ ७ ॥
सतजुगी भाखै स्वाम नैं, आप जांता दिसौ झंड माहिं हो।मु०।
स्वामी कहै सुणो साधजी, चित्त मैं झंड तणी नहीं चाहि हो ॥ ८ ॥
सुख स्वर्गादिक ना सहु, पुदगल रूप पिछांण हो। मु०।
पांमला सुख पोचा घणा, ज्यांनैं जाणूं जैहर समान हो ॥ ९ ॥

बार अनंती भोगव्या, अधिका सुख अहमंद हो । सु० ।
तौ पिण नहीं हुवौ तृपती, तिण कारण ए सुख फंद हो ॥ १० ॥
तिणसूं म्हारैं भंड तणी, वंछा नहीं लिगार हो । सु० ।
मुझ मन एकंत मोक्ष में, शाश्वता सुख श्रीकार हो ॥ ११ ॥
वैरागी एहवा मुनिवरू, जांण्यो पुदगल जैहर हो । सु० ।
स्वाम सम्बंध सुण्या छतां, आवै संवेग नीं लैहर हो ॥ १२ ॥
सखर सतावनमीं सोभती, ढाल रसाल अपार हो । सु० ।
स्मरण भिक्खु स्वाम नौं, जय जश कर करण श्रीकार हो ॥ १३ ।

दुहा

सुख कारण तारण सुजन, कुगति निवारण काम ।
विघन विडारण अति पवर, सीख समापी स्वाम ॥ १ ॥
पंडित मरण सुकरण पर, वरण आराधक धांम ।
शिव वधू वरण रु तरण शुद्ध, पुज धर्म परिणाम ॥ २ ॥
निर्मल नीत शुद्ध रीत नीज, पुज प्रथमहि पेख ।
अंत काल आयां छतां, वारु अधिक विशेष ॥ ३ ॥
समय जांण स्वामी सखर, आलोवण अधिकार ।
आतम शुद्ध करै आपरी, ते सुणजो विस्तार ॥ ४ ॥

ढाल : ५८

[कोसी जन नहिं भेदै तिम ज्यारे—ए देशी]

स्वाम भिक्खु तिण अवसरै रे, आउ नैड़ो आयौ जांण ।
करै आलोवण किण विधै रे, सखर रीत सुविहाण ।
भविक रे भिक्खु गुण रा भंडार ॥ १ ॥
तस थावर जीवां तणी रे, हिंसा करी हुवै कोय ।
त्रिविध त्रिविध कर तेहनौं रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय ॥ २ ॥
क्रोध मांन माया करी रे, लोभ वशे अवलोय ।
झूठ लागौं हुवै जेहनौं रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय ॥ ३ ॥
अदत्त जे कोई आचर्यौ रे, ज्यांरा भेद अनेक सुजोय ।
हद जिन आज्ञा लोपी हुवै रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय ॥ ४ ॥
ममत धरी हुवै मैथुन सूं रे, सुता जागता सोय ।
मन वचन काय माठा तणौ रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय ॥ ५ ॥
परिग्रह नवूं प्रकार नौं रे, शिष्य शिष्यणी उपधि पर सोय ।
त्रिविध २ ममता तणुं रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय ॥ ६ ॥

किणहि सूं क्रोध कियौ हुवै रे, बलि क्रोध वशे बच कोय।
करड़ी सीख किण नैं कही रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय॥ ७ ॥
मांन माया लोभ मन मैं धर्यौ रे, दिल धरचा राग द्वेष दोय।
इत्यादिक पाप अठार नौं रे, मिच्छामि दुक्कड़ं मोय॥ ८ ॥
राग कियौ हुवै रागी थकी रे, द्वेषी सूं धरचौ हुवै द्वेष।
मन साचै हिवे मांहरै रे, वर मिच्छामि दुक्कडं विशेष॥ ९ ॥
पांचू आस्रव पाड़ुवा रे, लागौ जांण्यौ किण वार।
संभाल संभाल स्वामी जी रे, आलोया अतिचार॥ १० ॥
पंच सुमति तीन गुप्ति मैं रे, पंच महाव्रत मझार।
याद करे अतिचार नैं रे, आलोवै भिक्खु अणगार॥ ११ ॥
सहु जीवाजोनि संसार मैं रे, चउरासी लाख सुचिन्त।
ज्यांरा भेद जू जूआ जांणजो रे, खमावूं धर खंत॥ १२ ॥
बडा शिष्य सुविनीत छै रे, अंतेवासी अमोल।
आगै लैहर आई हुवै रे, खमावै दिल खोल॥ १३ ॥
बले संत अनैं सतियां मझै रे, कैकां नैं करड़ा देख।
कठिण सीख कड़वौ कह्यौ रे, खमावूं सु विशेष॥ १४ ॥
श्रावक नैं बले श्राविका रे, केई कठिण प्रकृति रा कहाय।
कठिण वचन कह्यौ हुवै रे, खांत करी नैं खमाय॥ १५ ॥
केई गण बारै निकल्या रे, साध साधवी सोय।
करड़ौ काठौ कह्यो हुवै रे, ज्यां सूं खमत खांमणा जोय॥ १६ ॥
चन्द्रभाणजी थली मझै रे, तिलोकचंदजी तांम।
कहिजो खमत खामणा मांहरा रे, त्यांसूं पड़ियौ बौहलौ काम॥ १७ ॥
चरचा कीधी चूंप सूं रे, घणा जणा सूं बहु ठाम।
वच कठण कह्या जाण्या तसु रे, खमावै ले नांम॥ १८ ॥
केई धर्म तणा द्वेषी हुंता रे, छिद्रपेही अध्यवसाय।
त्यां ऊपर खेद आई तिका रे, सगलां नैं देऊं खमाय॥ १९ ॥
चऊं तीर्थ शुद्ध चलायवा रे, सीखांमण देता सोय।
कठिन वचन जो कह्यौ हुवौ रे, मुझ खमत खांमणा जोय॥ २० ॥
इण विध करी आलोवणा रे, गिरवा महा गुणवंत।
स्वाम भीखणजी शोभता रे, पदवीधर पूज महंत॥ २१ ॥
एहवौ आलोवण कानां सुण्यां रे, आवै अधिक वैराग।
करै त्यांरौ कहिवौ किसूं रे, त्यांरै माथै मोटा भाग॥ २२ ॥

अठावनमी शोभती रे, आखी ढाल सुऐन।
जय जश करण भिक्खु भला रे, चित्त सुणतां पामें चैन॥ २३॥

दुहा

इण विध करी आलोवणा, निर्मल निरतिचार।
स्वाम हुवा शुद्ध रीत सूं, अब अणशण अधिकार॥ १॥
भाद्र शुक्ल पंचम भली, सम्वत्सरी नौं सार।
स्वाम कियौ उपवास शुद्ध, चित्त उजल चौविहार॥ २॥
अतुल तृपा नीं ऊपनी, अधिक असाता आंम।
सखर आंण शूरापणौ, समचित सहिज स्वांम॥ ३॥
पूज कियौ छठ पारणौ, औषध अल्प आहार।
पिण ते समौं न परगम्यौ, वमन हुवौ तिण वार॥ ४॥
तिण दिन तीनूं आहार ना, त्याग किया तहतीक।
पुदगल स्वरूप पिछाणियौ, निर्मल स्वाम निरभीक॥ ५॥

ढाल ५६

[राजा राघव रायारा राय—ए देशी]

सातम आठम भिक्खु स्वाम जी, अल्प सो लियौ आहारो।
ततखिण त्याग कियौ मन तीखै, हद पूजरो मन हूंशियारो।
भिक्खु स्वामी आप जिन मत अधिक जमायौ॥ १॥
खेतसीजी स्वामी कहै खांच कर, तरकै न करणा त्यागो।
पूज कहै देही पतली पाड़णी, बारु विशेष चाहिजै वैरागो॥ २॥
भाद्र शुक्ल नवमी दिन भिक्खु, कहै करूं आहार ना पचखांण।
कहै खेतसीजी मुझ कर केरौ, चर्म आहार लौ पिछांण॥ ३॥
अल्प आहार खेतसीजी आंणियौ, चाख किया पचखांणौ।
बारु मन राख्यौ शिष्य सुविनीत रौ, पिण बहुल इछा मत जांणौ॥ ४॥
दशम दिन भारीमालजी विनवै, स्वामी आहार कीजै सुविहांणो।
चाली चावल दश मौंठ रे आसरै, चाख किया पचखाणौ॥ ५॥
इग्यारस आहार त्याग दियौ मुनि, अमल पांणी उपरंतो।
मुझ हिव आहार लेंतौ मत जांणजो, कह्यौ वयण अमोलक तंतो॥ ६॥
बारस दिन बेलौ कियौ पूज, तीन आहार तणा किया त्यागो।
सखर संथारो कर्ण सूं स्वामी नौं, बारु चढ़तौ वैरागौ॥ ७॥
सांमली हाट सूं उठ मुनीश्वर, चलिया चलिया आयो।
पकी हाट नैं पका मुनीश्वर, पकौ संथारौ सुहायौ॥ ८॥

सयण शिष्यां कीधौ सुखदाई, बारु पूज लियौ विसरांमो।
इतलै ऋष रायचन्दजी आयनैं, रूडा वचन बदै अभिरांमो॥ ९ ॥
स्वामी कृपा कीजै दर्शन दीजियै, वदै ब्रह्मचारी जी विख्यातो।
पूज स्हामुं जोवै नेत्र खोलनैं, हद मस्तक दीधौ हाथो॥ १० ॥
पूज नैं कहै प्राक्रम हींण पड़िया, ऋषराय तणी सुण वायो।
भिक्खु पहिलां तन तोल त्यारी था, सुण सिंह ज्यूं उठ्या मुनिरायो॥ ११ ॥
भिक्खु कहै बोलावौ भारीमाल नैं, बले खेतसीजी नैं विचारो।
याद करंतांई संत दोनूंई, झट आय ऊभा है तिवारो॥ १२॥
नमोथुणो कियौ अरिहंत सिद्धां नैं, तीखै वच बोल्या तांमो।
बहु नर नारी सुणतां नैं देखतां, संथारौ पचख्यौ भिक्खु स्वामो॥ १३ ॥
शिष्य पर्म भग्ता कहै स्वामी नैं, क्यूं न राख्यौ अमल रो आगारो।
पूज कहै आगार किसौ हिवै, किसी करणी काया नीं सारो॥ १४ ॥
भाद्रवा सुदि बारस भली, तिथी सोमवार सुविचारो।
अणशण आदर्‍यौ वैराग आणीनैं, शुद्ध छेहलौ दुघड़ियौ सारो॥ १५ ॥
घणा जन आवंता गुण गावंता, बोलता बे कर जोड़ो।
धिन धिन हो थे मोटा मुनीश्वर, कीधी बडां बडेरां री होडो॥ १६ ॥
केई सनमुख आया नैं प्रणमैं पाया, विकसत होवै विलासं।
खांत करीनै स्वामी नैं खमावता, हिवड़ै आंण हुलासं॥ १७ ॥
धिन धिन पूज रौ धीरापणुं, धिन धिन पूजरो ध्यानो।
धिन धिन स्वाम शूरा घणा सदरा, मन कियौ मेरू समांनो॥ १८ ॥
आखी ए गुणसठमी ओपती, शुद्ध ढाले स्वाम संथारो।
भल जय जश कर स्वाम भिक्खु नौं, स्मरण महा सुखकारो॥ १९ ॥

दुहा

कैकां अभिग्रह एहवौ कियौ, यां शुद्ध मत काढ्यौ सार।
छेहड़ै अणशण आवसी, पकौ उतरसी पार॥ १ ॥
इण विध अभिग्रह आदर्‍यौ, भौला लोकां तांम।
बात सुणी कहै पचखियौ, अणशण भिक्खु स्वांम॥ २ ॥
द्वेषी था जिन धर्म ना, चित्त पांम्या चिमत्कार।
जांण्यौ ए मारग खरौ, कई बांदै वारुंवार॥ ३ ॥
अति नर नारी आवता, गावता मुनि गुणग्राम।
बाजार मांहि अमावता, सरावता धिन स्वाम॥ ४ ॥

ढाल : ६०

[[illegible]]

स्वाम तणौ संथारौ सुणी हो, आवै लोक अनेक।
कोड करीनैं करै घणा हो, बारू वैराग विशेष।
स्वामी नौं सुजश घणो ॥ १ ॥

कोई कहै संथारौ सीझै स्वामी नौं हो, त्यां लग खावा पांणी ना त्याग।
कोई करै त्याग कुशील रा हो, वर चित आण वैराग ॥ २ ॥

केई अन्न आरम्भ नहिं आदरै हो, केई करै हरी ना पचखाण।
कैकां रात्रि भोजन तज्यौ हो, इत्यादिक वैराग बखांण ॥ ३ ॥

केई धर्म तणा द्वेषी हुंता हो, ते पिण अचरज पांम्या तिणवार।
अनमी कई आवी नम्या हो, स्वाम तणैं संथार ॥ ४ ॥

पडिकमणौ कीधां पछै हो, स्वाम भिक्खु सुविहांण।
भारीमाल आदि शिष्य भणी हो, कहै बारू करौ बखांण ॥ ५ ॥

शिष्य सुविनीत कहै सही हो, संथारौ आपरै सोय।
बखाण नौं सूं विशेष छै हो, तब पूज्य बोल्या अवलोय ॥ ६ ॥

किणहि आरजियां अणशण कियौ हुवै हो, तौ करौ बखांण त्यां जाय।
मुझ अणशण माहैं देशना हो, नहिं करौ थे किण न्याय ॥ ७ ॥

बखांण कियौ विस्तार सुं हो, शिष्य सुविनीत श्रीकार।
भागबली भिक्खु तणौं हो, मिलियौ जोग उदार ॥ ८ ॥

परिणांम चढ़ता पूज रा हो, इण विध निकली रात।
दिन तेरस हिव दीपतौ हो, प्रगटियौ प्रभात ॥ ९ ॥

गांम गांम रा आवै घणा हो, दर्शण करवा देख।
जांणक मेलौ मंडियौ हो, बारू हर्ष विशेष ॥ १० ॥

गुण स्वामी ना गावता हो, आवता अति जन वृन्द।
हिवड़ै हर्ष हुलसावता हो, पामता परमानन्द ॥ ११ ॥

जश करमी था जीवड़ा हो, जय जश करता जन।
धर्म पूज मुख पेखनैं हो, तन मन होय प्रसन्न ॥ १२ ॥

धुर ही थी धर्म छांणनैं हो, शुद्ध मग लियौ सार।
अंत तांई उजवालियौ हो, जिन मारग जयकार ॥ १३ ॥

धोरी थे जिन धर्म ना हो, इम बोलै नर नार।
शूरपणैं सखरौ कियौ हो, स्वामी थे संसार ॥ १४ ॥

ऐ साठमी गुण आगली हो, रूड़ी ढाल रसाल।
जय जश करण स्वामी तणो हो, बारु गुण विशाल ॥ १५ ॥

दुहा

पाणी पीधौ पूज जी, आफे चित उजमाल।
पौहर दिवस जाझौ प्रगट, आयौ थौ तिण काल ॥ १ ॥
साध बैठा सेवा करै, आंणी हर्ष अपार।
श्रावक श्राविका स्वाम नों, देख रह्या दिदार ॥ २ ॥
भिक्खु ऋष शुद्ध भाव सूं, ध्यावत निर्मल ध्यान।
संकै तौ जांणूं स्वाम नैं, ऊपनौं अवधि सुज्ञान ॥ ३ ॥
साध श्राविका होवै सही, वैमानिक विख्यात।
अवधिज्ञान तसु ऊपजै, आगम वचन आख्यात ॥ ४ ॥
दिन चढ्यौ पौहोर दौढ़ आसरै, सांभलतां सहु कोय।
वचन प्रकाशै किण विधै, भल सुणियै भवि लोय ॥ ५ ॥

ढाल : ६१

हेमराज जी स्वामी कृत

[नमो अरिहंताणं नमो सिद्ध निरवाणं—ए देशी]

साधु आवै साहमां जावौ, मुनि प्रकाशे वांणं।
बले साधवियां आवै बारै, स्वामी बोलै वचन सुहाणं॥
भवियण नमो गुरु गिरवाणं, नमो भिक्खु चतुर सुजाणं ॥ १ ॥
कै तौ कह्यौ अटकल उनमानैं, कै कह्यौ बुद्धि प्रमाणं।
कै कोई अवधिज्ञाण ऊपनौं, ते जांणैं सर्व नाणं ॥ २ ॥
केई नर नारी मुख सूं इम भाखै, स्वामी रा जोग साधां मैं वसिया।
इतलै एक मुहूर्त्त आसरै, साध आया दोय तिसिया ॥ ३ ॥
विकसत विकसत साधु वांदै, चर्ण लगावै शीशं।
नर नारी जांणैं अवधि उपनौं, साचौ विश्वावीसं ॥ ४ ॥
स्वामी साधु आया जांणी, मस्तक दीधौ हाथं।
एटलै दोय मुहूर्त्त आसरै, आयौ साधवियां रौ साथं ॥ ५ ॥
वैणीरांमजी साध वदीता, साथै खुसाल जी आया।
साधवियां बगतुजी जुमां डाही जी, प्रणमैं भिक्खु पाया ॥ ६ ॥
परचा ज्यूं ज्यूं आय पुगै छै, नर नारी हर्षंत थावै।
धिन हो धिन थे मोटा मुनीश्वर, आप तुलै कुण आवै ॥ ७ ॥

आया ते साधु गुण गावें, भांत भांत प्रणाम चढ़ावें।
थे मोटा उपगारी महिमा भारी, सगरी सुजन सुणावें॥ ८ ॥
थे पका पका पाखण्डी हटाया, सूत्र न्याय बताया।
दांन दया आछी दीपाया, बुद्धिवंता मन भाया॥ ९ ॥
सावद्य निर्वद्य भला निवेड़ा, कीधा बुद्धि प्रमाणं।
सूत्र न्याय श्रद्धा शुद्ध लीधी, धारी अरिहंत आणं॥ १० ॥
साधां जाण्यौ स्वामी सुना नें, घणी हुई छें वारं।
आप कहौ तौ बैठा करां हिव, जब भणियौ कांय ढुंकारं॥ ११ ॥
बैठा कर साधु लारै बैठा, गुण स्वामी रा गावें।
बहु नर नारी दर्शण देखी, मन में हर्षन थावें। १२ ॥
आयौ आऊखौ अण चिन्तवियौ, बैठां बैठां जाणं।
सुखे समाधे बाह्य दिसन, चट दे छोड्या प्राणं॥ १३ ॥
अणशण आयौ सात भगत नौं, तीन भगत संथारं।
सात पौहोर तिण माहैं वरत्या, पकौ उतार्यौ पारं॥ १४ ॥
मांहडी सींवे दरजी पूगा, कहै सूई पग में घाली।
अचरज लोक पांम्या अधिकौ, चट स्वामी गया चाली॥ १५ ॥
सम्बत अठारै साठे वर्षे, भाद्रवा सुद तेरस मंगलवारं।
पूज पौंहता परलोक शिरियारी, गुण गावें नर नारं॥ १६ ॥
दिन पाछलौ दौढ पोहर आसरे, उण वेलां आऊखौ आयौं।
दिवसे मरवौ रात्रि जनमवौ, कहै विरला ने थायो॥ १७ ॥

दुहा

संथारौ कीधौ सखर, सखर स्वाम श्रीकार।
शूरपणें सिझ्यो सखर, सखर सुजश संसार॥ १ ॥
साधां तन वोसिरायनें, चिउं लोगस चित्त धार।
कियौ तदा शुद्ध काउसग्ग, अरु तिण दिन तज आहार॥ २ ॥
पूज तणौ विरहौ पड्यौ, कठिन अधिक कहिवाय।
याद कियां अरिहंत नें, समभावे सुख पाय॥ ३ ॥
अहो अथिर संसार ए, संजोग जठै विजोग।
पूज सरीषा पुरुष था, पौंहता आज पर लोग॥ ४ ॥
देख्या भिक्खु दिलकरी, वारु निसुणी वांण।
याद करै वे अति घणा, जन गुणग्राही जांण॥ ५ ॥

चिउं तीर्थ आवी मिल्या, स्वाम तणैं संथार।
मास भाद्रवा रै मझै, अचरज ए अधिकार॥ ६ ॥
प्रबल पुन्य ना पोरसा, प्रबल गुणागर जाण।
पूज हुंता प्रगट पणैं, परभव कियो पयांण॥ ७ ॥

ढाल : ६२

[आनंदा रे—ए देशी]

स्वाम संथारौ सीझियौ गुणधारी रे, म्हेल्या मांढी रै मांहि। स्वाम सुखकारी रे।
तेरह खंडी मांहढ़ी तणी गुणधारी रे, महिमा कीधी अथाय स्वाम सुखकारी रे॥ १ ॥
रुपया सैंकड़ा लगाविया गुणधारी रे, अनेक उछाल्या लार भिक्खु रिष भारी रे। स्वा०।
ए सावद्य किरतब संसार ना गुणधारी रे, तिणमैं नहीं तंतसार। स्वा०॥ २ ॥
बात हुई जिसी बरणवै गुणधारी रे, समभावे सुविचार। स्वा०।
तिण माहैं पाप म तांणजो गुणधारी रे, दंभ तजी दिलधार। स्वा०॥ ३ ॥
अति घन जन वृंद आविया गुणधारी रे, आदरै सूंस अनेक। स्वा०।
विविध वैराग वधावता गुणधारी रे, बारू आंण विवेक। स्वा०॥ ४ ॥
पूज संथारौ पेखनैं गुणधारी रे, गावै जन गुण ग्रांम। स्व०।
धिन धिन भिक्खु स्वामजी गुणधारी रे, नित्य प्रत लीजै नाम। स्वा०॥ ५ ॥
आदेज वचन सु ओपतौ गुणधारी रे, स्वामी सिंघ सरूप। स्वा०।
खिम्यावंत स्वामी खरा गुणधारी रे, सखरा स्वाम सद्रुप। स्वा०॥ ६ ॥
नीत स्वाम नीं निरमली गुणधारी रे, प्रीत स्वाम गुण पूर। स्व०।
जीत लिया जन दुरमती गुणधारी रे, स्वाम वदती सनूर। स्वा०। ७ ॥
स्वाम बुद्धि ना सागरू गुणधारी रे, निरमल मेल्या न्याय। स्वा०।
प्रत्यक्ष आरै पांचमैं गुणधारी रे, जिन मत दियौ जमाय। स्वा०॥ ८ ॥
उद्यमी स्वामी अति घणा गुणधारी रे, स्वाम सुमति सुखदाय। स्वा०।
स्वाम गुपति हद शोभती गुणधारी रे, निरमल स्वाम नरमाय। स्वा०। ९ ॥
मणिधारी स्वाम महा मुनि गुणधारी रे, स्वाम प्रबल संतोष। स्वा०।
जग तारक स्वाम जांणजो गुणधारी रे, पूरण स्वाम नौं पोष। स्व०। १० ॥
दिशावांन स्वाम दीपतौ गुणधारी रे, अधिकी बुद्धि उत्पात। स्वा०।
मिथ्या तिमिर सुमेटवा गुणधारी रे, सूर्य स्वाम साख्यात। स्वा०। ११ ॥
सखर भिक्खु नांम सांभली गुणधारी रे, पाखण्ड भय पामंत। स्वा०।
जश भिक्खु नौ जगत मैं गुणधारी रे, देश देश मैं दीपंत। स्वा०। १२ ॥
स्वाम तिलक शासन तणौ गुणधारी रे, स्वाम आज्ञा सु उवेख। स्वा०।
स्वाम समी हद शोभता गुणधारी रे, स्वाम दमीसर देख। स्वा०। १३ ॥

स्वाम सुदांन दीपावियो गुणधारी रे, स्वाम सुज्ञान सरद्ध। स्वा०।
स्वाम सुजान शोभावियौ गुणधारी रे, स्वाम सुमांन मरद। स्वा०। १४॥
द्रव्य भाव स्वाम देखाविया गुणधारी रे, स्वाम आस्रव ओलखाय। स्वा०।
पुन्य पाप नें परखनें गुणधारी रे, स्वाम दिया सरधाय। स्वा०। १५॥
स्वाम संवर अरु निरजरा गुणधारी रे, बंध मोक्ष पहिछांण। स्वा०।
स्वाम जीवादिक जूजुआ गुणधारी रे, स्वाम दिखाया सुजांण। स्वा०। १६॥
स्वाम दया ओलखायनें गुणधारी रे, अति घन कीध उद्योत। स्वा०।
स्वाम सावद्य निरवद्य सोधनें गुणधारी रे, घण घट घाली जोत। स्वा०। १७॥
शुभ जोगां नें स्वाम जी गुणधारी रे, ओलखाया हद रीत। स्वा०।
आसता स्वाम नीं आदर्‌यां गुणधारी रे, जाय जमारौ जीत। स्वा०। १८॥
इन्द्रीवादी ओलखावियौ गुणधारी रे, कर काल्वादी निकंद। स्वा०।
प्रज्यावादी पिछांणियौ गुणधारी रे, स्वाम साचेलौ चन्द। स्वा०। १९॥
आचार सरधा ऊपरै गुणधारी रे, स्वाम शोध्या शुद्ध न्याय। स्वा०।
सूत्र वच शिर धरी गुणधारी रे, व्रत अव्रत बताय। स्वा०। २०॥
सोध्या तौ लाधै नहीं गुणधारी रे, स्वाम सरीषा साव। स्वा०।
करड़ौ कांम पड्यां चरचा तणौ गुणधारी रे, आवैला भिक्खु याद। स्वा०। २१॥
स्वाम भीखण जी सारीखा गुणधारी रे, भरत क्षेत्र रे मांहि। स्वा०।
हुआ नें होसी बले गुणधारी रे, हिवड़ां नहिं देखाय। स्वा०। २२॥
ऐसा भिक्खु ऋष ओपता गुणधारी रे, याद करै नर नार। स्वा०।
पूज गुणां रौ पंजारौ गुणधारी रे, स्वाम सकल सुखकार। स्वा०। २३॥
स्वाम तणौ नाम सम्भर्‌यां गुणधारी रे, आवै हर्ष अपार। स्वा०।
तौ प्रत्यक्ष नौं कहिवौ किसूं गुणधारी रे, पांमैं तन मन प्यार। स्वा०। २४॥
शरियारी मैं स्वामजी गुणधारी रे, साठै वर्ष संथार। स्वा०।
मास भाद्रवा मैं भलौ गुणधारी रे, जीत गर्भ मैं जिवार। स्वा०। २५॥
पंचम काले हूं ऊपनौं गुणधारी रे, पिण इक मुझ हर्ष पर्म। स्वा०।
आप शुद्धमग धार्‌यां पछै गुणधारी रे, जन्म थई पायौ धर्म। स्वा०। २६॥
आशा पूरण आप छौ गुणधारी रे, मेटण सकल संताप। स्वा०।
स्मरण नित्य प्रति स्वाम नौ गुणधारी रे, जपूं तुम्हारौ जाप। स्वा०। २७॥
बासठमी ढाल ओपती गुणधारी रे, समर्‌या स्वाम सुजांण। स्वा०।
जय जश करण भिक्खु भला गुणधारी रे, पूरण प्रीत पिछांण। स्वा०। २८॥

दुहा

वरष तैयालीस विचरिया, जाभौ कांयक जोय।
चारित्र पाल्यौ चूंप सूं, हर्ष हियै अति होय॥ १ ॥
अधिकौ बल इन्द्रयां तणौ, निरमल देह निरोग।
भिक्खु सूरत अति भली, अरु तीखौ उपयोग॥ २ ॥
सखर चौमासा स्वाम ना, बारु अधिक विशाल।
सांभलजो भवियण सहु, चरम सहित चौमाल॥ ३ ॥
आठ चौमासा आगै किया, असल नहिं अणगार।
सतरा सूं साठा लगै, वरत्यौ शुद्ध व्यवहार॥ ४ ॥
किहां किहां चौमासा किया, जूजुआ नाम सुजांण।
संक्षेपे निरणय सहु, आंखू उज्झम आंण॥ ५ ॥

ढाल ६३

[सीता आवै रे धर राग—ए देशी]

शहर कैलवै षट चौमासा, सतरै इकवीसै सोय।
पचीसै अड़तीसै गुणपचासै, अठावनैं अवलोय।
भिक्खु भजलै रे धर भाव॥ १॥
बारू एक चौमासौ बड़लु, बरस अठारै विचार।
राजनगर बीसै शुद्ध रीते, कियौ घणौ उपकार॥ २ ॥
दोय चौमासा किया दीपता, पवर कंटाल्यै पिछांण।
चौवीसै अठावीसै चारू, जन्म भूमि निज जांण॥ ३ ॥
बगड़ी तीन चौमासा बारू, सतवीसै सुविशेष।
तीतै अरु छतीसै त्यां द्रव्य, दीख्या महोछब देख॥ ४ ॥
गढ़ रिणतभंवर किलारी तलेटी, नगर माधोपुर न्हाल।
दोय चौमासा किया दीपता, इकतीसै अड़ताल॥ ५ ॥
दोय चौमासा किया दीपता, प्रगट शहर पींपार।
चउतीसै पैंतालीसै वर्षे, कियौ घणौ उपगार॥ ६ ॥
एक चौमासौ शहर आंवेट मैं, वर्ष पैंतीसे विचार।
सैंतीसै पादु सुखदाई, भिक्खु गुण भंडार॥ ७ ॥
सोजत शहरै कियौ स्वामजी, बारू एक चौमास।
वर उपगार तेपनैं धर्म वृद्धि, हेम चरण तिण वास॥ ८ ॥
श्री जी दुवारै तीन चौमासा, तसु धुर वरष तयाल।
पवर पचासै छपनैं पूरण, वर उपगार विश्माल॥ ९ ॥

पुर मैं दोय चौमासा प्रगट, स्वाम किया सुविहांण।
सैंतालीसै वर्ष सतावनैं, जुऔ छोड़ायौ जांण ॥ १० ॥
शहर खैरवै पांच चौमासा, छावीसैं बतीसैं छांण।
वर्ष इकतालै अरु छयालै, वलि चौपनैं जांण ॥ ११ ॥
सात चौमासा पाली शहरैं, तेवीसैं तेतीसैं थाट।
चालीसै चमालै बावनैं, पंचावनैं गुणसाठ ॥ १२ ॥
सात चौमासा शरियारी मैं, उगणीसै बावीसैं सार।
गुणतीसैं गुणाल वयाल एकावनैं, साठैं कियो संथार ॥ १३ ॥
पनरै गांम चौमासा पगट, स्वाम किया श्रीकार।
ज्ञान दिवाकर घण घट घाली, मेट्यौ भ्रम अन्धार ॥ १४ ॥
श्री वर्द्धमान तणौ शासण, सखरौ दीपायौ स्वाम।
बहु जीवां नै प्रतिवोद्धि नैं, पोंहता परभव ठांम ॥ १५ ॥
सुख कारण तारण भव सारण, विघन विदारण वीर।
नरक निवारण जनम सुधारण, सखरा स्वाम सधीर ॥ १६ ॥
समता दमता खमता रमता, नमता जमता न्हाल।
तमता भ्रमता वमता तन मन, गमता वचन विशाल ॥ १७ ॥
आप उजागर गुणमणि आगर, साघर स्वाम सुजांण।
वयण सुधावागर धर्म जागर, नागरनाथ निध्यान ॥ १८ ॥
भरम विहंडन दुरमति खंडन, महि मंडन मुनिराज।
कुमति निकंदन मन आनंदन, पूज भवो दधि पाज ॥ १९ ॥
सुमती करण अघहरण स्वामजी, शिव वधू वरण सनूर।
भव दधि तरण करण सुख सम्पति, चरण धरण चित्त शूर ॥ २० ॥
परम धरम भज भरम करम तज, शरम नरम उभ साज।
शिव पद अचरम आप आराधण, रूडौ भिक्खु ऋषराज ॥ २१ ॥
वर वायक पद लायक बारु, नायक नाथ निहाल।
बोद्धि पमायक धरम बधायक, दायक स्वाम दयाल ॥ २२ ॥
ज्ञान गम्भीरा सखर सधीरा, षट पीहरा तज खार।
हिवड़ै स्वाम अमोलक हीरा, तोड़ जंजीरा तार ॥ २३ ॥
जप तप नीं तरवारे झटकौ, पाखण्ड पटकौ पैल।
समथ सुल्टकौ गुण नीं गटकौ, मटकौ मन कौ मैल ॥ २४ ॥
ऐसा भिक्खु आप औजागर, अवतरिया इण आर।
स्वाम जिसा चौथै आरै पिण, विरला संत विचार ॥ २५ ॥

जन्म किल्याण कंटाल्यौ जांणौ, शरियारी चरम किल्यांण।
द्रव्य दीख्या महोछब बगड़ी मैं, जोड़ै ए त्रिहुं जांण ॥ २६ ॥
स्वाम भिक्खु हिवड़ै संभरियां, हियो तन मन हुलसाय।
सूक्ष्म बुद्धि करी सुविचार्यां, विमल कमल विकसाय ॥ २७ ॥
भाद्र शुक्ल तेरस दिन भिक्खु, परभव कियौ पयांन।
तिथि चउदश धरती धूजी अति, न्याय जांणैं बुद्धिवांन ॥ २८ ॥
तीन प्रकारै धरती धूजै, ठाणांग तीजै ठांण।
भेद जूजुआ श्री जिन भाख्या, समझै सखर सयांण ॥ २६ ॥
घर मैं वर्ष पचीस आसरै, आठ भेष मैं तास।
पछै संजम ले परभव पौंहता, चमालीस मैं वास ॥ ३० ॥
सर्व आउ सतंतर वरष आसरै, साध्यौ भिक्खु स्वाम।
जीव घणा समझाविया रै, कीधौ उत्तम काम ॥ ३१ ॥
साध साधवी स्वाम छतां आसरै, एक सौ चार बोद्धि।
देशव्रत दीधौ बहु नैं, सखरी रीत सुशोध ॥ ३२ ॥
अड़ती सहंस आसरै कीधी, युक्ति न्याय सूं जोड़।
मुरधर मेवाड़ ढूंढार हाडोती, विचर्या शिरमणि मौड़ ॥ ३३ ॥
राम नाम ज्यूं रटै स्वाम नैं, मुझ मन अधिक निहोर।
हंसा मानसरोवर हरषै, चित्त जिम चन्द चकोर ॥ ३४ ॥
चात्रक मोर पपईया घन चिन, गरजी ध्यान गगन।
राग विलासी राग अलापै, मुझ भिक्खु नैं मन ॥ ३५ ॥
पतिवरता समरै जिम पिउ नैं, गोप्यां रै मन कान्ह।
तंबोली रा पान तणी पर, धरूं स्वाम नौं ध्यान ॥ ३६ ॥
आशा पूरण आप तणा गुण, कह्या कठा लग जाय।
सागर जल गागर किम मावै, किम आकाश मिणाय ॥ ३७ ॥
श्री वीर तणैं पट स्वाम सुधर्मा, भिक्खु पट भारीमाल।
रायचंद ऋष तीजै पाटै, दाख्यौ आगुंच दयाल ॥ ३८ ॥
आप तणा गुण हूं किम विसरूं, आप तणौ आधार।
स्मरण आप तणौ नित्य समरूं, आप दयाल उदार ॥ ३६ ॥
नांम आपरौ घट भींतर मुझ, जपूं आपरौ जाप।
तुझ नांमैं दुख दोहग दूरा, कटै पाप संताप ॥ ४० ॥
मन वंछित मिलियै तुझ स्मरण, साध्यां सेती सोय।
भजन तुम्हारौ भय भव भंजन, हर्ष अनोपम होय ॥ ४१ ॥

मंत्राक्षर जिम स्मरण मोटौ, परख्यौ म्हैं तन मन।
इह भव परभव मैं हितकारी, भिक्खु तणौ भजन ॥ ४२ ॥
नमो नमो भिक्खु ऋष निरमल, मोक्ष तणा दातार।
स्मरण स्वाम तणौ शुद्ध साध्यां, शिव सुख पांमैं सार ॥ ४३ ॥
हूंस घणा दिन सूं मुझ हूंती, आज फली मन आश।
भिक्खु जश रसायण नांमैं, ग्रंथ रच्यौ सुविलास ॥ ४४ ॥
विस्तार रच्यौ भिक्खु मुनिवर नौ, सुणियौ तिण अनुसार।
भिक्खु दृष्टन्त हेम लिखाया, देखी ते अविकार ॥ ४५ ॥
वैणीरांमजी हेम कृत वर, भिक्खु चरित सुपेख।
इत्यादिक अवलोकी अधिकौ, ग्रंथ रच्यौ सुविशेष ॥ ४६ ॥
अधिकौ ओछौ जे कोई आयौ, विरुद्ध आयौ हुवै कोय।
सिद्ध अरिहंत देव री साखे, मिच्छामि दुक्कडं मोय ॥ ४७ ॥
संवत उगणीसै आठै आसोज, एकम सुदि सार।
शुक्रवार ए जोड़ रची, बीदासर शहर मझार ॥ ४८ ॥
तेसठमी ढाले स्वामी समरथा, कर्म काटण रै कांम।
कर जोड़ी ऋष जीत कहै, नित्य लेऊं तुम्हारौ नांम ॥ ४९ ॥

कलश

मतिवंत संत महंत महा मुनि, तंत भिक्खु ऋष तणा।
गुण सघन गाया परम पाया, हद सुहाया हियै घणा ॥ १ ॥
तज जंत्र मंत्र सुतंत्र लौकिक, भज ए मंत्र मनोहरू।
सुख सद्म पद्म सुकरण जय जश, नमो भिक्खु मुनि वरू ॥ २ ॥

: ४ :

लघु भिक्खु जश रसायण

[चतुर्थाचार्य जीतमलजी स्वामी कृत]

दुहा

वीर पाट सौधर्म वर, जंबू प्रभव उदार।
भट्ट सिज्झंभव मनकपिय, जशोभद्र जयकार ॥ १ ॥
जसोभद्र ना सीस बे, संभूत विजय सुजाण।
भद्रबाहु मुनिवर भला, सोल स्वपन कृत छाण ॥ २ ॥
स्थूलभद्र दृढ चित रह्या, ए चउदश पूर्व्वधार।
महागिरी सुहस्त फुन, गोत्र एलावच्छकार ॥ ३ ॥
सुद्ध परंपरा महागिरी, नंदी नाम उदार।
बहुल प्रमुख पट दूसगणी, अंत नाम अवधार ॥ ४ ॥
संप्रति नैं समझावीयौ, सिथिल थया सुहस्त।
कृतगढ़ अनेषणी प्रमुख, दोष विषै आसक्त ॥ ५ ॥
महागिरी समझावीयौ, तब बोल्या इम वाय।
काल आगामिक नैं विषै, धर्म प्रवर्त्तस्यै ताय ॥ ६ ॥
दुर्भिक्ष में मुनिवर भणी, जन देस्यै अनपाण।
आहार पाणी तब तोडीयौ, नशीतचूर्णे जाण ॥ ७ ॥
सुहस्त पट सुस्थिति जे, कोडिवार जे ताहि।
सूर मंत्र जपवा थकी, कोटिक गच्छ कहिवाहि ॥ ८ ॥
सुहस्त परपाटी थई, तेह असुद्ध जणाय।
कल्पसूत्र मै नाम तसु, वलि बहुश्रुत जाणै ताय ॥ ९ ॥
आरंभी सुहस्त थी, सुस्थित सुप्रतिबद्धाद।
अनुक्रम श्रेणज नीकली, नंदीवृत्ति संवाद ॥ १० ॥
सुहस्त पाछा सुद्ध हुवा, सुध परिपाटी आय।
ते पिण जाणैं केवली, वंदे नंदी माय ॥ ११ ॥
प्रश्नोतर रत्न मालिका, ग्रंथ कथा मै ख्यात।
सुहस्ति दंड ले सुद्ध थया, एह मिलती दीसै बात ॥ १२ ॥
वज्रस्वाम नंदी विषै, सुध परिपाटी पट्ट।
कल्पसूत्र पिण नाम तसु, असुद्ध परंपर वट्ट ॥ १३ ॥

नंदीसूत्र विषै कथा, ते अनुसारे ताय।
धुर परिपाटी असुध मैं, द्रव्यै चरण जणाय ॥ १४ ॥
पछै सुध दिष्या ग्रही, सुध परिपाटी पट्ट।
एहवौ न्याय जणाय छै, बहुश्रुत वदै सुवट्ट ॥ १५ ॥
नंदी स्थिरावली विषै, दूसगणी अभिधान।
अंत नांम ए आखीयो, पाछै न कह्यौ जान ॥ १६ ॥
कल्पसुत्र में पिण कह्यौ, दूसगणि नो नांम।
थया हुवै ए वज्र जिम, ते पिण जांणे केवली तांम ॥ १७ ॥
तथा वज्र पिण बे थया, दूसगणि पिण दोय।
ते पिण जांणे केवली, निश्चै खबर न कोय ॥ १८ ॥
कल्पसूत्र मै इम कह्यौ, दूसगणि पट ताहि।
क्षमाश्रमण स्थिरगुप्त जे, वच्छस गोत्रज पाहि ॥ १९ ॥
कुमार धर्म थया पछै, पछै देवढ्ढी नाम।
पछै नाम नहीं आखिया, कल्प विषै पिण ताम ॥ २० ॥
कल्प विषै शाखा घणी, आखी छै त्या माहि।
चरणधार केई सुद्ध हुवै, ते पिण जांणै केवली ताहि ॥ २१ ॥

ढाल : १

[सीतां सती सुत जनमीया—ए देशी]

वीर निर्वांण थकी रह्यौ, प्रवर पूर्व नौ ज्ञान।
एक सहंश्र वर्सां लगै, सतक वीस मैं जान ॥ १ ॥
संवत पनरैसै तदा, वर ईकतीसै वाश।
भसमग्रह उतर्‍यां पछै, लूंको प्रगटचौ तास ॥ २ ॥
धूमकेतु बेठौ तदा, दश वर्षां पहला दीस।
तास स्थिति वर्ष तीन सौ, ऊपर फुन तेतीस ॥ ३ ॥
भवग्रह स्थिति बे सहंस्र वर्ष नीं, उतरीयां सुं ताहि।
उदै उदै पुजा निग्रंथ नी, कल्पसुत्र मैं वाय ॥ ४ ॥
वंकचुलीया मैं कह्यौ, प्रभु सिव थी पेष।
बे सौ एकाणव वर्षां लगै, विसुद्ध परुपणा विशेष ॥ ५ ॥
ता पाछै उतसूत्र नीं, परुपणा अधिकाय।
वष सोलसौ ऊपरै, जिनाणूं लग लाय ॥ ६ ॥

तिहां दुष्ट वाणीया मानस्यै, हिंसा धर्म दिढाय।
बहु जन भणी कुपंथ में, न्हांखेसी इधकाय॥ ७॥
बे सौ एकाणव वर्ष लगै, सुध परुपणा ख्यात।
सोलेसै निनाणुं वर्ष ए, असुद्ध असुद्ध अधिक अवदात॥ ८॥
ए उगणीसौ नेउ थयां, संघ सूत्र जे रासि।
धूमकेतु तब बैसिस्यै, स्थिति त्रिण सय तेत्तीस वासि॥ ९॥
ए वर्ष तेवीसै तेवीस जे, तठा पछै अधिकाय।
उदय संघ नें सूत्र तणौ, वंकचूलीया मैं वाय॥ १०॥
वर्ष तेवीसौ तेवीस ए, किसा वर्ष लग थाय।
तेह तणौ निर्णय कहुं, सांभलजो चित ल्याय॥ ११॥
च्यार सो सित्तर वर्ष लगै, नंदीवर्द्धन नौ सोय।
संवत वरत्यौ तठा पछै, वीर विक्रम नौं जौय॥ १२॥
अठारै सय तेपनैं थया, वर्ष तेवीसौ तेवीस।
धूमकेतु जद उतर्‌यौ, संघ पुजा अति दीस॥ १३॥
द्वादश मुनि था तेपनैं, स्वाम भिक्खू रै जोय।
तब हेम हुवा मुनि तेरमा, पछै न घटीयौ कोय॥ १४॥
बेसौ एकाणु वर्षां लगै, सुध परुपणा किण न्याय।
सहस्र वर्ष पूर्वधर रह्या, ते तौ सुध देखाय॥ १५॥
विसंभोग सुहस्त थी, नसीतचूरणे न्हाल।
उतसूत्र तास परंपरा, पूर्वधर तिण काल॥ १६॥
छ सौ नव वर्षां पछै, दिगंबर मत देख।
इम पूर्व ज्ञानी थकां, विरुद्ध पण शेष॥ १७॥
इम बेंसौ एकाणुं लगै, अति उतसूत्र न थाय।
पाछै उतसूत्र तणी, परुपणा अधिकाय॥ १८॥
सोलैसै निनाणु वर्ष ते, अति उतसूत्र कुहेतु।
ए उगणीसै नेउं थयां, बेठौ ग्रह धूमकेतु॥ १९॥
पनरसै इकतीसै समैं, लुंकौ प्रगट्यो न्हाल।
भस्मग्रह तब उतर्‌यौ, धूमकेतु वय बाल॥ २०॥
लूंकां नां प्रतिबोधिया, सुध ववहार जणाय।
धूमकेतु बल बाधीयां, ते पिण ढीला थाय॥ २१॥
सतरैसै नवकै समैं, ढुंढ्यां नीकल्या ताहि।
संकड़ाइ माहै ते रह्या, सम्यक्त दीसै नाहि॥ २२॥

समत् अठारै सत्तरोत्तरै, पंचांग लेखे सुजाण।
वय वृध धूमकेतु थया, प्रगटचा भीक्खू भाण ॥ २३ ॥
मंदबल धूमकेतु जदा, लूंकौ प्रगटचौ ताम।
ऊतरतै मंदबल तदा, प्रगट्या भिक्खू स्वाम ॥ २४ ॥
तेर संत सुं नीकल्या, धूमकेतु थौ तिवार।
तिणसूं तेपनां लग, बहु वध्यौ न संघ विस्तार ॥ २५ ॥
अंत तेपनैं उतर्यौ, धूमकेतु अपयोग।
ता पाछै वाध्यौ बहु, च्यारुं संघ प्रयोग ॥ २६ ॥
अठारैसै साठै समैं, एकवीस मुनि योग।
अज्जा सतावीस मेलनैं, पोहता भीक्खू परलोग ॥ २७ ॥
समत अठारै अठंतरै, संत पैंतीस सुचाल।
अज्जा इकतालीस मेलनैं, परभव भारीमाल ॥ २८ ॥
उगणीसैं आठै समैं, सतसठ मुनिराय।
इकसौ चमालीस अज्जामेल नैं, परभव मैं ऋषराय ॥ २९ ॥
भीक्खु नै वरतारै थया, संत सती सुषकार।
एकसौ च्यार रै आसरै, दीष्या लीधी सार ॥ ३० ॥
मुनी अज्जा बैयासी थया, भारीमाल वरतार।
थया बेसौ पैतालीस, रायऋषी छतां सार ॥ ३१ ॥
इम दिन दिन दीसैं दीपतौ, च्यार तीर्थ वृद्धकार।
वंकचुलीया री वारता, मिलती दीसै उदार ॥ ३२ ॥
प्रथम ढाल मै पीठका, धुर सुं वात प्रकासी।
सुध श्रद्धा आचार सुं, जयजश आनन्द थासी ॥ ३३ ॥

दुहा

हिव उत्पति भीक्खू तणी, धुर सेती अवलोय।
संक्षेपै कहियै अछै, सांभलजो सहु कोय ॥ १ ॥
किण स्थानक मुनि जनमीया, द्रव्य दिष्या किण ठाम।
सुध श्रद्धा आई किहां, सुत्र थकी अभिराम ॥ २ ॥
किम चरचा द्रव्य गुरु थकी, आहार तोड्यौ किण ग्राम।
किम बहुजन प्रतिबोधीया, च्यार तीर्थ गुणधाम ॥ ३ ॥
लिषत मर्यादा किम करी, संलेषणा किम अंत।
किण विध संथारौ कियौ, सहु संक्षेप कहूंत ॥ ४ ॥

ढाल : २

(राजग्रही नगर भली ए—ए देशी)

भिक्खू प्रगट्या भरत में, मणिधारी मुनिराय।
अतिसय धारी ओपता, जबर दिशा अधिकाय।
सुगण जन सांभलो रे ॥ १ ॥
दान दया दिक ऊपरै, दीया विविध दृष्टांत।
श्रीजिन आज्ञा सिर धरीं, दीपायौ प्रभु पंथ ॥ २ ॥
सावज्झ निरवद सोधीया, ऊंडी बुद्धि उत्पात।
भाग्यबली भिक्खू भला, वारु जश सुविख्यात ॥ ३ ॥
समत सतरै बयांसीयै, शहर कंटाल्यै सार।
सींह सपनै सुत जनमीयै, आसाढ सुध अविकार ॥ ४ ॥
रमण एक परण्यां तिहां, काल कितै सुविचार।
शील आदर्यौ बिहुं जणा, दिष्या री दिलवार ॥ ५ ॥
अनुमत माता नां दीयै, सुपनें देष्यौ सीह।
द्रव्य गुरु कहै ए गूंजसी, मृगपति जेम अबीह ॥ ६ ॥
समत् अठारै आठै समैं, द्रव्य गुरु धार्‌या रुघनाथ।
दिष्या मोहछब दीपता, बगडी शहर विष्यात ॥ ७ ॥
बहु सिद्धांत वांचीकरी, जाण लीयौ तिण वार।
थाप बहु दोषां तणी, पिण द्रव्य गुरु सूं अति प्यार ॥ ८ ॥
पूछ्यां सुद्ध उत्तर नहीं, इह अवसर रै मांय।
बात सुणी रुघनाथजी, कहै भिक्षु नें बोलाय ॥ ९ ॥
श्रावक रायनगर तणा, वंदणा छोडी ताहि।
थे जइ संका मेट दौ, बुधिवंत विण मिटै नाहि ॥ १० ॥
सुण भिक्षु आया तिहां, भारीमालजी जांण।
टोकरजी हरनाथजी, वलि साथै वीरभाण ॥ ११ ॥
श्रावक कहै भिक्षु भणी, आधाकर्मी आदि।
थाप दोष री थांहरै, म्हे किम सरधां साध ॥ १२ ॥
द्रव्य गुरु रौ वच राषवा, निज बुद्धि करनें ताय।
पगां लगाया तेहनें, वलि श्रावक कहै वाय ॥ १३ ॥
संका तौ मुज नां मिटी, पिण थारी परतीत।
तिण कारण वंदना करां, आप वैरागी वदीत ॥ १४ ॥

इह अवसर भिक्षु तणैं, तनु मैं प्रगट्यौ ताप।
सीयौ दुःसह अति घणौ, तब मन चिंतै आप ॥ १५ ॥
म्हे साचां नैं भूठा कीया, प्रत्यक्ष मोटौ पाप।
आउ आवै इण अवसरै, तौ कुण गति मैं मिलाप ॥ १६ ॥
द्रव्य गुरु काम आवै कदी, मिटीयां वेदन मोय।
सुध मारग धारूं सही, कांण न राषूं कोय ॥ १७ ॥
अभिग्रह एहवौ आदर्यो, तुरत मिट्यो तब ताव।
वार वार सूत्र वांचीया, सषरौ जाण्यौ साव ॥ १८ ॥
सुद्ध हाथे नाइ श्रद्धा, असल नहीं आचार।
वर जिन वचन बिलोकतां, भूला ए भेषधार ॥ १६ ॥
तांम श्रावकां नै तदा, बोल्या भिक्षू वाय।
थे साचा सुद्ध थापथी, म्हे भूठा छां तायि ॥ २० ॥
सुण श्रावक हरष्या सही, आप तणी परतीत।
जिसी हुंती ते तुरत ही, आप दिखाड़ी सुरीत ॥ २१ ॥
इम संवत अठार पनरोत्तरै, राजनगर मैं रंग।
सुत्र वाच निर्णय कीयौ, सखरी रीत सुचंग ॥ २२ ॥
हिव चउमासौ ऊतर्यां, मरुधर देश मभार।
सोजत मैं आवी मिल्या, द्रव्य गुरु सूं तिण वार ॥ २३ ॥
द्रव्य गुरु नै इह विध कहै, भूला मार्ग सार।
सुध सरधा आइ नहीं, असल नहीं आचार ॥ २४ ॥
सावज करणी पाप री, निरवद पुन री होय।
पिण एकण करणी मभै, पुन्य पाप नहीं दोय ॥ २५ ॥
असंजती नैं दान दै, जिन कह्यौ एकांत पाप।
शतक आठ मैं भगवती, स्थिर चित सेती थाप ॥ २६ ॥
असंजती रौ जीवणौ, वंछ्या सावज जोग।
सावज अनुकंपा कही, देख रे दे उपीयोग ॥ २७ ॥
आधाकर्मी भोगवां, थानक नित पिंड आहार।
मोल लीया वस्त्रादि जे, अहोनिश जड़ौ कवाड़ ॥ २८ ॥
इत्यादिक बहु वारता, दाखी विविध प्रकार।
द्रव्य गुरु सुण मांनी नहीं, क्रोध चढ्या तिणवार ॥ २६ ॥
जद भिक्खू मन चिंतवै, करिवौ कवण प्रकार।
हिवडां न दीसै समभता, समजावि धर प्यार ॥ ३० ॥

दोय वर्ष कै आसरे, किया अनेक उपाय।
केतलायक नें [illegible] द्रव्य गुरु नें गिण ताहि ॥ ३१ ॥
वले वगड़ी मांहै आवीया, बोल्या भिक्षु वाय।
सुध सरधा आचार नें, धारो आंण उछाह ॥ ३२ ॥
तब द्रव्य गुरु मांनी नहीं, मन में कीयो विचार।
ए तौ न दीसै समजता, हिवै करुं आत्मा नौ उधार ॥ ३३ ॥
इम मन पक्की धारनैं, भिक्षु बुधि भंडार।
तडकै तोड़ी नीकल्या, आया स्थानक रै बार ॥ ३४ ॥
सेवग पुर मै फिर गयौ, बोल्यो एहवी वाण।
जागा दीधी भिक्षु भणी, तौ संघ तणी छै आण ॥ ३५ ॥
करली कुबुधिज कैलवी, सेज्या न मिल्यां सोय।
आफेई आसी उरहा, थांनक में अवलोय ॥ ३६ ॥
पुर मै जागा नां मिली, भिक्षु कीयौ विहार।
वगडी बाहिर आवीया, बाउल बाजी तिवार ॥ ३७ ॥
जैतसिंहजी री जिहां, छत्तरी अधिक उदार।
आवीनैं बैठा तिहां, सुणीयौ शहर मझार ॥ ३८ ॥
दूजी ढाल प्रगटपणें, स्वाम तणी सुखदाय।
वारुं वतका सांभल्यां, जयजश हरष सवाय ॥ ३९ ॥

दुहा

द्रव्य गुरु सांभलीयौ तदा, लोक वहु ले लार।
आया छत्र्यां नैं विषै, भीक्षु कनैं तिवार ॥ १ ॥
द्रव्य गुरु नैं भिक्षु तिहां, बैठा छत्र्यां माहि।
माहोमा वाता करै, ते सुणजो चित ल्याय ॥ २ ॥

ढाल : ३

[हांरा मेवासी नन्ही सी नणदंलीरा—ए देशी]

हां रे, भीषन तब द्रव्य गुरु बोल्या ताह्यौरा हो।
जी भिक्खू द्रव्य० सुण मुज वायौरा २। सुण वारुजी।
हां, रै भीखन तोनैं म्है, दीधी छै दीष्याग।
हो जी, भिक्खू० धर मुज शिष्याग २, । सुण वारु जी ॥ १ ॥
हां, औ दुखम पंचम आरौ रा, हो अधिक असारोरा २।
हां, थांरै दृढ संजम सु पेमोरा, हो भिक्खू २ निर्भैलो केमोरा २ ॥ २ यत ॥

यतनी

तब भीक्षु बोल्या ताह्यौ, म्है किम मानां तुज वायौ।
सुत्र वाचैनैं कीधौ निरणौ, लेसां जिन वचनां नो सरणौ ॥ ३ ॥

सूत्र रूप तीर्थ ए जाचौ, रैहसी छेहड़ा तांई साचौ।
सुघ पालसां संजम भार, करस्यां आत्म तणौ उधार ॥ ४ ॥
द्रव्य गुरू सुण वचन उदार, तब तूटी आस तिवार।
मोह आयौ तिणवार, मन चिंता हुई अपार ॥ ५ ॥
उदैभाण बोल्यौ तब एम, इम आंसु पचकरो केम।
बाजो टोला तणा धणी आप, राषौ थिर चित दृढ मन थाप ॥ ६ ॥
कहै किणरौ जावै एक, म्हारा जावै पांच विशेष।
औ तौ प्रत्यक्ष ही इहवार, गणं माहै पड़ै बघार ॥ ७ ॥
भीक्षु दृढ चित कीयौ उदार, म्हे घर छोड्यौ तिणवार।
मुज माता रोई अपार, तों पिण न मान्यौ तिवार ॥ ८ ॥
जो हुं रहुं भागलां माय, तौ परभव मैं दुख पाय।
इम दृढ चित ज्ञान विचार, आप सैंठा रह्या तिणवार ॥ ९ ॥
द्वेष सूं तो तुरत डिगै नाहि, मोह राग थकी चल जाय।
द्रव्य गुरु मोह आण्यौ ताहि, पिण कारी न लागी काय ॥ १० ॥

दुहा

वलि द्रव्य गुरु मन चितवै, इम तौ डिगीयौ नाय।
वलि चलावा कारणै, बोल्या इह विधि वाय ॥ ११ ॥

ढाल तेहिज

हांरे, तु जासी कितीयक दूरौरा हो, हूं लोक लगासूं पूरौरा २।
हां आंगो थारौ नैं पूठौ माहारौरा हो२, रहि सूं लारौरा २ ॥ १२ ॥

यतनी

जद भिक्षु बोल्या वाय, परिषह खमवारी मन माय।
इम तौ डरायौ न डरूं कोय, किती काल जीवणौ मोय ॥ १३ ॥
पछै छत्र्यां सुं कियौ विहार, हुवा रुघनाथजी लार।
चरचा किधी है वरलू माहि, ते सांभलजो चितल्याय ॥ १४ ॥
तब द्रव्य गुरु बोल्या ताय, सांभल भीखन मुज वाय।
साधुपणौ पलैं नहीं पूरौ, ए दुषम काल करूड़ौ ॥ १५ ॥
तब भिक्षु कहै इम वाय, कह्यौ सुत्र आचारंग माहि।
ढीला भागल कहैसी एम, हिवड़ां न पलै चरण सुध नेम ॥ १६ ॥
बल संघयणादिक हीण, दुषमकाल महा क्षीण।
न पलै आचार सुध भाव, नहीं उत्सर्ग नौ प्रस्ताव ॥ १७ ॥
कह्यौ आगूंच अर्थ उदार, इम कहसी ते भेषधार।
द्रव्य गुरु हुवा कष्ट अपार, सध जाब न आयौ तिवार ॥ १८ ॥

द्रव्य गुरु भीक्षु रैं ताहि, बहु चरचा हुई माहो माहि।
इहां संक्षेप मात्रज आपी, वलि द्रव्य गुरु इह विधि भापी ॥ १६ ॥

ढाल तेहिज

हांरे, सुद्ध चारित्र निरतीचारो रहै, दुक्कर कारोरा २। हांरे।
जो दोय घडी निरदोपीरा होजी २, चारित्र पालैं चौपीरा २ ॥ २० ॥
हां, इम सुध तन मन सुं भावै हो २, तो केवल पावैरा २ ॥ २१ ॥

यतनी

हां, इम बोल्या है विना विचार, भीक्षु सांभल नैं तिणवार।
पाछौ उत्तर देवे एम. तुम्हें सांभलजौ धर प्रेम ॥ २२ ॥

कलश

इम वचन सुन भट सुघट, सुध वट प्रगट भिक्षु उच्चरे।
घटिकां जु बे सुध चरण, निर्मल अमल करि केवल वरै ॥ २३ ॥

बे घड़ी तलक वक्क काय, नागा रुंध समभावे रहुं।
थिर चित्त अधिक पवित्त, अति हित चितथी केवल लहूं ॥ २४ ॥

सौधर्म जंबु मुनि रह्या, छद्मस्थ बहु वर्ष सही।
सुध निरतीचार बे घड़ी, त्यां चरण पाल्यौ कै नहीं ॥ २५ ॥

तसुं पट्ट प्रभव सिजंभवादिक, पूर्व ज्ञान जपावही।
तुज लेख सुद्ध चरित्त, त्यां पिण बे घड़ी पाल्यौ नहीं ॥ २६ ॥

मुनि तेर सहस्र नै तीनसय सुन रह्या, जे छद्मस्थ ही तुज लेख।
सुद्ध चरित्त त्यां पिण, बे घड़ी पाल्यौ नहीं ॥ २७ ॥

मुनि गौतमादिक सत्तसय, छद्मस्थ जे बहु काल ही।
तुज लेख सुद्ध चरित्त, त्यां पिण बे घड़ी पाल्यौ नहीं ॥ २८ ॥

फुन वर्ष द्वादश तेर पष, महावीर प्रभू छद्मस्थ ही।
तुज लेख सुद्ध चरित्त, त्यां पिण बे घड़ी पाल्यौ नहीं ॥ २९ ॥

सोरठा

ए चर्म सरीरी जेह रे, केवल उत्पत्ति काल थी।
बहु पूर्व कालेह रे, स्यूं दोय घड़ी पाल्यौ नथी ॥ ३० ॥

दुहा

इत्यादिक हुई घणी, चरचा माहोमाहि।
समजाया समजै नहीं, कीया अनेक उपाय ॥ ३१ ॥

ढाल तेहिज

हांरे सुगणजन वरलूं सुं, कियौ विहारो रा हो जी स्वामीर।--
भीक्षु सारोरा जश धारी जी हा रे सु०, वृद्ध भीक्षु नीं भारी रा हो स्वामी २।
अधिक उदारीरा २। ज० ॥ ३२ ॥

हांरे, भिक्षु चिंतव्यौ मन मांहिरा। हो हो स्वाम २, ए तौ समज्या नांहीरा २।
हांरे, निज काका गुरू तामोरा हो २, जैमलजी नामोरा। ज० ॥ ३३ ॥
हांरे, ते समजाउं सधीकोरा हो २, ते सरल भद्रीकोरा २।
हांरे, इम चिंतव मन मांहीरा हो २, आया चलाईरा २॥ ३४ ॥
हांरे, जैमलजी रै उदारीरा हो २, श्रद्धा बैसारीरा २।
हांरे, तत्क्षिण भिक्षु रै लारी रा हो, ते पिण हुवा त्यारी रा २॥ ३५ ॥
हांरे, द्रव्य गुरु सुणनैं तामोरा हो २, भाग्या परिणामोरा २।
हांरे, बुद्धिवंत तुज गुण माह्योरा हो २, त्यांनै लेसी ताह्यौरा २॥ ३६ ॥
हांरे, बीजानैं न लेवै लारोरा हो २, हुसी निराधारोरा २।
हांरे, इम ए दुषीया होसीरा हो २, थांनैं सहु रोसीरा २॥ ३७ ॥
हांरे, थांरै बहु परिवारौरा होजी मुनि २, मतीय विचारौरा २।
हांरे, थे छौ घणा रा नाथोरा हो २, मति विचारौ वातोरा २॥ ३८ ॥
हांरे, तुज मुनि जो सुं तामौरा हो २, भीक्खुरौ होसी नामोरा २।
हांरे, टोलौ भिक्षु रौ वाजेसीरा हो २, थांरौ नाम न रैहसीरा २॥ ३९ ॥
हांरे, फकीरवालौ दुपटो होइरा हो २, ए दृष्टांत जोईरा २।
हांरे, इत्यादिक वच करि तांमौरा हो २, भांग्या परिणामौरा २॥ ४० ॥
हांरे, बोल्या जैमलजी वायौरा हो २, सुणौ भिक्षु ताह्यौरा हो २।
हांरे, गला जितौ हुं कलीयौरा हौ २, न कहुं वच अलीयौरा २॥ ४१ ॥
हांरे, थे संजम सुध पालौरा हो मु० २, आत्म उजवालौरा २।
हांरे, पंडितां रै अवलोयो रा हो २, जाणी वरते सोयोरा २॥ ४२ ॥
हांरे, जैमलजी रा उदारौ रा हो २, षट अणगारौरा २।
हांरे, मन माहि गाढी धारौरा हो २, हुवा भिक्षु लारौरा २॥ ४३ ॥
हांरे, जैमलजी रा षट संचोरा हो २, द्रव्य गुरू रा पंचोरा २।
हांरे, अन्य गणना बे धारीरा हो २, तेरै थया त्यारीरा २॥ ४४ ॥
शहर, ज़ौधाणैं समेरोरा हो २, थया श्रावक तेरोरा २।
हांरे, सामायक पोसह धारोरा हो २, बैठा बजारौरा २॥ ४५ ॥
हांरे, फतैचंद दीवाणौरा होजी भविक २, सिंघी पिछाणौ २।
हांरे, देषी पूछै तिवारोरा हो, क्यूं बैठा बाजारोरा २॥ ४६ ॥
हांरे, थानक माहै सीधारा हो २, पोसा क्यूंनी कीधारा २।
हांरे, श्रावक कहै तिवारोरा हो २, मुज गुरु सारोरा २॥ ४७ ॥
हांरे, तज थानक नींसरीयारा हो २, भिक्षु गुण दरीयारा २।
हांरे, ताम दीवाणजी इच्छैरा हो २, उत्पत्ति पूछैरा २॥ ४८ ॥

हांरे, श्रावक बोल्या साम्यातीरा हो २, छै बहु वातीरा २।
हांरे, थिरता ह्वै जद सुणजोरा हो २, थिर चित थुणजोरा २॥ ४९॥
हांरे, कहै दीवान उदारुरा हो २, थिरता अवाहरा २।
हांरे, श्रावकां ताम कह्यौ सुणायोरा, होजी भवि आचार बनायोरा॥ ५०॥
हांजी, आधाकर्मी आदीरा हो २, तजिया दिवदीतीरा २।
हांजी, कृतगडनैं नित पंडोरा, होजी। दोषण छंडोरा २॥ ५१॥
हांजी, इत्यादिक आचारोरा हो २, आख्यी उदारोरा २।
हांजी, सांभल सिंघी हरख्यौरा हो २, भिक्षु गुण परख्यौरा २॥ ५२॥
हांजी, ओहीज मुनी नौं आचारो हो २, मुख मग्ग सारोरा २
हांजी, करै प्रसंस सवायोरा हो २, मन हरषायो रा॥ ५३॥
हांजी, संत किताक सुमेरोरा हो भ० २, श्रावक कहै तेरोरा २।
हांजी, किता श्रावक थे सारोरा हो २, अधिक उदारो रा २॥ ५४॥
हांजी, म्हें भिक्षु ऋषि केरारा हो २, श्रावक तेरारा २।
हांजी, सिंघी बोल्यो तिवारीरा हो २, जोग मिल्यौ ए भारीरा २॥ ५५॥
सेवग, उभो ज्यांहीरा हो २, तुकी जोड्यौ त्याहीरा॥ ५६॥

सेवगोक्त दूहा

आप आपरो गिलो करै, ते आप आपरौ मंत।
सुणजो रे शहर का लोकां, ए तेरापंथी तंत॥ ५७॥

ढाल तेहिज

हांजी, तेरै श्रावक तेरै संतोरा हो २, तेरापंथी तंतोरा २।
हांजी, जग विस्तारियौ नामोरा हो २, तेरापंथी नामोरा २॥ ५८॥
हांजी, ताम भीक्षु इम कैहवैरा हो जी स्वा० २, समचित वेवैरा २।
हांजी, हे प्रभुजी म्हे तेरारा होजी २, अवर अनेरारा २॥ ५९॥
हांजी, सुमत गुप्त अठ संचोरा हो २, पालै व्रत पंचोरा २।
हांजी, ए तेरै पालै चित संतीरा होजी २, सोही तेरापंथी रा २॥ ६०॥

छंद

गुण विण भेष कुं मूंल न मांनत, जीव अजीव का किया निवेरा।
पुन्य पाप कुं भिन भिन जांनत, आस्रव कर्म कुं लेत उरेरा।
आवता कर्मां नै संवर रोकत, निर्जरा कर्मां कुं देत विखेरा।
बंध तौ जीव कुं बांधिया राखत, शास्वता सुख तौ मोक्ष में डेरा।
इसो घट प्रकाश किया, भव जीवका मेट्या मिथ्यात अंधेरा।
निर्मल ज्ञान उद्योत किया एतौ, है पंथ प्रभु तेरा ही तेरा॥ ६१॥

तीन सौ तेसठ्ठ पाखण्ड जगत मैं, श्री जिन धर्म सूं सर्व अनेरा।
द्रव्य लिंगी केई साध कहावत, त्यां पिण पकड्या त्यांराइज केड़ा ॥
ताहि कुं, दूर तजै ते संत, विधि सूं उपदेश दिया रूड़ेरा।
जिन आगम, जोय प्रमाण किया, जब पाखण्ड पंथ मैं पड़्या बिखेरा ॥
व्रत अव्रत दान दया, वतावत, सावद्य निर्वद्य करत निवेरा।
श्री जिन आगन्या मांहै धर्म बतावत, ए तौ है पंथ प्रभु तेरा ही तेरा २ ॥६२॥

ढाल तेहिज

हांजी, ढाल तीजी ए सीधीरा हो २, जय जश कीधीरा ॥ ज० ६३ ॥

दुहा

भिक्षु भारीमालजी, आदि संत सुविचार।
नवो चरण लेवा भणी, ततक्षिण होय गया त्यार ॥ १ ॥
समत् अठार सतरोत्तरै, पंचांग लेषै पिछाण।
आषाढ सुदि पूनम दिने, वारु चरण कल्याण ॥ २ ॥
अरिहंत नी लेई आगन्या, शहर कैलवा माहि।
संजम धार्यौ स्वामजी, सिद्ध शाषे सुषदाय ॥ ३ ॥

ढाल : ४

[सुण चिरली थारली—ए देशी]

थिरपालजी फतैचन्दो, दोनूं बाप बेटा सुषकंदो।
जैमलजी रा टोला रा जाणी, भिक्षु साथ चरण गुणषाणी।
सुण सुखकारी, भिक्षु प्रतिबोध्या बहु नरनारी।
सुण सुखकारी, भिक्षु थया ओजागर भारी ॥ १ ॥
आचार्य भिक्षु ऋषिरायो, वले टोकरजी सुखदायो।
हरनाथजी ज्ञान गंभीरा, हद भारीमाल गुण हीरा ॥ २ ॥
संत तेरां मैं ताह्यो, रह्या दृढ चित छहुं मुनिरायो।
शेष सात नींसरीया, ते पिण वादल जिम बीषरीया ॥ ३ ॥
भिक्खु दान दया दिपावै, बहु नरनारी समजावै।
व्रत अव्रत लेषौ वतावै, हलुकर्मी सुण हरषावै ॥ ४ ॥
मुरधर देश मझारो, स्वामी आछौ करे उपगारो।
आया देश मेवाड़ो, बहु प्रतिबोध्या नरनारो ॥ ५ ॥
श्रद्धा नैं आचारो, व्रत अव्रत ऊपर विचारो।
वली अणुकंपा नी सुरंगी, स्वामी जोड करी अति चंगी ॥ ६ ॥

धुर गुणठाणा नीं करणी, निर्वंघ आज्ञा मैं उचरणी।
जिन आज्ञा ऊपर जाणी, स्वामी जोडां करी सुषदाणी ॥ ७ ॥
च्यार निक्षेपा नीं जाची, पोत्याबंध उपर आछी।
कालवादी ऊपर सीधी, सुत्र साष देइ जोडां कीधी ॥ ८ ॥
पर्यायवादी पिछाणो, वले इन्द्रियवादी जाणो।
वले एकल नैं ओलषायो, बहु जोडां करी मुनिरायो ॥ ९ ॥
वले टीकम डोसी कहिवाइ, तिणरी श्रद्धा नैं ओलपाई।
नवतत्व नीं जोड सुरंगी, चारु सुत्र साष दे चंगी ॥ १० ॥
वले विनीत नै अविनीतो, तिण ऊपर जोडां पवित्तो।
टालोकर नै ओलपायो, वृत्र राम माहै बहु न्यायो ॥ ११ ॥
वले जोड्या सखर बपाणो, वारु वैराग रस गुणपाणो।
आसरै अडतीस हजारो, स्वामी ग्रंथ जोड्या सुपकारो ॥ १२ ॥
सूत्रां नी हूंडी सीधी, वले पोत्याबंध उपर कीधी।
अवर ही बोल अनेको, वले मेल्या न्याय विशेषो ॥ १३ ॥
उत्पतिया बुद्धि सुं उदारी, स्वामी दृष्टांत दीधा भारी।
हलुकर्मी सुण हरषावैं, चित चिमत्कार अति पावे ॥ १४ ॥
वले संत सती बहु कीधा, घणा श्रावक श्राविका सीधा।
विचर्‍या मुरधर नै मेवाडो, वले हाडोती देश ढूंढाडौ ॥ १५ ॥
चूरु तांइ थली मैं आया, प्रयोजने ऋषिराया।
वहु विचर्‍या मरुधर मेवाड़ौ, दोय चोमासा देश ढूंढाड़ो ॥ १६ ॥
ओजागर भिक्षु आपो, स्थिर च्यार तीर्थ मैं स्थापो।
पूर्वधारी जेहवा, ए तौ स्वाम भीखणजी एहवा ॥ १७ ॥
दशविध जती धर्म धारी, ज्यांरी करणी री बलिहारी।
परभव चिंता पूरी, ज्यांरी कीर्त्ति जग में रूड़ी ॥ १८ ॥
क्षमावंत गुणपांनो, स्वामी अधिक अवसर ना जानौ।
सिंह तणी पर सूरा, झट मेलै न्यायज रूड़ा ॥ १९ ॥
वले वैराग रस माहै भीना, संवेग करी लह लीना।
नाम सुणी पाषंडी धड़कै, जन हलुकर्मी सुण हरषै ॥ २० ॥
शील सिरोमणी साचा, जशधारी भिक्षु जाचा।
दयावंत इन्द्रयां दमता, सत दत्त निःकंचन रमता ॥ २१ ॥
एहवा भिक्षु ऋषिरायो, त्यांरा गुण पूरा कह्या न जायो।
संक्षेप मात्र बताया, गुण अनघ अथग अधिकाया ॥ २२ ॥

वलि बांधी बहु मर्यादौ, आतौ आणी अति अहलादौ।
धुर बतीसै धारी, अंत गुणसठै लिषत उदारी।
जन सुषकारी, भिक्षु बांधी मर्यादा भारी॥ २३॥
गणपति नामैं दिष्या, करणा शिष्य शिष्यणी वर शिष्या।
दिष्या देनै सूंपणा आणौ, लिषत गुणसठै भिक्षु नीं वाणौ॥ २४॥
शेखै काल चौमासौ, रहिवै गणपति आण हुलासौ।
किण ही खेत्र रै माहि, गणि आणा विण रहिवौ नाहिं॥ २५॥
आचार्य नीं इच्छा आवै, गुरुभाई चेला नै सुभावै।
सूंपै टोला रौ भारौ, तिणरी आण में रहिवौ तिवारौ॥ २६॥
सहु संत सत्यां नैं ताह्यौ, रहिणौ एकण री आज्ञा माह्यौ।
एह रीत परंपरा बांधी, मार्ग चालै जठा तांई सांधी॥ २७॥
कर्म जोग इक बे त्रिण आदौ, गण सुं नीकल करै विवादौ।
तिणनै सुध सरधवौ नाहि, न गिणवौ च्यार तीर्थ रै माहि॥ २८॥
च्यार तीर्थ रौ तेही, निंदक जाणवौ जेही।
वांदै पूजै एहवा नैं कोई, ते पिण जिण आज्ञा बारै होई॥ २९॥
नीकल नवी दिष्या लै कोई, तिणनैं साधु न सरधणो सोई।
तिणरी बात न मांनणी लिगारौ, आरै कीधौ दीसै अनंत संसारौ॥ ३०॥
कर्म जोगे नींकलीया बारौ, तिणनैं टोला तणा तिणवारौ।
हुंता अणहुंता जांणौ, अवगुण बोलण रा पचखाणौ॥ ३१॥
विटल होई भांगै सूंस कोई, तसुं हलुकर्मी न मानैं सोई।
उण सरीषौ विटल मांनै वायौ, ते लेषा माहि न गिणायौ॥ ३२॥
इमही पचासै जाणौ, अवगुण बोला रा पचषाणौ।
नींकल नवी दिष्या लै कुमागो, तौ पिण अवगुण बोलण रा त्यागो॥ ३३॥
म्हें नवी दिष्या लीधी समभावौ, आंगला सूंसा रौ नहीं अटकावौ।
यूं पिण बोलण रा पचषाणौ, लिषत पचासै भिक्षु वाणौ॥ ३४॥
पत्र लिष्या जाच्या गण माही, तिके बाहिर ले जावणा नांहीं।
इक निशि उपरंत जाणौ, क्षेत्रां मैं रहिवारा पचषाणौ॥ ३५॥
लिषत पैंतालीसै अमोलौ, श्रद्धा आचार कल्पसुत्र बोलौ।
गुरु तथा बुद्धिवंत संतो, कहै जिम करणौ धर षंतो॥ ३६॥
पचासै गुणसठै जाणौ, वले सैंतीसै रास मैं वाणौ।
दोष देखे तौ तुरत कहिणौ, घणा दिवस दाबे नहीं रहिणौ॥ ३७॥
आचार्य री आज्ञा विण ताह्यौ, एक निशि उपरंत गांम माह्यौ।
मुनि अज्जा नैं भेलौ न रैहणौ, पचासा लिषत माहि ए वैणौ॥ ३८॥

आहार पाणी वहिरीनें ल्यायी, संभोगी नें वांटी दैणी ताह्यी।
आप आण्यौ जाणी अधिक लेवै, अदत्त लागै प्रतीत न रैवै ॥ ३६ ॥
दैगी दिव्या महाजन नें ताह्यौ, स्वामी छेहड़ै वचन फुरमायौ।
पिण पाना में लिपीयो नाही, मुवनीन धर्यौ दिल मांही ॥ ४० ॥
इत्यादिक मर्यादौ, स्वामी बांधी घर अह्लादौ।
वहु वर्षां लग तामौ, स्वामी सामण चलावण कांमौ ॥ ४१ ॥
चोथी ढाल मझारौ, भिक्षु वर्णक अधिक उदारौ।
सुष पायौ तास पसायौ, गणि जयजश हरष सवायौ ॥ ४२ ॥

दुहा

सतरा सुं साठा लगै, अधिक कीयो उपगार।
जीव घणा समजावीया, सषरा तीर्थ च्यार ॥ १ ॥
भिक्षु रा मुष आगलै, भारीमाल मुष स्हाज।
अष्टादश बतीस में, थाप्यौ पद युवराज ॥ २ ॥
चित अनुकुल मुनि चालता, प्रकृति भद्र पुन्यवान।
गर्व रहित गिरवा गुणी, विनयवान जशवान ॥ ३ ॥
घन गर्जारव सा वचन, वारु तास वषाण।
वीर तणा मुष आगलै, गोतम जिम अगवाण ॥ ४ ॥
ग्रंथ हजारां तासु मुष, अधिक चातुरी आप।
अतिसैधारी ओपता, स्थिर पद त्यांरी स्थाप ॥ ५ ॥
परम प्रीत भिक्षु थकी, अंत सीम अवधार।
सेवा करी साचै मनै, भारीमाल धर प्यार ॥ ६ ॥
अड़तीसै दिव्या ग्रही, षेतसीजी धर क्षंत।
भक्तिवंत भारी घणा, क्षमावंत जशवंत ॥ ७ ॥
चरचावादी विमल चित्त, उपगारी अधिकाय।
चरण चमालीसै चतुर, वैणीराम मुनिराय ॥ ८ ॥
धर संवेग तणुं सही, ज्ञान ध्यान सुं प्रेम।
उत्पत्तिया अति चरण चित, वृद्धि तैपनै हेम ॥ ९ ॥
सतावनें संजम लीयौ, भिक्षु बुद्धि अमंद।
पट लायक परख्यौ प्रगट, हस्तमुषी नृपचंद ॥ १० ॥
अधिक गुणी ए आदि दे, अड़तालीस अणगार।
अज्जा छपन आसरै, स्वाम छतां व्रतसार ॥ ११ ॥

अष्टवीस मुनि आसरै, समणी गुणचालीस।
गण माहै गाढा रह्या, शेष नीकल्या दीस ॥ १२ ॥
बीस रह्या गण बारणै, रूपचंद त्यां माय।
स्वाम शाष संजम ग्रही, अणसण दीधौ ठाय ॥ १३ ॥
पांचूं इन्दस्या परवरी, थाणै थपीया नाहि।
चरम चौमासै आवीया, शहर सरियारी माहि ॥ १४ ॥

ढाल : ५

(धन-धन भिक्षु स्वाम दीपाई दान दया—ए देशी)

श्रावण मास मझार, दस्तकारण तनु मैं।
दिशां जावै पुर बार, गिणत नहीं बहु मन मैं।
बहु मन मैं जी फुन बहुजन मैं, पुर माहि गौचरी प्रगट पणैं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, भाव आराम घनैं ॥ १ ॥
श्रावण पूनम स्वाम, गोचरी आप गया।
भाद्रव मैं अभिराम, अधिक चित शांति भया।
चितसांतिभयाजीवर ध्यान लह्या, ऋषि लीन परम भावेज रह्या।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, मरण पंडित उमह्या ॥ २ ॥
त्रिहुं टक हुवै वखाण, पजूषण मांहि भला।
चउथ चांदणी जाण, वयण भाषै विमला।
भाषै विमला जी अती ही अमला, वच संत षेतसी नैं निमला।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, यमल गुण उभय मिला ॥ ३ ॥
थे सषरा शिष्य सुविनीत, चरण नौं स्हाज दीयौ।
टोकरजी वर रीत, भक्ति करि सुजश लीयौ।
सुजश लीयौ जी तनु मन ठरीयौ, भारीमाल परम भक्ता वरीयौ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, ज्ञान गुण नौं दरीयौ ॥ ४ ॥
यां तीना रा स्हाज, थकी समभाव पणैं।
पाल्यौ संजम पाज, हरष आनंद घणैं।
आनंद घणैं जी त्रिहुं संत तणैं, अतहि इकधार रह्या सुमणै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, सुजश तसु जगत थुणैं ॥ ५ ॥
सुणतां तीर्थ तीन, शीष आपै सखरी।
रहिजौ थे लहलीन, गणि सिर आण धरी।
आण धरी मुझनीं जबरी, भारीमाल तणी तिन धार षरी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, अमल वाणी उच्चरी ॥ ६ ॥

भारीमाल नी आण, अखंडत जेह धरै।
ते सुविनीत पिछाण, मंन सुगणाज सिरै।
सुगणांज सिरै कुण होड करै, तसु सेवक रौ तन मन सखरै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, अमल सिप्या उचरै॥ ७॥
एहनीं लोपै आंण, दूर करिवूंज बही।
ते अपछंदा जाण, तीर्थ मैं तेह नहीं।
तेह नहीं जी जिन समय कही, निंदण जोगा ते छै अति ही।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, सीप आपै सुरही॥ ८॥
आणंद अभिग्रह कीध, वीर आणा वारै।
वंदन नेमज लीध, प्रथम बोलण वारै।
बोलण वारै जी इम मन धरै, चिहुं आहार दान तसु परिहारै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, जितन्द्र ज्यूं इण आरै॥ ९॥
अज्जा संत विशेष, रापजो हेत अती।
दिष्या दीजो देष देष, परभव अरथी।
परभव अरथी सम्यक् धुर थी, पिण जिण तिणनैं मूडौज मती।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, तास सिर अधिक रती॥ १०॥
आलोयण अधिकाय, करी अति स्वाम भली।
लख चौरासी खमाय, करै आत्म निसली।
आत्म निसली जी खामैज बली, गणथी टलनैंज थया विकली।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, तास चित कुसमकली॥ ११॥
वडा शीस अवलोय, परम भक्ता वारु।
लैहर आई हुवै कोय, खमावैं चित चारु।
चित चारुजी निज हित कारु, मुनि अजा अन्य वलि गुण धारु।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, निजात्मज निस्तारु॥ १२॥
जे श्रावक श्राविका तेह, खमावै तास भणी।
वलि जती ढूंढीया जेह, जूजूआ नाम गिणी।
नाम गिणीजी चरचाज घणी, तसु लैहर आई हुवै द्वेष तणी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, निसल आत्म अपणी॥ १३॥
अतीचार आलोय, सुमति अरू गुप्ति मझै।
दोष लागौ हुवै कोय, पंच महाव्रत। रै जै।
व्रत रै जै जी अघ थी जल जै, इम निसल्य थई गुणी थी जग जै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, सखर सिव पंथ सझै॥ १४॥

आयु निकट पिछाण, निसल आतम कीधी।
हिवै संलेषण आण, सुणौ भवियण सीधी।
भवियण सीधी जी तंप असि लीधी, उपवाश पंचमी तप वृद्धी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, सुमति नी समृद्धी ॥ १५ ॥
छठ पारणैधार, अल्प औषधि आहारं।
वमन हुवौ तिणवार, साम भिक्षु सारं।
भिक्षु सारं जी तिण दिन धारं, पचखांण करै त्रिण विध आहारं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, हीयै अति हुसीयारं ॥ १६ ॥
सातम आठम जाण, अल्प अन्न आचरीयौ।
तुरत कीया पचखांण, कहै सतजुगि दरियौ।
सतजुग दरियौजी गुण रस भरीयौ, इम तुरत त्याग किम उच्चरीयौ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, जगत जश विस्तरीयौ ॥ १७ ॥
नवमी त्याग करंत, षेतसी षांच कही।
अल्प आहार मुज हस्त, तणौ लीजैज सही।
लीजैज सही जी इम कहै ऊमही, तसु वचन मान अन्न अल्प लही।
सुविनीत तणौमन राषण ही,
धिन धिन भिक्षु स्वाम, कीर्ति जग छाय रही ॥ १८ ॥
दशमीं त्याग करंत, अरज वड़ शिष्य न्हाली।
दस मोठ आसरै हस्त, लीयै चावल चाली।
चावल चाली जी अघ नैं टाली, उपरंत त्याग कीया भाली।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, लगी सिवसैं ताली ॥ १९ ॥
ग्यारस अमल आगार, कीयौ इम उपवासं।
हिव मुज आहार मजाण, व्यण इम प्रकासं।
प्रकासं जन विश्वासं, अणसण थी अति चित हुलासं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, अमल सिवपद आसं ॥ २० ॥
बारस बैलौ कीध, स्वामीजी समभावै।
हाट स्हांमली थकी, पकी हाटे आवै।
हाटे आवै जी तनु नैं तावै, वर पका मुनि जन गुण गावै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, पकौ अणसण ठावै ॥ २१ ॥
तांम लीयौ विश्रांम, अरज ऋषिराय करै।
पुद्गल पडीया हीण, स्वाम सुण हरष धरै।
हरष धरै जी इम वच उचरै, बौलावौ शिष्य भारीमाल सिरै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, तास कुण होड करै ॥ २२ ॥

चटदे उभा आण, सुणी भारीमालं।
वले षेतसी आदि, मुनि आया चालं।
आया चालं ऋष गुण मालं, वच वदै स्वाम अति सुविसालं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, पीत सिव पट सालं॥ २३ ॥
करिवौ मुझ संथार, एम पभणै स्वामी।
नमोथुणं गुण तामं, सिद्ध अरिहंत नामी।
अरिहंत नामी सिवपद कामी, ऊंचै स्वर वच स्थिर चित धामी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, परम संपति पामी॥ २४ ॥
जाव जीव लग मोय, त्याग त्रिहुं आहार तणा।
श्रावक श्राविका संत, सुणैं जन वृन्द घणा।
जन वृन्द घणाजी गुण करत जना, अणसण धार्‍यौ भिक्षु सुगुणा।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, काज सारै अपणा॥ २५ ॥

यतनी

शिष्य भारीमाल कहै सार, क्यूं नी राख्यौ अमल आगार।
स्वामी कहै धार्‍यौ संथार, किसी करणी देही नी सार॥ २६ ॥

ढाल तेहिज

तैरस नैं जनवृन्द, दर्श करिवा आवै।
सूंस आषडी करै, स्वाम ना गुण गावै।
गुण गावै जी अति हुलसावै, बाजार माहिज जन नहीं मावै।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, विमल भावन भावै २७ ॥
सवा पोहर उनमान, दिवस चढीयां जाणी।
निज कर सेती आप, स्वाम पीधौ पाणी।
पीधौ पाणी अति गुण षाणी, आसरै मुहुर्त्त पाछैं जाणी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, वदै इह विधि वाणी॥ २८ ॥
आवै संत सुजाण, मुनि स्हांमा जायो।
वलि आवै छै अज्जा, वदै इह विधि वायौ।
इह विधि वायौ जन सुण ताह्यौ, सुणतां वलि वर बहु मुनिरायौ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, चरम वच फुरमायौ॥ २९ ॥
जन कहै स्वामी तणा, जोग मुनि में वसीया।
एक मुहुर्त्त आसरै, साधु आया तिसीया।
आया तिसिया जी बे गुण रसीया, वंदणा करनै मन हुलसीया।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, दुरित दोहग न्हसीया॥ ३० ॥

वैणीरामजी संत, वडा जग विष्यातं ।
वले कुसालजी साथ, वंदै सिर करि नाथं ।
करि नाथं जी अति रलियातं, तसु स्वाम दीयौ मस्तक हाथं ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, अमल जश अखियातं ॥ ३१ ॥

दोय आंगुली थकी, सैन करिनैं जाणी ।
सुखसाता पूछंत, कची चखु पहिछाणी ।
पहिछाणी जी उच्चरंग आणी, सावचेत इसा मुनि गुण खाणी ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, महाकीर्त्ति माणी ॥ ३२ ॥

साधु आया तेह, अधिक ही गुणगातं ।
दोय मुहुर्त्त आसरै, आयौ समणी साथं ।
समणी साथं वंदै नाथं, जन कहै अवधि उपनौं ख्यातं ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, कही अचरज वातं ॥ ३३ ॥

अटकल सूं आख्यात, तथा बुद्धि थी दाषी ।
तथा अवधि उपनौं, तिकौ सर्वज्ञ साखी ।
सर्वज्ञ साखी जी आगूंच आषी, प्रगट पिण छानें नहीं राषी ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, वात अचरज भाषी ॥ ३४ ॥

स्वामी सूता भणी, हुई छै बहु वारं ।
पूछयौ बैठा करां, भख्यौ तब हूंकारं ।
हूंकारं ऋषि तिण वारं, बैठा कर मुनि बेठा लारं ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, शासण रा सिणगारं ॥ ३५ ॥

करै संत गुणग्राम, आप महा उपगारी ।
वडा वडा पाषंड, हटाया बहु वारी ।
बहु वारी जी वलि जन तारी, फुन दान दया दिल मैं धारी ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, आप मग्ग ने तारी ।
परम कीर्ति प्यारी ।
आप जग जशधारी,
धिन धिन भिक्षु स्वाम, वदै इम अणगारी ॥ ३६ ॥

दरजी मांढ़ी सींव, सूइ पागे घाली ।
जन कहै स्वाम तिवार, गया चटदे चाली ।
चटदे चाली जी प्रत्यक्ष भाली, वतका ए अति अचर्यवाली ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, पूरण कीर्ति पाली ॥ ३७ ।

मांढी तेरै षंड, तणी कीधी त्यारी ।
महोत्सव कीधा अधिक, कार्य लौकिक धारी ।
लौकिक धारीजी आज्ञा बारी, आसरै पंच सय कहै लारी ।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, सप्त पौहर संथारी ॥ ३८ ॥

समत अठैरैं साठैं, भाद्रव सारी।
परभव पोहता पूज्य, तेरस मंगलवारी।
मंगलवारी जी कांई सिरीयारी, भारीमाल पाठ बैठा भारी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, जाऊं सब बलिहारी ॥ ३९ ॥
घर मैं वर्ष पचीस, आंसरै अठ वासं।
भेषधारयां मैं रह्या, पछै सुध व्रत फासं।
सुध व्रत फासं मुनि गुण रासं, वर्ष तयांलीस जाको जासं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, प्रगट जन विश्वासं ॥ ४० ॥
आसरै सितंतर वर्ष, आयु पाल्यौ स्वामी।
परभव कीयौ पयाण, धर्म मूर्त्ति धामी।
मूर्ति धामी जी अति हित कामी, पदवार परम संपति पामी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, निमल जग मैं नामी ॥ ४१ ॥
भिक्षु तणैं प्रशाद, जीव बहुला तरीया।
सांप्रति काले तिरैं, स्वाम वच सिर धरीया।
सिर धरिया जी जन उद्धरीया, तिरस्यैं अनागति गुण दरीया।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, तास उत्तम किरीया ॥ ४२ ॥
भिक्षु भवदद्धि पाज, भाव नावा तरणी।
ज्ञान क्रिया किरि युक्त, केहा कहियैं करणी।
कहीयैं करणीजी वर उच्चरणी, संक्षेप मात्र विध मैं वरणी।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, मुर्त्ति तसु मनहरणी ॥ ४३ ॥
उगणीसै तेवीस, माघ सुदि तिथ तिजं।
गुरुवारे ए जोड, करी भिक्षु बीजं।
भिक्षु बीजं तसु जप कीजं, भारीमाल रायऋष रमणीजं।
धिन धिन भिक्षु स्वाम, लहै जय जश रीझं ॥ ४४ ॥